प्रधान मंत्री
सचिवालय,
नई दिल्ली,
सम्माननीया
प्रधान मन्त्री
जी को यह
जान कर
खुशी हुई कि
आपने माता
वैष्णवी
देवीपर एक
पुस्तक लिखी
है।
भवदीय
(सुरेन्द्र नारा
-यण दफ्तु
आर)
हिन्दी अधि-
कारी

वैष्णवी सिद्ध पीठ

जगदीशचन्द्र शास्त्री

शास्त्री प्रकाशन,
२८, कूचा सोभा राम पंजतीर्थी, जम्मू ।

Vaishnavi Siddha Peetha
A Research Book
Jagdish Chandra Shastri

प्रकाशक : शास्त्री प्रकाशन, ३८, कूचा सोभा राम,
पंजतीर्थी, जम्मू ।

प्रकाशन तिथि : विजयादशमी, २०३३

मूल्य : सजिल्द ८ रुपये
साधारण ५ रुपये
विदेश ३ पौण्ड, ५ डालर

मुद्रक : रमेश आर्ट प्रैस, अप्पर बाज़ार, जम्मू

समर्पण

राष्ट्र की उस
शक्ति के नाम
जो समय के
अनुकूल अपनी
सत्ता और महत्ता
प्रकट करती है।

अनुक्रमणिका

०००

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक त्रिकूट पर्वत कटड़ा में विराजमान भगवती-वैष्णवी शक्ति की महिमा एवं प्रतिष्ठा के विवरण से संबन्धित है। डुग्गर प्रदेश में ऐसे अनेक धार्मिक स्थान हैं, जो प्राचीनता तथा महत्व की दृष्टि से अपना विशेष स्थान रखते हैं। इस प्रदेश की सांस्कृतिक परम्परा एवं इतिहास का वास्तविक स्वरूप भी इनके साथ जुड़ा हुआ है। किन्तु अभी तक इसकी पूरी खोज हो नहीं पाई। यदि इन स्थानों का गम्भीर अध्ययन पूर्वक अनुसन्धान किया जाए तो वैदिक काल से चलकर पौराणिक युग तक की पर्याप्त सामग्री ही उपलब्ध नहीं होगी, बल्कि हमारी धार्मिक एवं सांस्कृतिक परम्परा के सूत्र में नए रत्न भी अनुस्यूत होंगे।

श्री जगदीश चन्द्र शास्त्री ने इस रचना द्वारा अनुसन्धानात्मक विवरण देने का एक नया मार्ग उद्घाटित किया है। जिसके अन्तर्गत भविष्य में धार्मिक स्थानों से सम्बन्धित लोक वार्ताओं को प्रस्तुत करने में बौद्धिक विश्लेषण का मोड़ भी मिलेगा।

यद्यपि लेखक ने विविध विवरण में लोक कथाओं का आश्रय भी लिया है, तथापि इनके मूल में ऐतिहासिक तत्वों के अंश भी छिपे हुए हैं। घटना घटित होने के बृत्तान्त पहले लोक वार्ताओं के रूप में ही प्रचलित होते हैं। यद्यपि काल क्रम द्वारा उनमें हेर फेर एवं अतिरिक्त सन्निवेश भी होते रहते हैं। तथापि उनकी मौलिकता मूल में बनी ही रहती है। इन धार्मिक स्थानों अथवा

तीर्थों के सम्बन्ध में डुग्गर जनता की रसना (जह्वा) पर शताब्दियों से जो लोक वार्ताएं तथा जन श्रुतियां नाच रही हैं उनका उद्गम अपनी अपनी घटना विशेष के घटित होने के समय ही हुआ होगा। अतः आज किसी विषय की गवेषणा के संदर्भ में यदि इन परम्परागत जन श्रुतियों का उपयोग कर लिया जाए तो अनुचित न होगा।

इतिहास के अभाव में ये जन श्रुतियां बहुत काम दे सकती हैं। क्यों कि इनका आधार लेकर गवेषणा के मार्ग में किसी वस्तु सत्य तक पहुँचा जा सकता है। बशर्ते कि धार्मिक ऐतिहासिक तथा वेद पुराण आदि ग्रन्थों के गंभीर अध्ययन सम्बन्धी पृष्ट भूमि साथ हो।

शास्त्री जी ने इस ग्रन्थ में जन श्रुतियों के आधार पर जो कुछ लिखा है उसमें उनका प्राचीन संस्कृत वाङ्मय का गंभीर अध्ययन भी साथ जुड़ा हुआ है। इसी लिए उन्होंने प्रत्येक कत्थ्य को वैदिक और पौराणिक प्रमाणों द्वारा पुष्ट किया है। इन जन श्रुतियों को भी पर्याप्त समर्थन मिला है और ये पुस्तकीय विश्लेशण का अंग बन गई हैं। पुस्तक की भूमिका के कुछ आगे शास्त्री जी ने जम्मू के प्रसिद्ध तीर्थस्थल पुरमण्डल एवं उत्तर वःहिनी का जो बृत्तान्त लिखा है वह जन श्रुतियों तथा पौराणिक प्रमाणों पर आधारित होकर एक नई खोज का रूप ले चला है। इन दो तीर्थस्थानों के सम्बन्ध में आज से ६०-७० वर्ष पूर्व प्राचीन ग्राम-बृद्धों से जो विचित्र किंवदन्तियां सुनी जाती थीं, समय के नए दौर में आकर उनके प्रवक्ता एवं श्रोता दोनों का ह्रास होता गया। आज स्थिति यह है कि उन ग्राम वृद्धों में से शायद ही कोई शेष बचा हो। इसी कारण अब ये किंवदन्तियां भी लुप्त प्राय हो रहीं थीं। शास्त्री जी ने अपनी पुस्तक में स्थान देकर उन्हें न केवल अक्षुण्ण ही बनाया है अपितु डुग्गर प्रदेश की इस निधि को नई पीढ़ी के लिए सुरक्षित भी रखा है। इस प्रसंग के पढ़ने में विशेष आनन्द की अनुभूति होती है। लेखक की विनोदिनी लेखनी ने विषय को समझाने में एक अद्भुत् सरस शैली का उपयोग किया है। इसके अतिरिक्त महा पुरुषों द्वारा इन दो तीर्थ स्थानों पर की

गई यात्राओं का वृतान्त भी निबद्ध किया गया है।

इस प्रसंग के आगे वैष्णो देवी की यात्रा का वृत्तान्त प्रारम्भ करते हुए लेखक ने पुरमण्डल का मार्ग पकड़ कर उक्त (माता के दरबार तक) स्थान तक पहुंचने का यात्रा प्रकार भौगोलिक शैली से आविष्कृत किया है। यह प्राचीन मार्ग था।

अतीत में जो महा पुरुष श्री गुरु गोविन्द सिंह जी तथा अन्य सन्त महात्मा इन तीर्थों पर आए थे, यहीं से वह वैष्णो देवी के दरबार तक पहुंचे थे। लेखक ने इस वृत्तान्त को रोचक दिशा पकड़ कर प्रस्तुत किया है। उक्त वैष्णो भगवती के स्थान तक पहुंचने के नये मार्ग का विवरण देते हुए लेखक ने यात्रियों का मार्ग-दर्शन इस ढंग से किया है कि वह भारत के किसी भी कोणे से चलें तो अनायास ही वैष्णवी पीठ तक पहुंच सकते हैं। एक पूर्ण परिचित की भान्ति लेखक ने इस निर्देशन में भी डुग्गर प्रदेश की प्राचीन लोक वार्तात्मक ऐतिहासिक सामग्री का उपयोग किया है। जो इस वृत्तान्त को अधिक आकर्षक बना देता है। दर्शनार्थियों को जम्मू तक पहुंचाकर यहां के दर्शनीय स्थानों का थोड़ा विवरण दे देना भी लेखक की सूझबूझ का प्रमाण है।

यह बात सर्व विदित है कि वैष्णोदेवी की यह गुफा त्रिकूट पर्वत पर विराजमान है, त्रिकूट का स्मरण अथर्ववेद तथा कई अन्य संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों में आता है। तथापि कई विद्वानों के मत में त्रिकूट पर्वत हिमालय की इस चोटी के अतिरिक्त कोई अन्य भारतीय पर्वत है। श्री शास्त्री जी ने शिवपुराण, वामन पुराण डा० वासुदेव शरण अग्रवाल तथा लन्दन के प्रो० डा० कीथ के उल्लेखों का उद्धरण देकर प्रस्तुत हिमालय की चोटी को ही त्रिकूट सिद्ध किया है। जो अत्यधिक युक्ति युक्त तथा तर्क संगत लगता है। इन्द्र बृत्रासुर संग्राम की घटना भी यहीं घटित हुई थी। उसके परिचायक यहां के स्थानीय नामों का विवरण देते हुए लेखक ने 'विढ़ढ़ा' (त्रिकूट पर्वत के पास कोई स्थान) तथा अन्य प्रमाण देकर इस तथ्य की पुष्टि की है। इसके संदर्भ में अन्य पौराणिक

कथाओं के संकेत भी दिए गए हैं। जिनके द्वारा भगवती वैष्णवी शक्ति का आदि निवास इस पर्वत को सिद्ध करने की बात भली भान्ति पुष्ट हो जाती है।

त्रिकूट पर्वत की गुफा में भगवती की प्रतिष्ठा कब हुई। इसका इतिहास लेखक ने पौराणिक कथाओं का उद्धरण देकर प्रस्तुत किया है। इसी के आधार पर इस स्थान को आदि सिद्ध पीठ सिद्ध किया गया हैं। कथा का प्रारम्भ महर्षि वशिष्ठ को महाशक्ति से वार्तालाप शुरू करते हुए महामाया के गत जन्मों का व्योरा प्रस्तुत किया गया है। एक जन्म में सन्ध्या देवी ने यहां पर विष्णु की तपस्या करने से वैष्णवी नाम धराया। फिर दक्ष की कन्या बनकर दक्ष यज्ञ में आत्मवलि दान दिया। मृत शरीर का सिर इसी त्रिकूट पर्वत की गुफा में स्थापित किया गया। तभी से भगवती वैष्णवी की प्रतिष्ठा यहां हुई। यह वृत्तान्त हजारों वर्ष पहले का है।

'पौनी' नामक ग्राम में शिव ने तपस्या की। इस कथा को भी प्रामाणों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। वैष्णवी गुफा के नीचे 'कटड़ा' नगर है। पुराण सम्बन्धि भौगोलिक संकेतों का उद्धरण देकर कटक को असली कटड़ा सिद्ध किया गया है। जिसका वर्णन महाभारत में आया है। उपर्युक्त वर्णन शैली द्वारा माता वैष्णवी की इस गुफा के सम्बन्ध में काफी प्राचीन सामग्री का उपयोग करते हुए लेखक ने इस स्थली को वैष्णवी शक्ति की विविध लीलाओं का केन्द्र माना है। इसका नाम दुर्गा क्यों पड़ा, इस पर भी लेखक ने अच्छा प्रमाणिक प्रकाश डाला है। आगे चलकर भैरव देवता के विषय में श्रुति परम्परा द्वारा जो कल्पित कथा प्रचलित है उसका खण्डन करते हुए लेखक ने भैरों को पीठ रक्षक सिद्ध किया है। देवी पुराण का उदाहरण देकर त्रिकूट पर्वत को देवी का मुख्य सिद्ध पीठ मान कर भैरों को पीठ रक्षक माना है। जिससे प्रचलित कथा का खण्डन स्वयं हो जाता है। प्रचलित कथा में भैरों को देवी के साथ विवाह करने का इच्छुक बताया गया है। इस विवाद पर दोनों का युद्ध एवं देवी के त्रिशूल द्वारा भैरों

की हत्या का वृत्तान्त है। जो केवल श्रुति परम्परा मात्र है।

वैष्णवी के शेर (सिंह) का क्या रहस्य है। इस पर भी शास्त्रीय पद्धति से प्रकाश डाला गया है। माता वैष्णवी के अनेक अवतारों का पौराणिक वृत्तान्त देकर उसी प्रसंग में चन्द्र भागा (चिनाव) नदी का उद्गम दिखाया गया है। जो शिव पुराण तथा कालिका उप पुराण के आधार पर है। इसी बीच का अवतार सम्बन्धी वृत्तान्त दूर तक चला गया है। संक्षेप में लेखक ने इस पुस्तक में भगवती दुर्गा या वैष्णवी के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा वह पौराणिक इतिहाससे सम्बन्धित तथा लोक वार्ताओं से परिपूर्ण होकर लेखक के अपने चिन्तन से भी ओत-प्रोत है। इस लिए यह पुस्तक जहां देवी के भक्त श्रद्धालुओं को मनःसंतुष्टि दे सकती है, वहां बुद्धि जीवियों के मस्तिष्क को भी नया खाद देने में सक्षम है।

प्रसंग समाप्त करने से पूर्व यह कह देना भी आवश्यक है कि अति प्राचीन परम्परा से देवी देवताओं के आगे बलि चढ़ाने की कुप्रथा हमारे देश में प्रचलित है। जो केवल अन्ध विश्वास पर आधारित हो कर हिन्दू धर्म के लिए एक दूषण है। शास्त्री जी ने इस प्रसंग में बड़े रोचक ढंग से इस कुप्रथा का खण्डन करते हुए भगवती के आगे हलुवा, क्षीर तथा नारियल आदि की भेंट चढ़ाने तथा शास्त्र सम्मत पूजा पद्धति का प्रदर्शन किया है। इस खण्डन का लक्ष्य देवी देवता मात्र पर बलि चढ़ाने की कुप्रथा का निराकरण है। पुस्तक का आद्योपान्त पर्यालोचन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसमें माता त्रिकूट वासिनी वैष्णवी शक्ति के सम्बन्ध में युक्ति युक्त शास्त्र सम्मत विचार रखे गए हैं जिनमें माता के श्रद्धालुओं तथा ज्ञानार्थियों और वैज्ञानिक, धार्मिक एवं बौद्धिक व्यक्तियों के लिये चिन्तन उपलब्ध हो सकता है।

डा० गंगादत्त शास्त्री विनोद
एम० ए० पी० एच० डी०
वेदाचार्य, काव्यतीर्थ
श्री रणवीर संस्कृत विद्यापीठ
जम्मू—(कश्मीर स्टेट)

दो शब्द

युग का प्रभाव है कि मूल्यों का रूप ही बदल रहा है। पवित्र धर्म भावना ने भी यात्रा का रूप टूरिस्ट इंडस्ट्री के उद्योग के रूप में बदल लिया है। धर्म भावना यदि शासन की अर्थ भावना को पुष्ट नहीं करती तो वह राष्ट्र के हित की बात नहीं समझी जाती। यात्रा की धर्म भावना के साथ उद्योग प्रसार की भावना प्रजा और शासन दोनों को तुष्टि प्रदान करती है।

दर्शनीय और धार्मिक स्थानों की यात्रा से 'एक पन्थ दो काज' सिद्ध होते हैं। सरकार उन स्थानों, वहां के रास्तों, यातायात के साधनों और स्वास्थ्य, विधान तथा व्यवस्था का प्रबन्ध करती है और जनता अपने इष्ट देवता के दर्शनों के लाभ के साथ सरकारी इम्पोरियम तथा मण्डियों से सौगात के रूप में वस्त्र, खाद्य पदार्थ तथा व्यापार की अन्य वस्तुएं खरीद कर सरकार तथा स्थानीय व्यापार को प्रोत्साहन देती है।

सरकार तथा प्राइवेट प्रकाशक उन दर्शनीय तथा धार्मिक स्थानों के विषय में ऐतिहासिक दृष्टिकोण उपस्थित करने तथा धर्म भावना की तुष्टि के लिये परिचयात्मक साहित्य का निर्माण करते हैं। आर्ट-पेपर पर छपा सुन्दर साहित्य स्थानीय इतिहास और धर्म की भावना को पुष्ट करता है।

जम्मू का प्रसिद्ध वैष्णवी भगवती का सिद्ध पीठ बड़ा प्राचीन धर्म-स्थान है परन्तु इसका ऐतिहासिक और पौराणिक महत्व प्रदर्शन करने वाला कोई प्रामाणिक ग्रन्थ सरकार या प्राइवेट प्रकाशन की ओर से उपलब्ध नहीं। धर्मार्थ ट्रस्ट ने एक 'वैष्णवी पीठ' नाम की पुस्तिका स्वर्गीय पं० काकाराम शास्त्री जी द्वारा लिखवाकर प्रकाशित की थी। वह आजकल अप्राप्य है और ट्रस्ट ने उसका दूसरा

संस्करण अभी तक प्रकाशित नहीं कराया। श्री केदार नाथ प्रभाकर भारतीय ज्योतिष अनुसन्धान संस्थान सहारन पुर के कर्मठ संचालक जिन्हों ने स्वामी राम तीर्थ के जीवन तथा साहित्य सम्बन्धी अनुपम संग्रह एकत्रित किया हैं, ने वैष्णो देवी की यात्रा पर एक डिमाई आकार की पुस्तक प्रकाशित की है। गवर्नमेण्ट की Tourist Industry को बढ़ावा देने वाली इस सुन्दर पुस्तक को केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्री डा० कर्ण सिंह जी ने आशीर्वाद दिया है। इस पुस्तक के आधार पर एक चल चित्र भी तैयार हो गया जिससे वैष्णो देवी की यात्रा का यथार्थ प्रचार तथा प्रसार हुआ। एक और पुस्तक श्री सुरेन्द्र द्वारा सम्पादित पाकिट बुक संस्करण के रूप में सामने आई है। प्रसिद्ध पत्रकार श्री सूरज सराफ ने वैष्णो देवी नाम की आर्ट पेपर पर सुन्दर चित्रों सहित एक अंग्रेजी पुस्तक प्रकाशित की है। कुछ पैम्फलिट साम्बा के दुर्गादास गुप्ता तथा अन्य व्यक्तियों ने देवी भगवती की स्तुति में गाई जाने वाली भेटाओं तथा फिलमी गानों की तर्ज पर भजन बना कर भी प्रकाशित किये हैं। पं० काकाराम जी प्रकाण्ड विद्वान थे और 'ब्रह्मवधु' उपनाम से उन्हों ने संस्कृत में विविध रचनाएं की हैं। उनके 'वैष्णवी पीठ' में वैष्णो देवी भगवान राम की आराधिका के रूप में उपस्थित की गई है। उन्हों ने सीतोपनिषद का उल्लेख किया है जो कहीं विश्वसनीय रूप में देखने में नहीं आयी।

श्री केदार नाथ प्रभाकर जी की पुस्तक में और उसके आधार पर निर्मित चलचित्र में भी वैष्णवी देवी की भगवान् राम के लिये आराधना और तत्सम्बन्धी निर्मित रचना का कोई ठोस शास्त्राय उल्लेख या पौराणिक वर्णन उपलब्ध नहीं।

श्री जगदीशचन्द्र शास्त्री जी ने जम्मू में उपलब्ध साधनों के आधार पर जिनमें संस्कृत के प्रसिद्ध विश्वकोश वाचस्पत्यम्, मोनियर विलियम के संस्कृत कोश, आप्टे कोश स्व० वासुदेव शरण अग्रवाल के पाणिनि कालीन भारत, श्री बी० एन० पुरी के पतंजलि कालीन भारत तथा ब्रह्म पुराण, मार्कण्डेय पुराण, शिव पुराण, कालिका पुराण, देवी पुराण, महाभारत, हरिवंश पुराण, रघुवंश, कुमार-

सम्भव, शिशुपाल वध, निरुक्त, दुर्गार्चन-सृतिः, देवी माहात्म्य, दुर्गा सप्तशती आदि ग्रन्थ शामिल हैं वैष्णवी भगवती की कथा को पौराणिक तथा ऐतिहासक रूप प्रदान करने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। तथा यथास्थान ग्रन्थ का नाम, पृष्ठ आदि देकर अपनी पुस्तक को प्रामाणिक और यथार्थ बनाने का यत्न किया है।

शास्त्री जी ने अपने सीमित साधनों के आधार पर परन्तु अपनी निष्ठा और लगन के बल पर एक पगडंडी का निर्माण किया है। आशा करनी चाहिये कि कोई वाराणसी सदृश संस्कृत विश्व-विद्यालय, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, अथवा धर्मार्थ ट्रस्ट शास्त्री जी को या अन्य किसी अनुसन्धित्सु को कुछ समय के लिये बाहर उपयुक्त स्थान में वैष्णवी देवी पर अधिकार पूर्ण तथा शास्त्रसम्मत वर्णन धार्मिक जनता के सामने उपस्थित करने के लिये प्रेरित करे गा।

श्री जगदीशचन्द्र शास्त्री जी ने जम्मू, कटड़ा, त्रिकूट तथा वैष्णो देवी की गुफा, सिंह, भैरव तथा अन्य तथ्यों सम्बन्धी किंवदन्तियों का वर्णन करते हुए अपने मत को शास्त्रसम्मत सिद्ध करने का यत्न किया है। विद्वान और अनुसन्धान कर्ता अपने सुझावों से शास्त्री जी का पथप्रदर्शन करें तो यह अनुसन्धान कार्य की सेवा होगी।

शास्त्री जी की वर्तमान पुस्तक से जम्मू कश्मीर गवर्नमेंट की टूरिज्म इण्डस्ट्री की अच्छी सेवा हुई है। धर्मार्थ विभाग का प्रशंसनीय कार्य भी सामने आया है। यह पुस्तक एक प्रकार से जम्मू दर्शन ही बन गई है जिसमें जम्मू के सब दर्शनीय स्थानों का वर्णन उपलब्ध है।

मुद्रण अशुद्धियों की बहुलता बहुत खटकती है। दूसरे संस्करण में इन त्रुटियों को दूर किया जाना पुस्तक की उपादेयता को बढ़ायेगा और जम्मू के प्रैस कार्य की प्रशंसा का द्योतक होगा।

श्यामलाल शर्मा

१६५, विजयगढ़ जम्मू

४-७-७६

अवतरणिका

राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का नाम ही दुर्गा है। वही शक्ति जब सात्विक रूप धारण कर लेती है तो सरस्वती के नाम से पुकारी जाती है। जब वह राजसी काम करती है तो वैष्णवी शक्ति कहलाती है। वही राष्ट्र की शक्ति जब तमोगुणी प्रधान कर्म करती है तो काली या महा काली कहलाती है। उस समय शिव की भान्ति कल्याणकारी पुरुषों को भी महाकाली का क्रोध शांत करने के लिए चरणों में लेट जाना पड़ता है। परन्तु ऐसा रूप धारण करने की आवश्यकता तभी पड़ती है, जब राष्ट्र में अराजकता फैली हो। सारी राक्षसी शक्तियां जब राष्ट्र में विघटनकारी कार्य करती हैं—अर्थात् सीमा से बाहर हो जाती हैं, तब राष्ट्र की सामूहिक शक्ति को महाकाली का रूप धारण करना पड़ता है।

दुर्गा सप्तशती में राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का चित्र खींचा है। महिषासुर के उत्पात् करने पर राक्षसों द्वारा देवताओं के अधिकार छीन लेने पर सारा देव समाज मिल कर बैठता है। और एक भाव को लेकर विचार करता है कि हमारा अब क्या होगा, शत्रु प्रबल है। तब सब देवताओं ने अपना अहम् भाव छोड़ और मिल कर एक भाव से एक ही दिशा में काम किया। तब उस से एक अलौकिक दिव्य शक्ति पैदा हुई। और उसी सामूहिक शक्ति ने दैत्यों पर विजय प्राप्त कर ली।

जो काम अलग अलग रहने पर बड़े बड़े सेनापति नहीं कर सकते थे, न ही अलग अलग सेनाएं ही कर सकती थीं, वही काम

देव समाज की सामूहिक शक्ति ने अकेले ही कर दिखाया।

महाभारत में भी इस सामूहिक शक्ति का वर्णन हमें तब मिलता है, जब कौरव, पाण्डव अपना अलग अलग का भाव मिटा कर यह कहते हैं कि घर में एक सौ, एक तर्फ और पांच एक तर्फ रहें गे, परन्तु शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए वयं पञ्चाधिकं-शतम् – घर की लड़ाई में सौ और पांच का मुकाबला होगा, परन्तु बाहरी किसी तीसरी शक्ति के आक्रमण करने पर हम एक सौ पांच होंगे। (१०५) उस समय कौरव, पांडव का भेद मिटा कर हम सामूहिक भावना से लड़ें गे।

उसी राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का साक्षात्कार हम भारत वासियों ने वर्तमान काल में तीन बार किया है।

प्रथम बार १९४७ में देश का विभाजन होने पर भारत पर विदेशियों द्वारा प्रबल आघात् किया गया। जिस आघात् से बच निकलना कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव भी था। उस समय स्वतन्त्र, गणतन्त्र, भारत के प्रथम प्रधानामात्य स्वर्गीय पं० जवाहर लाल नेहरू जी की अध्यक्षता में राष्ट्र में सामूहिक शक्ति पैदा हुई, और उसने दानवी शक्ति को शांत कर दिया।

दूसरी घटना तब घटित हुई जब १९६५ में पाक की सेना ने भारत पर रात्रि के घने अन्धकार में चुपके से अचानक विशाल टैंक-आर्मी से आक्रमण कर दिया। तब भी सारा राष्ट्र मिल कर एक सामूहिक शक्ति के रूप में भारत के द्वितोय प्रधान मन्त्रीं स्व० श्री लाल बहादुर शास्त्री जी की अध्यक्षता में सगर्व उन्नत मस्तक किए खड़ा हो गया। एक ही सिंह गर्जना से शत्रु की सेना के छक्के छूट गए।

तीसरा उदाहरण राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का हमें उस समय मिला, जब १९७१ में अचानक भारत पर हवाई हमला पाक सेना द्वारा किया गया। इस समय भारत का शासन सूत्र तृतीय प्रधान मन्त्री श्रीमति इन्दिरा गांधी जी के सुदृढ़ हाथों में था।

सारे प्रांत सारी जातियां सारे वर्ण सारी पार्टियां सामाजिक धार्मिक, राजनैतिक भेद भाव को मिटा कर राष्ट्र की एकात्मता के स्नेह रूपी सूत्र में बन्ध कर एक प्रबल शक्ति के रूप में हिमालय की अडिग, सुदृढ़ तथा अचल सामूहिक शक्ति के रूप में सारा राष्ट्र खड़ा हो गया।

हमें उस समय दुर्गा अथवा वैष्णवी के उस स्वरूप का ध्यान आता है, जो सब देवताओं के तेज से मिल कर बना था। उस स्वरूप को सब देवताओं ने अपनी अपनी शक्ति के अनुसार अस्त्र, वस्त्र तथा शस्त्र दिए थे सब देवताओं ने अपना अलगाव का अहम् भाव मिटा कर एक सामूहिक शक्ति को उत्पन्न किया था। जिस ने बड़े बड़े दैत्यों शुम्भ, निशुम्भ, महिषासुर, रक्तबीज, धूम्राक्ष तथा चण्ड मुण्ड जैसे दानवों का दलन किया तथा मान-मर्दन भी किया।

इसी राष्ट्र की सामूहिक शक्ति को 'दुर्गा' (दुखः से अर्थात् कठिनाई से जिस का पार पाया जाए) नाम से पुकारते हैं। इसी को वैष्णवी शक्ति इसी को महाकाली तथा महा सरस्वती के नामों से पुकारते हैं। भारत की जनता ने देख ही लिया होगा कि १९७१ में हमारे पर कैसा संकट आया था और उस संकट का सामना राष्ट्र की सामूहिक शक्ति ने ही किया था। उसी शक्ति को पक्ष एवं विपक्ष द्वारा दुर्गा, रानी झांसी, वैष्णवी, देवी-इन्द्राणि कई नामों से लोक सभा के विशाल भवन में तालियों की गड़गड़ाहट में पुकारा गया। उस राष्ट्र की सामूहिक शक्ति का नाम था प्रधान मन्त्री श्रीमति इन्दिरागांधी। इस उक्ति पर किसी को भी व्यक्तिगत अभिमान न होना चाहिए। यहसारा काम किसी एक व्यक्ति द्वारा न हो सकता था न सम्भव था। यह सारा काम हमारे उस वाक्य ने किया वयं पचाधिकं शतम्, अथवा मार्कण्डेय ऋषि ने जिसे रूपक द्वारा राष्ट्र को समझाने का प्रयत्न किया था जैसे—भारतीय परिवार का चित्रण, शिव परिवार से किया है। शिव की सवारी बैल, शिव शक्ति दुर्गा की सवारी सिंह, कार्तिकेय की सवारी मयूर, गणेश जी की सवारी चूहा है। इन

सब के वाहन एक दूसरे के विरोधी हैं । जैसे शिव के बैल का भगवती का सिंह विरोधी है, शिव के गले में पड़े सर्पों का विरोध स्वामी कार्तिकय के मयूर से है । गणेश जी के चूहे का शिव के गले में पड़े सर्पों से प्रबल विरोध है । किन्तु फिर भी शिव का सम्मिलित परिवार है । यही तो भारत की प्राचीन राष्ट्र वादिता थी ।

प्रांतीय तथा जातीय अनेक भेद भाव होने पर भी भारत राष्ट्र एक था और एक है तथा भविष्य में भी एक रहेगा ।

उसी राष्ट्र की सामूहिक शक्ति को—त्वं वैष्णवी शक्ति रनन्तवीर्या कहा गया है—हे वैष्णवी शक्ति ! तुम अनन्तवीर्या (बल) पराक्रम से युक्त हो । उस वैष्णवी शक्ति की वास्तविक पूजा तो सारे राष्ट्र के भेद भाव को भुला कर स्नेहरूपी सूत्र में बन्ध कर बाहरी भेद होने पर भी आंतरिक एकता का भाव मन में रखते हुए राष्ट्र के प्रत्येक मानव से परिवार जैसा स्नेह भरा व्यवहार करना तथा अहम् भाव को मिटा कर राष्ट्र की सामूहिक शक्ति को ही परिवार मानना वास्तविक मां वैष्णवी की सच्ची पूजा है । इन्हीं शब्दों से मैं मां वैष्णवी के चरणों में श्रद्धा के फूल सादर सप्रेम सर्मपित करता हूँ ।

विनीत

जगदीश चन्द्र शास्त्री

॥ आभार ॥

जिन सत् पुरुषों की शुभ प्रेरणा से मैं इस पुनीत कार्य में प्रवृत्त हुआ अथवा जिन के शुद्ध एवं निर्मल सहयोग से इस पवित्र कार्य को पूर्ण कर पाया हूं, उन के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्तव्य समझता हूं।

सर्व प्रथम अपने पूज्यपाद स्वर्गीय पिता पं० सीता राम जी 'पाराशर' तथा वन्दनीया मातृशक्ति श्रीमति धन देवी महोदया के चरण कमलों में सादर प्रणाम करते हुए, अपना प्रथम आभार प्रकट करता हूँ। जिन के शुभ आशीर्वाद तथा शुद्ध संस्कारों के कारण ही मैं इस शुभ कार्य को पूर्ण कर पाया हूं।

सर्व प्रथम इस कार्य में मेरी रुचि उत्पन्न करने वाले श्री गोपाल दास जी सच्चर हैं जिन्हों ने मुझे इस क्षेत्र का विद्यार्थी बनाया। दूसरे मेरे परम मित्र श्री सूर्य सराफ हैं। जिन्हों ने मुझे साहित्य रूपी सागर में प्रेरणा के जहाज़ में बैठा कर अनन्त की यात्रा करवाई है। श्री धर्म चन्द्र जी प्रशांत मेरे मार्गद्रष्टा रहे हैं जिन्होंने समय समय पर मेरा मार्ग दर्शन किया है। डा० गंगादत्त जी शास्त्री विनोद तथा डोगरी रिसर्च इन्स्टीच्यूट के सैक्रेटरी पं० श्यामलाल जी शर्मा, पं० पूर्ण चन्द्र जी शास्त्री ज्योतिषाचार्य प्रबन्धक श्री रणवीर संस्कृत पुस्तकालय जम्मू श्री राम कृष्ण जी शास्त्री 'अव्यय' भारतीय प्रवासी डेनमार्क स्थित श्री एस० एल० शर्मा महोदय तथा श्री शिव दर्शन कुमार महोदय (लन्दन)।

जिन के शुद्ध सहयोग से इस वैष्णवी यज्ञ में पूर्ण आहुति हो पाई है, वह है धर्मार्थ ट्रस्ट, जम्मू-काश्मीर जम्मू। धर्मार्थ ट्रस्ट के सोलट्रस्टी वर्तमान स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन मन्त्री भारत सरकार, सम्माननीय डा० कर्ण सिंह महोदय, धर्मार्थ ट्रस्ट प्रधान आदरणीय कर्नल कमल सिंह महोदय, मान्यवर सैक्रेटरी धर्मार्थ ट्रस्ट जम्मू-काश्मीर श्री गणेश दास जी शर्मा तथा धर्मार्थ कौन्सल के अन्य माननीय सदस्यों का भी विशेष आभार प्रकट करता हूं जिन्हों ने जम्मू-काश्मीर राज्य में धार्मिक स्थानों के सुधार में अपूर्व उत्साह जनक कार्य कर दिखाया है। वर्तमान काल में केवल मात्र एक ही संस्था जम्मू-काश्मीर राज्य में धार्मिक स्थानों की रक्षक है जो धर्मार्थ ट्रस्ट जम्मू-काश्मीर के नाम से सुप्रसिद्ध है।

श्री सनातन धर्म सभा जम्मू, श्री वेद मन्दिर कमेटी जम्मू, फ्रूट एसोसिएशन जम्मू, सत्संग रानी तालाब मन्दिर जम्मू, श्री योद्धामल्ल कोठेयाला, एसोसिएशन जम्मू, श्री हंसराज जी मगोत्रा जम्मू, नगरपालिका जम्मू एवं प्रधान सम्पादक महोदय कल्याण गीता प्रैस गोरखपुर (उ. प्र.)।

वास्तव में जिनके अमूल्य सहयोग से इस पुस्तक का निर्माण कर पाया हूं वह हैं श्रीमति प्रभा शर्मा महोदया 'साहित्य रत्न' राजकीय महिला विद्यालय जम्मू।

और भी जिन सज्जनों ने हमें मानसिक, वाचिक, एवं आर्थिक प्रेरणा देकर उत्साहित किया है उन सब का मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

—लेखक

त्वँ वैष्णवी शक्तिरनन्त वीर्यां । विश्वस्य बीजंपरमासि माया ।
सम्भोहितं देवी ममस्त मेतत् । त्वँ वै प्रसन्ना भुविमुक्ति हेतुः ॥

।। श्री गणेशाय नमः ।।

माता वैष्णवी देवी की यात्रा

सर्व रूप मयी देवी सर्वं देवी मयं जगत् ।
अतोऽहं विश्वरूपां त्वां नमामि परमेश्वरीम् ।।

अर्थात्—दृश्यमान् जगत् सारा देवी में समाया है । अथवा सारा जगत् देवी स्वरूप ही है। इस लिए मैं विश्व स्वरूपा भगवती मां वैष्णवी को नमस्कार करता हूँ ।

——————

प्राचीन काल में यात्रा का आरम्भ

प्राचीन काल में माता वैष्णवी की यात्रा का आरम्भ शल्य कोट (स्याल कोट) से होता था। (जो अब पाकिस्तान के राज्य पंजाब में चला गया है) इस को महाराजा शल्य ने वसाया था।

महाराजा शल्य भी दस हज़ार हाथियों का वल रखते थे। महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़े थे। जब भीष्म, कर्ण, द्रोण सभी महारथी मारे गए, तब दुर्योधन ने शल्य को सेनापति बनाया था। जिस का वर्णन महाभारत में ज्यों है :—

हते भीष्मे, हते द्रोणे, कर्णे च त्रिदिवंगते ।
आशा बलवती राजन् शल्यो जेष्यति पाण्डवान् ।।

अर्थात् महारथी भीष्म, महारथी द्रोणाचार्य एवं महारथी कर्ण के मारे जाने पर महाराजा दुर्योधन सोच रहा है कि राजा शल्य को सेनापति बनाया जाए। यह अवश्य ही पाण्डवों को जीते गा। आशा बड़ी वलवती है।

राजा शल्य को मद्र नरेश भी कहा है। शाकल कोट, शल्य कोट, (स्याल कोट) सभी एक ही नाम हैं। यह नगर आज के जम्मू नगर से ३० मील दक्षिण की ओर वसा है। यह पश्चिमी राज्य पाकिस्तान में है। और सीमावर्ती एक नगर है। महाराजा शल्य प्रातः अपने राजमहल से भगवती मां वैष्णवी के त्रिकूट पर्वत के दर्शन करके जलपान या भोजन करते थे।

जैसे जम्मू के स्वर्गीय महाराजा श्री रणवीर सिंह जी दोपहर का भोजन उस समय करते थे, जब उत्तर वाहिनी में संस्कृत पाठशाला के एक हज़ार विद्यार्थी भोजन कर लेते थे।†

ऐसे ही दिल्ली नरेश महाराजा पृथ्वीराज ने भी अपनी महारानी संयोगिता के लिए पृथ्वी स्तम्भ बनवाया था। जिस पर चढ़ कर प्रतिदिन महारानी यमुना माता के दर्शन कर के दोपहर का भोजन करतीं थी।

प्राचीन समय में हिन्दू राजा विजय स्तम्भ या कीर्ति स्तम्भ बनवाते थे।

प्राचीन समय में राजा तथा महाराजाओं के कोई न कोई नियम अवश्य होते थे। ऐसा ही नियम हमारे महाराजा शल्य का भी था। प्राचीन समय में भी भारत से हज़ारों की संख्या में भक्त गण माता वैष्णवी की यात्रा पर आते थे। परन्तु उस समय इक्का-दुक्का व्यक्ति यात्रा पर नहीं आता था। दल (काफिले) के रूप में इकट्ठे हो कर चलते थे। शल्य कोट माता की यात्रा का उस समय मुख्यद्वार या प्रथम द्वार था।

पाकिस्तान बनने से पूर्व यह क्रम चलता रहा। माता के यात्री यहां से सामान तथा सवारी के लिए घोड़े, खच्चरें किराए पर लेते थे। यहां से यात्रा का आरम्भ कर भक्त गण उत्तर वाहिनी और पुरमण्डल में भगवान् शंकर के दर्शन कर के फिर आगे की

---

† जम्मू प्रांत में सब से पहले तार का प्रबन्ध यहीं उत्तर वाहिनी से ही हुआ है। इस के खण्डहर अभी तक भी विद्यमान हैं।

यात्रा का कार्यक्रम बनाते थे। अब थोड़ी देर के लिए पाठकों तथा माता के भक्तों को इन दोनों पवित्र तीर्थ स्थानों का दिग्दर्शन करवा देते हैं।

उत्तर वाहिनी यहां पर मद्रपावनी महानदी देविका उत्तर की ओर बहती है। यहां पर स्वर्गीय महाराजा श्री रणबीर सिंह ने "प्रयाग" गया आदि तीर्थ स्थान बनवाए थे। इन्हीं तीर्थ स्थानों से शिला तथा फलगू (रेत) मंगा कर मन्त्रों द्वारा विधि वत् उन तीर्थों की स्थापना करवाई थी। जो गरीब (निर्धन) पुरुष उन तीर्थों पर नहीं जा सकते थे, वह पितरों की पिंड दानादि क्रिया यहां पर ही करते थे। आज भी यह क्रम देखने को मिलता है।

यहां पर भगवान् श्री गदा धर जी का मन्दिर अति प्राचीन है। इस मन्दिर में चौवीस अवतारों के चित्र विद्यमान हैं। इस मन्दिर में एक जल घड़ी भी विद्यमान थी। शास्त्रोक्त रीति से अष्ट धातु का बना कटोरा (वर्तन) होता था। जिस में शास्त्र के प्रमाण से एक छिद्र (सुराख) रहता था। यह पात्र जल कुण्ड में छोड़ दिया जाता था। यह एक घण्टे के पश्चात् जल में डूब जाता था। तब प्रहरी (संतरी) घड़ियाल पर एक बार एक चोट दो वार दो चोट लगा देता था। जिस से लोगों को समय का पता चल जाता था। यह जल घड़ी आज की घड़ी के समान ठीक समय बतलाती थी। आज इस का प्रयोग नहीं होता है।

इसी स्थान पर जम्मू के प्रतापी महाराजा गुलाब सिंह को स्वप्न में राज्य तिलक हुआ था। परन्तु वास्तव में राज्य तिलक होने पर इस स्थान पर मन्दिर तथा पांच मील की सीमा तक शिकार खेलना बन्द कर दिया था। इसी स्थान पर संस्कृत की दो पाठशालाएं थीं। एक संस्कृत की पाठशाला श्री स्वामी सच्चिदानन्द गिरि जी द्वारा चलाई गई थी।

श्री स्वामी सच्चिदानन्द गिरि जी स्वयं भिक्षा मांग कर बाहर से अन्न लाते थे और विद्यार्थियों को भोजन खिलाते थे।

जिला गुरुदासपुर जिला कठुआ और तहसील रणवीर सिंह पुरा के सेवक स्वामी जी को दान देकर पुण्य के भागी बनते थे।

दूसरी पाठशाला जम्मू के डोगरा महाराजाओं ने चलाई थी। सहस्रों विद्यार्थी उस पाठशाला में पढ़ते थे। काशी, मध्यप्रदेश, गढ़वाल और पंजाब के भिन्न भिन्न प्रदेशों से छात्र संस्कृत पढ़ने यहां आते थे। इस पाठशाला में बड़े बड़े उच्च कोटि के विद्वान् संस्कृत पढ़ाते थे। इस में एक ओझा पण्डित पढ़ाते थे जो काक भाषा भी जानते थे। पश्चात् इसी पाठशाला में होशियारपुर (पंजाब) मण्डलान्तर्गत जेजों नामक ग्राम निवासी प्रकाण्ड पण्डित श्री राम प्रपन्न शास्त्री जी पढ़ाते थे। उन्हों ने निरुक्त पर भी टीका की थी। छन्द-ग्रन्थ वृत्तरत्नाकर की भी टीका की थी। पंजाबी होते सुए भी इन्हों ने देविका लहरी संस्कृत में बना कर डोगरी में अनुबाद किया। इन की डोगरी कविताएं बड़ी रोचक हैं। यह शिखरणी छन्द में लिखी गई हैं।

पं० जी ने अपना गुरुकुल भी चलाया था। इन की बनाई हुई योग साधना के लिए एक गुफा आज भी उतर वाहिनी में विद्यमान है। इस स्थान पर एक बार पण्डित राम प्रपन्न जी को किसी प्रेत से साक्षात्कार हुआ। पण्डित जी ने उस प्रेतात्मा को बहुत कहा था कि आप की हम सद्‌गति करवा देते हैं। परन्तु प्रेत ने उत्तर दिया पण्डित जी हम गति नहीं चाहते। क्योंकि हमें जो योनि मिली है इस की अवधि लाखों वर्ष है। गति होने पर पुनः मरन - जन्म के चक्र में पड़ जाएं गे।

हमें इस प्रेत योनि में केवल खाने पीने की कठिनाई है। जितना हमारा प्रेत शरीर है उतना भोजन (खुराक) नहीं मिलती। परन्तु जन्म मरण से चिर काल के लिए छूट गए हैं। यह प्रेतात्मा ऐसे होती है। जैसे कृष्णदत्त ब्रह्मचारी के अन्दर प्रवेश करती है। किसी विद्वान की आत्मा बोलती है। यह घटना सायंकाल की है जब पण्डित जी गुफा में साधना करने जा रहे थे। इस घटना की जानकारी श्री स्वामी पूर्णानन्द गिरि जी को भी अच्छी प्रकार थी।

इस स्थान पर बड़ी बड़ी सिद्धि वाले विद्वान् तथा महात्मा रहते थे। यहां पर एक शिव का मन्दिर भी है, जो बहुत ही मनोहर है। इस मन्दिर में संगमरमर का नन्दीगण भी है, जो साक्षात् वैल के समान वैठा है। भारत वर्ष में ऐसी मूर्ति नन्दीगण की अन्यत्र नहीं। शिव मन्दिर का घण्टा जो नेपाल से बन कर आया था उसे महाराजा रणवीर सिंह ने मंगवाया था। इस घण्टे का वजन ४२ मन से भी ज्यादा है। इस के बीच वजाने वाली टल्ली सवा मन वजन की थी। यहां शिव भगवान् पर जल चढ़ाने के स्वचालित यन्त्र लगे थे। मन्दिर के साथ एक छात्रा वास (वोर्डिंग) भी था। जिस में बाहर से आने वाले संस्कृत के छात्र रहते थे। इस मन्दिर के साथ एक ठाकुर रत्न सिंह का लगाया हुआ वाग (उद्यान) भी बहुत सुन्दर है।

इस के आगे एक फलाँग की दूरी पर श्री रघुनाथ जी का नया मन्दिर है। जिस की चोटी गगन चुम्बी है। इस मन्दिर को बनबाते बनबाते श्री रणवीर सिंह जी स्वर्ग सिधार गए। इस मन्दिर में ग्यारह रुद्र (शिवलिंग) हैं। जो मनुष्य से भी ज्यादा ऊंचे हैं। यह भी महाराजा श्री रणवीर सिंह ने नेपाल से मंगवाए थे।

इस मन्दिर में श्री राम, श्री लक्ष्मण तथा श्री सीता जी की विशाल मूर्तियां हैं। इस में लगे पत्थर लाल रंग के हैं जो जयपुर से मंगवाए गए थे। दर्शक देख कर आश्चर्य चकित हो जाते हैं। क्यों कि जब सड़कें भी न थीं, आने जाने के साधन भी सीमित थे, उस समय इतना विशाल कार्य का सामान बिना पक्की सड़क के कैसे पहुँचाया होगा। इस से जम्मू के डोगरा राजाओं का धर्म प्रेम ही मुख्य कारण रहा होगा।

इस के आगे चल कर मन्दिर के सामने ही एक पहाड़ी है जिस को शिव मंडप की पहाड़ी भी कहते हैं। यह पहाड़ी कभी यज्ञ मण्डप का ढ़ेर थी। इस की मिट्टी राख के समान ही सफेद है। इस के पश्चिम की ओर जो गांव है उसे मण्डल के नाम से पुकारते हैं। उस पहाड़ी से पूर्व की ओर एक गांव है। जिसे

वैदिका या मेदिका के नाम से पुकारते हैं।

कभी इस स्थान पर कश्यप पुत्र धुन्धु ने (जो उन की पत्नी दनु से औरसपुत्र उत्पन्न हुए थे) अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया था। इस यज्ञ में भार्गव वंशी श्री शुक्राचार्य जी यज्ञ के आचार्य बने। दोपहर का भोजन ऋषिगण जहां पर करते थे उसे आनन्द पुर (आज की उत्तर वाहिनी) कहते थे। इस स्थान पर चौथे कलियुग में दैत्यराज श्री प्रह्लाद जी भी तीर्थ स्नान को आए थे। इस स्थान पर प्राचीन मानव सभ्यता के बहुत से अंग मिलते हैं। कई प्रकार के पुराने सिक्के भी देखने को मिले। परन्तु यहां के लोगों के लिऐ सोना मिट्टी सब समान रूप ही है।

यहां से तीन मील पश्चिमोत्तर उत्तर वाहिनी से पुरमण्डल नाम का प्रसिद्ध तीर्थ है। जहां पर माता वैष्णवी देवी के यात्री स्नान करके तथा भगवान् शंकर के दर्शन करके अपने को सौभाग्य शाली समझते थे।

पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश तथा दूसरे प्रांतों से बड़े बड़े सेठ इस स्थान पर बहुत बड़े यज्ञ आदि करते थे। कुमारी पूजन, निर्धनों को वस्त्र तथा अन्न दान करते थे।

इस स्थान पर विशाल एक स्वर्ण शिव मन्दिर है। यहां पर सवा लाख रुद्र विद्यमान थे। (शिवलिंग) आज से हजारों वर्ष पूर्व राजा मान्धाता तथा राजा वेणीदत्त (अवन्ति वर्मा) महाराजा रणजीत सिंह (पंजाब के सिक्ख राजा), महाराजा गुलाब सिंह ने इस पवित्र स्थान को जागृत किया था।

मुगल सम्राट के सिपासालार (सेनापति) राजा मान सिंह भी इस पवित्र तीर्थ की यात्रा पर आए थे। राजा मान सिंह ने कावुल जाते हुए मन्नत मानी थी, कि यदि मैं कावुल को विजय करके आ जाऊंगा तो वापसी पर देविका नदी में स्नान तथा पुर-मण्डल मन्दिर में भगवान् शंकर के दर्शन करूं गा।

भगवान् की कृपा से कावुल फतह के बाद राजा मान सिंह सम्मान को प्राप्त कर पुरमण्डल में तीर्थ यात्रा पर आए। उन्होंने

फिर यहां पर एक मान मन्दिर बनवाया जो इस समय भी विद्यमान है। बादशाह शाहजहां और औरंगजेब बादशाह के पट्टे इस मन्दिर को दिए गए हैं। इन बादशाहों ने लिखा था कि जो इन पट्टों को पढ़े वह मन्दिर के साथ बारह घुमाव जमीन और लगाये अपनी तरफ से। इन पट्टों को महाराजा गुलाब सिंह ने पढ़ा और बारह घुमाव जमीन पुरमण्डल से दक्षिण की ओर एक मील के फासले पर नन्दकेश्वर ग्राम में प्रदान की। और आगे के लिए लिख दिया कि कोई और इन पट्टों को न पढ़ें मेरे वंश का।

मुगल बादशाहों ने कट्टर सुन्नी मुसलमान होते हुए भी गौंओं के लिए ग्यारह सौ कनाल जमीन मन्दिर के साथ लगा दी।

१६७२ ई० में पूज्य श्री गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज का पुरमण्डल यात्रा का वर्णन मिलता है। पुरमण्डल महानदी देविका में स्नान तथा भगवान् शंकर के दर्शन किए। ऐसा दिवान नृसिंह दास नरगस इतिहासकार द्वारा डुग्गर की हिस्ट्री में लिखा मिलता है। आदि गुरु श्री नानक देव जी महाराज भी पुरमण्डल में आए परन्तु हमें वह पूर्ण रूप से संम्बत् या सन् प्राप्त हो नहीं सका।

जब गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज पुरमण्डल की यात्रा पर आए थे तभी जम्मू के राजा गजे सिंह वालिया रियासत ने पत्र लिख कर गुरु गोविन्द सिंह जी को जम्मू में पधारने की प्रार्थना की दशमेश गुरु जी जम्मू में सरकारी मेहमान रहे। और वहां से माता वैष्णवी देवी की यात्रा पर गए।

यह दिन भी हिन्दू इतिहास में एक महत्वपूर्ण रहा होगा। जिस दिन हिन्दू जाति के रक्षक पूज्य गुरु जी न जाने मन में क्या क्या भावना लेकर गए होंगे। माता की पवित्र तथा अलौकिक गुफा में पहुँच कर गुरु जी ने धर्म युद्ध में विजय के लिए मन्नत मानी थी हिन्दू जाति के लिए कितनी वेदना स्नेह एवं श्रद्धा थी। जिन्हों ने अपने चार पुत्रों को देश की बलि वेदी पर न्योच्छावर कर के कहीं पर एक बार भी यह नहीं लिखा न कहा कि मैंने देश खातिर कोई बड़ा काम किया है। हां इतना आवश्य कहा कि यह कर्तार के प्रति

फर्ज था जो मैंने निभा दिया है। ऐसे महापुरुषों से हिन्दू इतिहास गौरवान्वित है और था एवं रहेगा। यह वही श्रद्धेय गुरु आज माता की यात्रा पर आए हैं जिन्हों ने वेदों की रक्षा हेतु अपने खर्च से वेद पढ़ने ब्राह्मणों को काशी में भेजा था। इन्हों ने हिन्दू जाति में शक्ति संचार हेतु सवा लाख रुपया खर्च करके पण्डित काली दास द्वारा चण्डी महा यज्ञ करवाया था। वही गुरु जी आज भी वैष्णवी से धर्मयुद्ध में विजय की कामना से गुफा में पधारे थे। यहां से वापस हो कर वह तीन चार दिन जम्मू ठहर कर पंजाब को चले गए।

१८३८ में पुरमण्डल में चैत्र चतुर्दशी के पर्व पर महाराजा रणजीत सिंह जी भी आए थे। उन्हों ने दो गागरें सोने की मन्दिर में चढ़ाई थीं। वह यहां तीन दिन रहे। फिर मानसर या सरुईं-सर से होते हुए जम्मू को चले गए थे। लार्डहार्डिंग ने भी पुरमंडल यात्रा की थी। वह लिखते हैं कि मैं तीन दिन के पश्चात् लाहौर से पुरमण्डल पहुंचा। पहले बग्घी (तांगा) फिर हाथी पर बाद में पालकी के द्वारा पुरमण्डल में पहुँचा उन्होंने लिखा कि एक लाख व्यक्ति स्नान करने पुरमण्डल में आया था। उत्तरी भारत में हरिद्वार के बाद यही हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ है।

इस पर्व पर (मेले में) मुलतान वहावलपुर सिन्ध प्रांत सीमा वर्ती नगरों के लोग स्नान हेतु आए थे।

लार्ड हार्डिंग ने जहां की परम्परा के अनुसार सूटे (रेत के टोए) में स्नान किया। वहां वेदपाठी ब्राह्मणों ने वेदपाठ किया। बाद में लार्ड ने आर्डर दिया कि पण्डितों को २१-२१ रुपए और दूसरों को ११-११ रुपए दान के रूप में दिए जाएं। यहां पर उन्होंने भोजन के साथ औरिया (विशेष भाजी) खाया जो उन्हें बहुत अच्छा लगा। इस समय के मेले (पर्व) का चित्र लिया गया जो दस्ती है। उस समय देविका नदी बहुत गहरी थी। उस समय बन्नूवाहिनी नदी के पास हाथियों की पंक्ति बन्धी थी तथा घोड़े एवं बन्दूकधारी सिपाही दिखाई देते हैं।

पुरमण्डल एवं उत्तर वाहिनी में मन्दिरों के गगन चुम्बी

स्वर्ण कलश मीलों दूर से दिखाई देते हैं। इनको देख कर प्राचीन भारतीय संस्कृति की याद पुनः स्मरण हो आती है। पुरमण्डल के शिव मन्दिर को स्वर्ण मन्दिर भी क़हते हैं। इस में बड़े शिव मन्दिर में एक जल का कुण्ड है जिस में लाखों जल के घ़ड़े चढ़ जाते हैं परन्तु कुण्ड का जल उतना ही रहता है।

कश्मीर नरेश वेणी दत्त का पुरमण्डल में आगमन

प्राचीन समय में एक वेणी दत्त नामक प्रतापी राजा हुए हैं। जिन के घर एक कन्या रूपी रत्द उत्पन्न हुआ। यह कन्या पिता के घर में शुक्लपक्ष के चन्द्र के समान बृद्धि को प्राप्त होने लगी। जैसे यह क़न्या बड़ी होने लगी वैसे ही वह शिरोवेदना (सिरदर्द) का अनुभव करने लगी। महाराजा वेणी दत्त ने अपनी प्रिय पुत्री की चिकित्सा (इलाज) के लिए कोई कसर उठा न रखी।

राज्य के बड़े बड़े प्रसिद्ध वैद्य, डाक्टर, मन्त्र तथा यन्त्र एवं तांत्रिकों को बुलाया। परन्तु किसी से कुछ भी वन न पड़ा। सिर दर्द ज्यों की त्यों ही रही। अन्ततः राजा को एक भृगु संहिता जानने वाले ज्योतिषी जी ने वतलाया कि महाराज! पूर्व जन्म में यह कन्या, गीदड़ी थी। एक समय इसके पीछे व्याध (शिकारी) लगा उसने इस कै सिर में एक वाण मारा, वाण लगते ही सिर में धंस गया। उस समय वह गीदड़ी शिवपुर (पुरमण्डल) में शिव कुण्ड पर खड़ी थी। वाण सिर में लगने के कारण गीदड़ो को चक्र आ गया। तीन बार कुण्ड की परिक्रमा सी करती हुई गिर पड़ी और मर गई।

राजन् शिव कुण्ड की परिक्रमा करने से तथा उसी स्थान पर मरने से इस का जन्म राजा के घर हुआ है और यह इस जन्म में राजकुमारी वन गई है। परन्तु राजन् जब तक वह बाण

गीदड़ के सिर से निकाला नहीं जाएगा तब तक राजकुमारी की सिर दर्द ठीक नहीं होगी ।

राजा वेणी दत्त ने पण्डित के मुखारबिन्द से ऐसी चमत्कार-पूर्ण पूर्व जन्म की घटना सुन कर तत्काल अपने दूत पुरमण्डल को भेज दिए। दूतों ने बतलाए हुए वर्णन के अनुसार पुरमण्डल के शिव कुण्ड का पता पा लिया, कुछ समय की छानबीन के बाद राजा के दूतों को मरी हुई गीदड़ी का अस्ति पिंजर भी प्राप्त हो गया। गीदड़ी के सिर में अभी तक वाण धंसा था। राजा के दूतों ने देखते ही फुर्ति से गीदड़ी के सिर से वाण निकाल फैंका। फिर प्रसन्न चित्त राजा के दूत अपने महाराजा को यह समाचार सुनाने के लिए उतावले हो गए, और पुरमण्डल से काश्मीर की ओर प्रस्थान किया ।

ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र हैं, जैसे ही वाण गीदड़ी के सिर से निकाला गया वैसे ही राजकुमारी की सिर दर्द कश्मीर में उसी समय ठीक हो गई। थोड़े दिनों के पश्चात् राजा के दूत भी आ पहुंचे और सब समाचार कह सुनाया राजा वेणी दत्त को। यह चमत्कारिक घटना को देख कर राजा और रानी बड़े आश्चर्य चकित हुए ।

तत्काल शिवदर्शन के लिए शिवभक्त महाराजा वेणी दत्त तथा रानी एवं राज कुमारी के सहित पुरमण्डल यात्रा का कार्य क्रम निर्धारित कर दिया। अर्थात् पुरमण्डल यात्रा की तैयारी कर दी। राजा के साथ घुड़सवार तथा कुछ पैदल सेना भी चल पड़ी । राज्य के अनेक कर्मचारी तथा दास दासियां भी चल पड़ीं। नाना प्रकार के वस्त्र आभूषण, मूल्यवान् द्रव्य, अन्य पूजा की सामग्री साथ में ले ली।

जब राजा ने काश्मीर से प्रस्थान किया तो, उस समय अनेक प्रकार के मांगलिक वाजे वजने लगे। कुछ दिन चलने के पश्चात् राजा - रानी शिवपुर-पुरमण्डल में पहुंचे । पवित्र क्षेत्र में महानदी देविका में स्नान किया फिर शिवकुण्ड के दर्शन किए। वेदपाठी ब्राह्मणों द्वारा भगवान् शिव की पूजा तथा स्तुति की ।

इस शुभ अवसर पर राजा वेणी दत्त ने शिव मन्दिर की स्थापना की। मन्दिर के पीछे उस गीदड़ी का चित्र आज भी देखने को मिलता है। इस के पश्चात् मनोरथपूर्ण राजा वेणी दत्त और उस की महारानी दल के सहित पुन: देवभूमि काश्मीर को चले गए।

———

शिव कुण्ड की महिमा

इस शिव कुण्ड की प्राचीनता का पूर्ण रूप से कोई पता नहीं कितने हज़ार वर्ष पुरानी है। पर इतनी कथा अवश्य मिलती है कि भगवान् शिव (आप शम्भु) यहां स्वयं प्रकट हुए थे।

किसी किसान की गाय घास चरने नित्य इस शिव कुण्ड के पास आती थी। इस गाय को बछड़ा जन्मे दो तीन मास ही हुए थे। अर्थात् गाय दूधारू थी। पर सायंकाल को जब गाय किसान के घर जाती थी तो उन्हें गौ से दूध नहीं मिलता था। गौ के स्थन सूखे सूखे से दिखाई देते थे। गाय का मालिक़ तंग पड़ गया और वह एक दिन झाड़ियों में छिप कर बैठ गया। तब उस ने क्या देखा कि कुण्ड के पास एक जाट आया और गौ का दूध दोहने लगा। रोचक बात यह थी कि नित्य प्रति गौ आती थी और सायं काल को क्ण्ड के पास आकर स्वयं खड़ी हो जाती थी और दूध दोहने के पश्चात् स्वयं घर चली जाती थी।

उस दिन मालिक ने किसी जाट को दूध दोहते देख लिया। और समझ गया यही जाट मेरीगाय का नित्य दूध दोह कर ले जाता है। किसान ने झट झाड़ियों से निकल कर जाट के सिर में एक लाठी की जोर से चोट लगा दी। लाठी के लगते ही वह जाट रूप भगवान् शिव वहीं पर अन्तर्धान हो गए।

आज भी इस कुण्ड पर जो शिव की मूर्ति है वह एक ओर से खण्डित है। इस कुण्ड की विचित्र बात यह है कि इस में लाखों घड़े जल चढ़ जाता है परन्तु पानी का स्तर एक जैसा ही रहता है। न बढ़ता है न घटता है, यही इस की विशेषता है।

एक समय किसी राजा ने परीक्षा हेतु अपनी सेना के जवानों को लगा कर हज़ारों घड़े तेल मिश्रित जल के चढ़ाए फिर दूध डाल कर चढ़ाए गए, परन्तु बाहर जल का पता कहीं पर भी न चल सका।

विशेष पर्वों पर जैसे मार्ग चतुर्दशी, शिवरात्रि, चैत्र चतुर्दशी, पर लाखों घड़े जल के इस कुण्ड में चढ़ते हैं। कई वावलियां, कुएं साफ हो जाते हैं पर जल का पता नहीं चल सका। ऐसा यह शिव कुण्ड है। इस मन्दिर की प्रष्ठिा राजा मान्धाता से लेकर आज तक चली आ रही है। इस मन्दिर की प्राचीनता इस श्लोक से मिलती है :

पुरा राज राजेन मान्धातृणाऽपि।
चमत्कार मालोक्य भक्तया व्यधापि॥
उमानाथ देवालयोऽयं विशाल:।
रणेवीर सिंहेन हेम्न: पिन्नद्ध: ॥

अर्थात् पूर्व समय में राजाधिराज मान्धाता ने चमत्कार को देख भक्ति से उमापति जी का विशाल मन्दिर बनवाया। और रणवीर सिंह महाराज ने इसे सुवर्ण से जड़ दिया।

डुग्गर स्तुति –पृ० सं० ६३ श्लोक ३०वां महोपाध्याय पं० शुकदेव जी कृत।

इस स्थान को शिवपुर, पुरमण्डल इत्यादि नामों से पुकारते हैं। इस स्वर्ण मन्दिर के सामने एक भैरव जी का मन्दिर है। उस के साथ ही उत्तर को एक स्वामी कार्तिकय जी का मन्दिर है। बड़े मन्दिर के पीछे पश्चिम की ओर एक काशी विश्वनाथ जी का मन्दिर है। जिस में दिव्य मूर्ति देखने योग्य है। इस के साथ दक्षिणी भाग में श्री गणेश जी का कन्दिर है। जिस में श्री गणेश भगवान् की मूर्ति विशालकाय देखने योग्य है। मण्डप के मध्य भाग में श्री शारदा का पीठ बना है। साथ में व्यास गद्दी का स्थान भी विद्यमान है।

इस मन्दिर में एक विशाल बरगद का वृक्ष भी मन्दिर की शोभा को बढ़ा रहा है। शेष ग्यारह रुद्रों की कई पंक्तियां देखने को मिमती हैं। नीचे एक श्री राधा कृष्ण जी का तथा मां भगवती श्री दुर्गा का मन्दिर है। इस मन्दिर के पूर्व में श्री वीरेश्वर का मन्दिर है। इस के नीचे दक्षिणी भाग में देविका के किनारे मध्य भाग में स्वामी सच्चिदा नन्द जी की पवित्र समाधि सुशोभित है।

स्वामी जी के दो शिष्य थे एक स्वामि दयालु गिरि जी दूसरे श्री पूर्णानन्द गिरि जी। यह दोनों अब शिवलोक प्राप्त हो चुके हैं। इन की पाठशालाएं उत्तर बाहिनी तथा पुरमण्डल में विद्यमान थीं। स्वामी जी हरियाणा प्रांत से आये थे। इन्हों ने इस प्रदेश में विद्या तथा अन्न का हज़ारों विद्यार्थियों को दान किया था। यह उच्च-कोटि के महात्मा और विद्वान् थे।

इस स्थान पर दाक्षिणात्य भट्ट ब्राह्मणों के भी मकान तथा कुएं देखने को मिलते हैं। सद्गति के लिए कई लोग इस स्थान पर आ कर वृद्धावस्था में निवास करते थे।

इस नगर से उत्तर की ओर एक सती मन्दिर है। एक वावा चम्पानाथ जी की पवित्र गुफा है। यहां से महानदी देविका पुनः प्रकट हुई है। यह स्थान इन्द्रेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हैं। बहुत ही रमणीय स्थान है। जो योगानुकूल है। छोटी छोटी पहाड़ियों से घिरा यह मनोहर स्थान किसी भी धर्म प्रेमी के मन को मुग्ध किए बिना नहीं रहता। वावा चम्पा नाथ का यह साधना स्थान था जो उच्च कोटि के योगी थे जिन के पास कई विदेशी, यूरपीय लोग योग की प्यास बुझाने के लिए आते थे।

वावा जी १२५ वर्ष की आयु में मरे। इन्हों ने इस स्थान पर एक सुन्दर झील बनाई थी। एक बाग एक गौशाला भी रखी थी। यह योगी एक समय में अनेक स्थानों पर प्रकट हो जाते थे। इस स्थान पर एक शिव मन्दिर भी देखने को मिलता है। प्रातः सायं नाना प्रकार के रंगों के पक्षी कलरव करके दर्शकों के मन को मन्त्र मुग्ध करते हैं।

इस स्थान से प्रकट हो कर महानदी देविका पुरमण्डल, उत्तर

वाहिनी से होती हुई विजय पुर के रास्ते कमल पुर के पास विश्वा-मित्र नदी (देग) में मिल जाती हैं। इस नदी को गुप्त गंगा भी कहते हैं। महर्षि कश्यप ने तप कर के भगवान् शिव से वर रूप में मद्र देश के उद्धार हेतु इस नदी को प्राप्त किया था।

इस पवित्र तीर्थ स्थान पर यात्रियों को एक समाधि देखने को मिले गी। यह समाधि वावा भगवन्त गिर महाराज की है। वावा भगवन्त गिर महाराज का बड़े रोचक ढंग से पुरमण्डल के शिव मन्दिर में प्रवेश हुआ था।

वावा भगवन्त गिरि जी दिल्ली में दरिया यमुना पर घास की कुटिया बना कर रहते थे। वहीं पर अपना भजन तथा नाम संकीर्तन करते थे। उसी समय जम्मू के राजा परशुराम और संग्राम दोनों भाई दिल्ली के बादशाह जहांगीर ने नजरबन्द कर रखे थे। शहर से बाहर जाने की आज्ञा न थी। परन्तु स्नानार्थ यमुना पर जाते थे और वावा भगवन्त गिर जी को नित्य प्रणाम करने भी जाते थे। एक दिन वावा जी ने पूछ ही लिया कि तुम कहां के रहने वाले हो। तुम्हारी जात पात क्या है ?

दोनों भाइयों ने उत्तर दिया कि हम जम्मू के राजा हैं, और दिल्ली के बादशाह ने हमें नजरबन्द किया है। और हमें बाहिर जाने की अनुमति नहीं है। जम्मू में बाहू का किला हम ने ही बनवाया है।

वावा जी की भविष्यवाणी

देविका महात्म्य से उद्धृत पृ० ५९ ला० विधि चन्द कृत :

वावा जी ने कहा वेटा आज से आठवें दिन पिंजरा तोड़ कर सरकारी शेर बाहर आ जाए गा। तुम ने बादशाह से हुक्म पा कर शेर को पकड़ कर पिंजरे में बन्द कर देना। फिर बादशाह खुश हो कर तुम्हें छोड़ देगा। अन्त में हुआ भी ऐसा ही। ठीक आठवें दिन शेर पिंजरा तोड़ कर बाहर आ गया। शहर में उसने बड़ा ही नुक्सान किया, सारे शहर में छोर मच गया।

दिल्ली में बादशाह के दरवार में रिपोर्ट हुई कि शेर पिंजरा तोड़ कर बाहर आ गया है। और बहुत ही नुक्सान कर रहा है। बादशाह ने कहा कि कोई ऐसा राजपूत है जो शेर को पकड़ कर पिंजरे में बन्द कर दे। यह हुक्म सुन कर दोनों भाई परशुराम और संग्राम उठ खड़ हूए। और हुक्म पा कर शेर को पकड़ने चले गए। उन्हों ने शेर के गले में दुपट्टा डाल कर शेर को पकड़ लिया और पिंजरे में बन्द कर दिया।

यह रिपोर्ट जब बादशाह के दरवार में पहुंची कि जम्मू के राजा परशु राम और संग्राम ने ही यह काम किया है। यह सुन कर बादशाह बहुत खुश हुआ और इन दोनों भाइयों को छोड़ दिया। और जम्मू जाने का हुकम मिल गया।

दोनों भाई महात्मा जी के पास गए और प्रणाम करके कहने लगे कि आप की कृपा से महाराज हमें जम्मू जाने का हुक्म मिल गया है। अतः आप भी हमारे साथ चलने की कृपा करें।

महात्मा जी ने कहा—बेटा तुम चले जाओ। हम भी भगवती ज्वाला खुखी के दर्शन करके चले आएं गे। पश्चात् कुछ दिन बीत जाने पर महात्मा जी भगवती के दर्शन करके पुरमण्डल में पहुंचे। यह स्थान इन को बहुत अच्छा लगा। यहां कुछ दिन ठहरने के पश्चात् फिर जम्मू में चले गए। इन्हों ने जम्मू में पहुंच कर महा-राजा से भेंट की। जम्मू के राजा ने इन का बड़ा ही सत्कार किया। और कहा कि जो भी जगह आप को पसन्द हो वहीं पर आप निवास कीजिए।

महात्मा जी ने कहा हमें पुरमण्डल का स्थान बहुत ही पसन्द है वही हमें दिया जाए।

राजा ने कहा महाराज वह जगह तो योगियों की है वहां सन्यासी कैसे रह सकते हैं ?

महात्मा जी ने कहा राजन् यदि मन्दिर के अन्दर से यह आवाज आए कि यह जगह सन्यासियों की है तब आप हमें दे दो गे ? जब यह खबर योगियों को मिली तो योगियों ने मन्दिर के अन्दर गढ़ा खोद कर एक लड़का बैठा दिया। और उसे समझा

दिया कि जब बाहर से आवाज़ आए कि यह जगह योगियों की है या सन्यासियों की। तब तुम ने कहना यह जगह योगियों की है।

कुछ दिनों के बाद राजा और महात्मा पुरमण्डल में आए। वहां पर शिवपूजन करके मन्दिर का द्वार बन्द कर दिया। फिर आवाज़ देकर पूछा यह जगह सन्यासियों की है या योगियों की।

अन्दर से लड़के ने आवाज़ दी यह जगह योगियों की है।

दूसरी बार फिर पूछा, फिर वही जवाब मिला। तब बावा जी ने कहा तुम अभी जिन्दा हो मरे नहीं। इतना कहते ही वह लड़का मर गया।

तीसरी बार बावा जी ने फिर पूछा, पर अन्दर से कोई आवाज़ नहीं आई। मन्दिर खोल कर देखा तो लड़का मरा पड़ाथा। लड़के को बाहर निकाल कर फिर शिव पूजन किया और मन्दिर बन्द कर के आवाज़ दी कि यह मन्दिर सन्यासियों का है या योगियों का, तो अन्दर से आवाज़ आई कि सन्यासियों का। इसी दिन से इस मन्दिर पर सन्यासियों का अधिकार हो गया।

मृत बालक पर कपड़ा डाल कर महात्मा जी ने जल का छींटा लगाया तो तत्काल ही बालक मानो गाढ़ निद्रा से उठ बैठा हो। तीन बार उस के मुख से ॐ नमो शिवाय का उच्चारण निकला। आगे चल कर यही बालक सिद्ध गोरिया बन गया।

इस बड़े स्वर्ण मन्दिर की गद्धी बावा भगवन्त गिर को मिल गई। इन के आगे दो चेले हुए एक का नाम निरंजन गिर और दूसरे का श्रीधर गिर था। इन तीनों की समाधियां पुरमण्डल के मन्दिर में विद्यमान हैं।

◉◉

इस पवित्र तीर्थ में स्नानोपरांत यात्री आगे का मार्ग पकड़ते थे। यहां से चलकर ८ मील के फासले पर तूतां खुई थी। वहां से चल कर यात्री कौल कंडोली में जाते थे। यहां भगवती का प्रथम दर्शन करते थे। इस स्थान के नाम के विषय में भी विचित्र किंवदन्तियां हैं।

इस स्थान की लेखकों ने भिन्न भिन्न प्रकार से व्याख्या की है। परन्तु वास्तविकता यह है कि यहां एक माई थी जिस के सहन में या खेत में बहुत सी कंडोलियां लगी होती थीं। वह माई एक कंडोली (घिया तोरी) का सलूना बना कर माता के यात्रियों को देती थी। कुछ पैसे ले कर कौल (कटोरे, सब्जी डालने बाला वर्तन) में कंडोली का सलूना परिमाण के द्वारा देती थी। इस लिए इस का नाम कौल कंडोली पड़ गया। लेखक को और कोई सत्यता दिखाई नहीं देती। कपोल कल्पित कई कहानियां बनाई जा सकती हैं। हमें उस समय ऐसी ही एक घटना आगे भी देखने को मिलेगी। उस से पाठकों का सन्देह दूर हो जाएगा।

नगरोटा से आगे एक बाग आता था उस का नाम था, (डोगरी में) मास्तियों का बाग इस स्थान पर एक वावली भी; बड़ी सुन्दर है और बाग भी है। वास्तविकता यह है कि डोगरी में मास्ति शब्द महा सती से ही बिगड़ा है।

यहां पर अपने सतित्व की रक्षा के लिए सती हो गई खुछ स्त्रियां इस लिए इसे यहां सती बाग या जगदम्बें का बाग कहते थे। परन्तु सत्यता यहां पर कोई देवी नहीं हुई है।

कई स्थानों पर सतियां ही (पति के साथ ज़िन्दा चिता में जलने वाली स्त्री को सती कहते हैं) कुछ देर के पश्चात् वह ही देवियां बन गईं। और लोगों ने उन के मन्दिर भी बनवा दिए, फिर तो और भी देवी का स्वरूप पक्का हो जाता रहा।

इस के आगे देवा माई का मन्दिर है जिस के लिए भाट गाते हैं: पहला दर्शन कौल कंडोली, दूजा देवा माई। यहां पर भी मन्दिर देवी का बना है। यह भी एक विप्र कन्या थी नाकि कोई देवी का अवतार थी। इस के नीचे पहाडी की तलहटी में एक ढ़ोड़ें वाली जगह आती थो वहां भी कौल कंडोली की तरह एक माई थी जो माता के यात्रियों को मक्की का ढ़ोडा और माष की दाल दो आने में देती थी। यह भी कोई देवी न थी, यह तो एक यात्रियों की सेवा करने वाली माई थी।

अब पाठकों का सन्देह कौल कंडोली का दूर हो गया होगा, कि उस जमाने में कई स्थानों के नाम किसी कारणवश रखे गए थे। अब देखिए कटड़ा में एक माई फुल्लां वाली है। उस का नाम ही फुल्लां वाली माई पड़ गया हैं। वह साठ वर्ष से माता के दरबार में नित्य प्रति फूल कटड़ा से ले कर जाती है परन्तु वह देवी नहीं है।

आगे का पड़ाव था बावा जित्तो का धार उस समय कटड़ा एक तरफ कोने पर रह जाता था। बावा जित्तो धार से रसायनी गुफा के रास्ते भक्त गण गुफा में माता के दर्शन करके वापस इसी रास्ते से चले जाते थे। यह थी माता वैष्णवी की प्राचीन यात्रा।

नवीन यात्रा

अब तो नवीन यात्रा में दिशा ही बदल गई है। एक समय जम्मू के महाराजा श्री रणबीर सिंह जी इस यात्रा पर आए तो कटड़ा के लोगों ने कहा महाराज हमारी एक प्रार्थना है कि कोई ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि जिस से यात्री माता के दर्शन करके वापसी पर कटड़ा के रास्ते जाएं। महाराज ने प्रार्थना को स्वीकार करते हुए कहा ऐसा ही होगा, वापसी पर यात्री लोग कटड़ा से हो कर ही जाया करें गे।

महाराजा गुलाब सिंह से पहले रसायनी गुफा का ही रास्ता प्रचलित था। कटड़ा का रास्ता विशेष प्रसिद्ध न था। इस रास्ते से केवल कटड़ा या आस पास के कुछ गावों के लोग ही जाते थे। उस समय इस रास्ते पर चोर, डाकुओं के गिरोह रहते थे। जम्मू का एक डोगरा वीर सरदार जो अत्यन्त शूरवीर लोह पुरुष दृढ़ प्रतिज्ञ मियां डीडो के नाम से प्रसिद्ध था। वह अपने गिरोह के साथ आज के आदकुंवारी नामक स्थान पर रहता था। जब जम्मू से पुलीस पकड़ने को जाती थी तो मियां डीडो का गिरोह आदकुंवारी से ढ़ोल बजा देता था और सारे ही साथी जंगलों में भाग

जाते थे। आज की गर्भजून जो आद कुंवारी में है, इस को वह अपने मोर्चे के रूप में इस्तेमाल करते थे। अन्त में मियां डीडो मारा गया। यह राज विद्रोही था।

महाराजा गुलाब सिंह ने एक विशेष बैठक आज के सांझी छत्त पर बुलाई जिस में कुछ लोग इधर के कुछ लोग उधर के बुलाए यह स्थान सांझा था (मध्य सैंटर) में इसी लिए इस का नाम तब से सांझी छत्त पड़ गया। इस मिटिंग में वहां के लोगों के कुछ विवाद हल किए गए। महाराजा गुलाब सिंह ने एक लाख चौवालीस हज़ार कनाल रकबा माता बैष्णवी के मन्दिर (दरवार) के साथ लगा दिया। यह स्थान माता के दरवार के बाहर से ले कर कटड़ा चरणपादुका तक बनता है। पश्चात् इस पर धर्मार्थ का अधिकार हो गया। इस समय इस रास्ते पर जो यात्रा के समय दुकानें पड़ती हैं दरवार से चरणपादुका तक इन का ठेका होता है। जिस की आय इस समय धर्मार्थ विभाग को करीव १५ लाख रुपए की आमदनी होती है। तीन लाख रुपए के करीव इसी स्थान पर धर्मार्थ का खर्च होता है। शेष सारे जम्मू काश्मीर में मन्दिरों या धार्मिक स्थानों का प्रबन्ध करता है। धर्मार्थ को मुख्य आय का केवल मात्र यही बड़ा साधन है।

स्वर्गीय महाराजा रणवीर सिंह जी ने इस रास्ते को सुगम बनाया तथा सुरक्षित किया। उन्हों ने दरवार में एक सराय भी बनाई थी, जो आज तक विद्यमान है। दरवार की सीढ़ियां चढ़ते समय उस समय का एक शिलालेख भी दाएं हाथ की ओर खुदा है।

महाराजा गुलाब सिंह को राज्य प्रबन्ध के लिए बहुत कम समय मिला। ज्यादा तर मन्दिरों का सुधार एवं नया निर्माण महाराजा रणवीर सिंह जी ने ही किया। उसी समय चरणपादुका से लेकर माता के दरवार तक सारे मन्दिर या स्थान महाराजा रणवीर सिंह जी ने ही बनवाए।

यह स्थान प्राकृतिक नहीं है, बनाए गए हैं। आद कुमारी का तालाब या स्थान उस समय के पुलीस आफीसर श्री ... सिंह

अरोड़ा के माता पिता ने बनवाया था। भैरों का मन्दिर भी तभी से बना है।

इस रास्ते में बाण गंगा आती है। इस का जल बड़ा ही साफ शुद्ध निर्मल है। यह भी माता के पहाड़ से ही आता है। इसी का जल कटड़ा के लोगों को पीने के लिए नल द्वारा सप्लाई किया जाता है। कहते हैं कि माता ने सिर धोने के लिए बाण मार कर पाताल गंगा से जल निकाला था जहां से बाण लगा वहां से जो जल निकला वह बाण गंगा कहलाई और जिस से माता ने केश धोये वह बाल गंगा बन गई।

आज कल जम्मू में रेल के आ जाने से जम्मू का सम्बन्ध समग्र भारत से जुड़ गया है। अब माता के यात्री भारत के भिन्न भिन्न प्रांतों या शहरों से रेल के द्वारा सीधे जम्मू पहुंच जाते हैं। जम्मू से रेलवे स्टेशन पर से ही मिन्नी बसें सीधी कटड़ा को मिल जाती हैं। दूसरा स्थान बस के अड्डे से तो बहुत सी बसें कटड़ा जाने वाली मिल जाती हैं।

जम्मू से कटड़ा ३० मील दूर उत्तर की ओर है। कई लोग तो रात्रि को ही यात्रा कर लेते हैं, कई भक्त प्रातः चार बजे से ही यात्रा आरम्भ कर देते हैं। कटड़ा से चलते समय भक्त नारियल की भेंट माता के लिए ले लेते हैं। साथ में छत्र भी ले लेते हैं। कुछ भक्त अपने साथ ही छत्र सोने या चाँदी के बना कर ले आए होते हैं। कई भक्त मन से ही छत्र का ध्यान करके नारियल और सवा रुपया से माता का पूजन कर देते हैं। कटड़ा से चलते समय भक्तों को माता की चढ़ाई चढ़ने के लिए बांस की सोटियां (डंडे) किराये पर मिल जाते हैं। चलने में आसानी के लिए फलीट बूट भी किराये पर कटड़ा से ही मिल जाते हैं। क्यों कि दूसरे चमड़े के जूते पहाड़ पर चलने के लिए इतने अच्छे नहीं होते जितने फलीट बूट होते हैं। साथ में यह पैरों में छाले नहीं डालते। यह सब वस्तुओं को ले कर माता के सन्त (जम्मू क्षेत्र के लोग पहले माता के यात्रियों को सन्त ही कहते थे) हाथ में सोटे पकड़े हुए अकेले या समूह में माता की जयकार करते हुए दर्शनी दरवाजे से या

सड़क के रास्ते से चलना शुरु कर देते हैं। कई तो कटड़ा से ही स्नान करके, कई वाण गंगा में स्नान करके चरणपादुका मन्दिर में माता को नमस्कार करके यात्रा की सफलता की कामना करते हुए पहाड़ को चढ़ना आरम्भ कर देते हैं। सारा पहाड़ ही माता के जयकारों से गूंजता है। बाल, वृद्ध, जवान, स्त्री, पुरुष सभी जयकार करते हुए माता के पहाड़ की चढ़ाई चढ़ते हैं। उस समय का दृश्य बड़ा ही विचित्र देखने योग्य होता है। पहाड़ों में नदी जैसे चक्र खा कर सांप के समान चलती है, उसी प्रकार से यह यात्रियों की कतारें चलती हुई दिखाई देती हैं।

रास्ते में कुछ सन्त माता के दर्शन करके ऊपर से वापस आते मिलते हैं। जिन के गले में माता की लाल रंग की अट्टियां (मौली) पड़ी होती हैं। आपस के मिलाप के समय जयकार करते हुए कहते हैं: खुल्ले दर्शन करान वाली माता तेरी सदा ही जय हो। सन्त मिलावा करान वाली माता तेरी सदा ही जय हो। वग्गेयां शेरां वाली माता तेरी सदा ही जय हो। सच्चियां ज्योतां वाली माता तेरी सदा ही जय हो। सब रलमिल बोलो सांचे दरबार की जय हो। अपने भक्तां दे भंडार भरने वाली, अपने भक्तां दे कष्ट हरने वाली माता तेरी सदा ही जय हो। अपनी भक्तनियां नूं अटल सुहाग देने वाली मां तेरी सदा ही जय हो। अपने भक्तां दे दिल दियां मुरादां पूरियां करन वाली मां तेरी सदा ही जय हो। भुल्ले भड़केयां नूं सीधे रास्ते डालने वाली मां तेरीं सदा ही जय हो। सब की आशाएं पूर्ण करने वाली माता तेरी सदा ही जय हो।

ऐसे अनेक जयकार बुलाते प्रसन्न चित्त भक्त माता की चढ़ाई चढ़ते जाते हैं। आद कुंवारी में पहुंच कर भक्त विश्राम करते हैं। आद कुमारी के मन्दिर में दर्शन करते हैं। गर्भजून देखते हैं। कुछ खाना पीना हो तो यहां पर दुकानें भी हैं। एक तालाब भी है, अब तो यहां पर नलके भी लग गये हैं। इसी स्थान पर धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से एक बड़ा प्रशंसनीय कार्य हुआ है। वह है प्रताप भवन सराय का निर्माण।

इस सराय का उद्‌घाटन डा० कर्ण सिंह जी ने किया था। इस में सैंकड़ों यात्री ठहर सकते हैं।

आगे हाथी मत्था एवं कमान गोशा, सांझी छत्त, भैरों का मन्दिर तथा माता का बाग और अन्त में माता का दरबार आता है। इस स्थान पर ठहरने के लिए बड़ी बड़ी धर्मशालायें बनी हैं जिन में हज़ारों यात्री ठहर सकते हैं। इस स्थान पर स्नान करने के लिए माता के चर्णों का जल आ रहा है। स्त्रियों और पुरुषों के लिए अलग अलग स्थान बने हैं। परन्तु इस स्थान पर यात्रियों को हम कुछ सतर्क रहने की सलाह दगे। क्यों कि आजकल पुराना युग तो रहा नहीं कि तीर्थों पर जा कर झूठ न बोलें या चोरी न करें। कई यात्रियों के कपड़े ही कई बार गायब हो जाते हैं। कई बार पैसे गायब हो जाते हैं। अतः अपने कपड़ों के पास नहाते समय अवश्य किसी को खड़ा करदें। क्योंकि देवताओं के साथ राक्षसों का भी प्रवेश हो ही जाता है।

अन्दर माता की गुफा में जाने के लिए आजकल नम्बरों का सिस्टम चलता है। माता के सहन में बाहर पक्का फर्श बना हुआ है: इस के बाएं तर्फ पण्डित जी महाराज यात्रियों को कथा सुनाते हैं। जिन की सौम्य मूर्ति देखकर ही मन आनन्दित हो जाता है। बड़े अच्छे विद्वान् हैं। इस स्थान पर धार्मिक कृत्य के लिए इन से सलाह लेना उपयुक्त रह सकता है। इन की नियुक्ति मी महकमा धर्मार्थ की ओर से ही होती है।

माता के मुख्य द्वार पर अन्दर जाने के लिए रास्ता बहुत छोटा है, परन्तु अन्दर जाकर खुल जाता है। अन्दर में माता के चरणों का जल वह रहा है। जो भक्तों को सान्त्वना देता है।

यहां के पंडे ज्योतियों के द्वारा भक्तों को अन्दर दर्शनार्थ ले जाते हैं। कभी आप अकेले भी जाओ तो भी घबराने की आ-वश्यकता नहीं। अब बिजली का प्रकाश हो गया है।

गुफा के अन्दर थोड़ी ही दूर चल कर माता का मुख्य स्थान आ जाता है। इस स्थान पर तीन पिंड़ियां (मूर्तियां) हैं। जो

माता के तीन स्वरूपों को प्रकट करती हैं। महालक्ष्मी, महा-सरस्वती, महाकाली। यहां पर अपनी यथाशक्ति श्रद्धा से दक्षिणा नारियल, छत्र आदि चढ़ाते हैं भक्तगण। फिर पंडित जी से आशीर्वाद लेकर तथा प्रसाद को लेकर भक्त पुनः बाहर को उसी रास्ते से आ जाते हैं।

कभी कभी अन्दर में एक माता के पुजारी बैठे होते हैं जिन से आशर्वाद लेना कल्याणकारी होता है। यह ब्रह्मचारी अवस्था में ही हैं। पूरी तरह स्पष्ट बोल भी नहीं सकते, परन्तु सत्यवादी तथा लोभ रहित हैं। अगर इस स्थान पर माता की स्नेह दृष्टि है तो एक मात्र इन्हीं पर, यह प्रत्यक्ष सत्य समझना चाहिए।

प्राचीन समय में रसायनी गुफा से एक रास्ता माता की गुफा में आता था। माता की गुफा से एक रास्ता पांडव की गुफा को जाता है। जो थोड़ी ही दूर गुफा से उत्तर की ओर है। इस गुफा में कुछ शक्तियां रहती हैं। कभी कभी वह आपस में कई प्रकार के शास्त्रोक्त बाद बिवाद करती सुनी गई हैं। ब्रह्मचारी हरि भक्त जी इस स्थान पर रह चुके हैं। जिन्हों ने कटड़ा में योगाश्रम बनाने के लिए काफी सहयोग दिया है। वह आजकल दुर्गापुर (रामकोट) में रहते हैं (जम्मू के कठुआ जिला) माता की गुफा के सामने पश्चिम की ओर पहाड़ी पर नाले के पार पांडवों का एक स्थान है। जिसे आज भी पांडवों की पहाड़ी कहते हैं।

इस स्थान पर पत्थरों पर नगारे, तुरी, भेरी आदि के निशान हैं। कहते हैं जब कोई खतरा आने वाला होता था तो यह नगाड़े स्वयं बजना शुरु हो जाते थे।

माता के इस दिव्य स्थान पर कभी ऐसे समय भी आते हैं कि बाहर का कोई यात्री भी नहीं होता, केवल पूजा करने वाले दो चार पुजारियों को छोड़ कर। ऐसे समय में कभी कभी अन्दर से स्वयं पूजा की आवाज़ आती है। घण्टी, घड़ियाल की और आर्ती, सुगंधित धूप की सुगन्ध तथा संगीत की लय भी सुनने को मिलती है। परन्तु हर समय नहीं कभी किसी भाग्यशाली को ही सुनाई देती है सब को नहीं।

एक बार माता के चर्णों से दूध की धारा वही थी जो बाहर नहाने के स्थान तक जा कर समाप्त हो गई। इस के प्रत्यक्ष दर्शी पं० शिव राम जी हैं। जिन की मृत्यु हो चुकी है। उन का निवास कटड़ा के पास ही नंगल नामक ग्राम में था।

जैसे मनुष्य की सात्विक भावना लुप्त होती है, वैसे ही देवता भी लुप्त हो जाते हैं। *देवता तो भावना का है, न मट्टी में न ही पत्थर में है।

माता के तीसरे शिखर पर एक सूर्य कुण्ड है। यहां पर पहले एक बावा जी भी रहते थे, जिन को सूर्य कुण्ड का वावा कहते थे। यहां पर प्रातः चार बजे ही सूर्य भगवान् के दर्शन होते हैं। यह दृश्य बड़ा रमणीय होता है। प्रातः चार बजे पूर्व दिशा में सूर्य भगवान् ऐसे दिखाई देते हैं मानो कोई सुन्दर बालक खेल रहा हो।

सूर्य कुण्ड का दृश्य बड़ा ही रमणीय है परन्तु यह स्थान बड़ा ही कठिन है। इस स्थान पर जाने के लिए कोई स्थानीय गाईड (मार्गदर्शक) होना चाहिए। स्वयं किसी यात्री को अकेले इस स्थान पर नहीं जाना चाहिए। इस कुण्ड पर बहुत कम पुरुष जा सकते हैं जो दृढ़ विश्वासी, सहसी हों। कमजोर दिल वाले यहां पर जा ही नहीं सकते।

माता के त्रिकूट पर्वत के ऊपरी भाग में ठहरने के लिए कोई विशेष जगह नहीं है। इस पर हिरण, चीते, भालू आदि कई जानवर पाए जाते हैं। कई प्रकार के पक्षी रंग विरंगे देखने को मिलते हैं। समुद्रतल से इस की ऊंचाई ६००० फुट बतलाई जाती है। इस स्थान पर कई प्रकार की आवाजें भी सुनाई देती हैं। इस स्थान पर कई विचित्र बातें सुनने को मिलती हैं।

माता के जंगल में कभी कभी शेर का भ्रमण भी होता है। त्रिकूट पर्वत की कन्दराओं में कई महात्मा तप कर रहे हैं। कभी कभी किसी भाग्यशाली को ही इन महात्माओं के दर्शन होते हैं।

---

* भावना ही विद्यते देवो न पाषाणे न मृत्तिके।

यह महात्मा संसार के कोलाहल से दूर शांत, एकांत स्थान पर तप कर रहे हैं। जैसे भगवती संसार के कोलाहल से दूर शांत, एकांत गुफा में निवास कर रही हैं।

कभी कभी माता की गुफा के पास तथा इन शिखरों पर भी विचित्र ध्वनियां सुनने को मिलती हैं।

आजकल सांझी छत्त से नई सड़क निकाली गई है। जो भैरव घाटी के नीचे से जाती है। अब भैरों का मन्दिर उप्पर रह जाता है। आदकुंवारी के नीचे यात्रा के आरम्भ स्थान चरण-पादुका ज़ एक मील की दूरी पर उत्तर दिशा में छच्छरें नाम का स्थान बड़ा ही सुन्दर है । यहां पर वाण गंगा का जल माता का यशोगान करता हुआ, कल कल शब्द से कानों को आनन्दित करता हुआ चरणपादुका में माता के चरणों का प्रक्षालन (धोने) करने के लिए उतावलेपन से वहता हुआ दिखाई देता है। यहां पर खड़े होने से ऐसा दिखाई देता है, मानो कोई भक्त माता के दर्शनों के लिए उतावला हो रहा हो, और जिस की आंखों से प्रेमश्रु वह रहे हों। यहीं से बाणगंगा का जल कटड़ा के लोगों के हृदय को आनन्दित एवं पापताप से मुक्त करने हेतु सीमाबद्ध हो कर नल यन्त्र के द्वारा दर्शनी द्वार पर जा कर माता की जयकार करता हुआ परोपकार की भावना से पानी के टैंकों से हो कर कटड़ा के प्रत्येक घरों में जाता है। यह दृश्य ऐसा दिखाई देता है, मानो वाणगंगा का जल नल द्वारा माता का शुभ सन्देश पहुंचाने माता के पुत्रों के घरों में जा रहा हो।

दर्शनीद्वार तथा विचित्र घटना

आज से एक दर्जन वर्ष पूर्व जम्मू काश्मीर के मुख्य मन्त्री श्री वक्शी गुलाम मुहम्मद महोदय इस दर्शनी द्वार पर आए थे। एक दिन की घटना है कि वक्शी साहब अपनी कोठी जम्मू में सोए थे, रात्रि को मुख्य मन्त्री ने एक स्वप्न देखा कि सिंह वाहनी मां

भगवती दुर्गा उन के पास खड़ी हैं और उन के कान खींच रही है, तथा यह भी कह रही है कि बक्शी उठ कर चल, और चल कर देख, मेरा रास्ता कटड़ा से ले कर दरबार तक कितना कठिन और ख़राब है। चल कर उस को ठीक कराने का वचन दे।

यह स्वप्न देखते देखते प्रातः काल हो गया। धीरे धीरे पक्षी कलरव करने लगे। पूर्व दिशा में लाली आ गई और सूर्य भगवान् को उदय होने में थोड़ी ही देर रह गई। मुख्य मन्त्री महोदय ने उठते ही शंका-शौच से निवृत्त हो कर स्नान किया और शुद्ध वस्त्र पहन कर बिना जलपान किए कुछ निजी कर्मचारियों को साथ ले कर कार द्वारा कटड़ा में पहुंच गए। यहां तक कार जा सकती थी गई, आगे कार से उतर कर नंगे पांव ही चल पड़े। उस समय कटड़ा के सैंकड़ों लोग अथवा विशाल जन-समुदाय साथ हो लिया। श्रद्धा तथा उत्साह भरे कदमों के द्वारा थोड़े ही समय में बख्शी साहब दर्शनी द्वार पर पहुंच गए।

इस स्थान पर खड़े हो कर माता के पावन त्रिकूट पर्वत की ओर मुख कर के सादर नमस्कार किया। फिर रात्रि का अपना स्वप्न सब लोगों को सुनाया। वहां से छलांग लगा कर नीचे सीढ़ियों में खड़े हो कर कहा कि इसी स्थान से माता के रास्ते का प्रारम्भ होना चाहिए। उन्हों ने कहा कि मैंने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक मैं माता के रास्ते को बनाने का आर्डर न दे लूंगा तब तक अन्नजल ग्रहण न करूंगा। और हुआ भी ऐसे ही। बख्शी साहब ने इस के बाद ही अन्न, जल ग्रहण किया।

वैसे तो महाराजा हरि सिंह जी ने भी इस रास्ते का नक्शा बनाया था। परन्तु दूसरे महायुद्ध के कारण यह काम स्थगित ही रहा। महामाया मां वैष्णवी, जिस को यश देना चाहे उस को ही मिल सकता है अन्य को नहीं।

कटड़ा का उस दिन का दृश्य देख कर हमें मुगल सम्राट अकबर की याद आ रही थी, कि एक दिन वह भी नंगे पांव माता ज्वाला भगवती जी के दर्शनों को गए थे। और उन्हों ने वहां पर

सवा मन सोने का छत्र चढ़ाया था ।

वक्शी गुलाम मुहम्मद जी ने माता के यात्रियों के लिए सायं भ्रमनार्थ (शाम को घूमने के लिए) दर्शनी दरबाजे से दक्षिण की ओर एक विशाल उद्यान (पार्क) बनवाया। जिस से माता की यात्रा पर आने वाले भक्त गण कम से कम एक दिन कटड़ा में विश्राम कर के पार्क की शोभा देख सकें। और अपना मन आनन्दित कर सकें। इसी उद्देश्य से इस विशाल उद्यान का निर्माण किया था। यह उद्यान आज यात्रियों के लिए एक आकर्षण केन्द्र बना हुआ है। यह पार्क जम्मू-काश्मीर सरकार के नियन्त्रण में है। इस पार्क में आम तथा चिनार के वृक्षों की छाया है। दोपहर को पथिकों तथा यात्रियों की थकावट को दूर करते हुए मन को आनन्दित करती है।

जब चिनार वृक्ष और आम्र की छाया पार्क में एक दूसरे की ओर बढ़ती है तो ऐसा लगता है कि मानो एक बहिन काश्मीर की ओर एक जम्मू की परस्पर गले मिल रही हों। *

इस पार्क में पश्चिम भाग में टूरिज़म की ओर से एक डाकबंगला बना है। जो शायद यात्रियों की सुख सुविधा को देखते हुए ही बनाया हो। यह डाकबंगला बहुत ही रमणीय तथा देखने योग्य है। पार्क से पूर्व की ओर एक योगाश्रम बना है। जिसका बनाने का लक्ष्य ग्यारह लाख का था, परन्तु अभी अधूरा ही पड़ा है। कुछ कमरे यहां अवश्य बने हैं। इस समय आश्रम तो यहां आवश्य है परन्तु योग नहीं (योगाश्रम)।

इस के निर्माता ब्रह्मचारी श्री हरिभक्त जी और श्री धीरेन्द्र जी थे। इस समय श्री धीरेन्द्र जी ने शुद्धमहादेव - मानतलाई में बड़ा विशाल योग का केन्द्र बनाया है। यहां पर देश विदेश से जिज्ञासु आते हैं। यह स्थान चन्दनावती रियासत (चिन्हाणी) में है। कुद्द से दस मील की दूरी पर पूर्व की ओर है।

---

* चिनार का वृक्ष श्रीनगर में ही होता है और आम का जम्मू में होता है।

श्री हरि भक्त जी ने दुर्गापुर (गुजरू नगरोटा) में अपना आश्रम बनाया है। यदि यह दोनों महात्मा कटड़ा में रहते तो कटड़ा का नक्शा और ही होता। भारतीय सरकार यदि इस योगाश्रम कटड़ा में संस्कृत विद्यालय या यात्रियों के सुखार्थ एक बड़ा आयुर्वेद औषधालय बना दे तो जनता का बहुत ही उपकार हो सकता है।

दर्शनी द्वार से नीचे एक गुफा थी उस में एक महात्मा सन्यासी ४० दिन तक उपवास करते रहे थे। जिस दिन उन्हों ने अपना व्रत खोला, उसी दिन मैं और मेरे मित्र पं० श्यामलाल शर्मा प्रिंसिपल ओरियण्टल एकाडमी में थे। वर्तमान प्रधान सम्पादक कल्चर एकाडमी जम्मू में हैं। सायंकाल का समय था हम उस गुफा में जाने लगे तो उन के एक शिष्य ने रोका, परन्तु हम ने अनुनय विनय किया और कहा कि हम जम्मू से आए हैं तो हमें आज्ञा लिल गई।

अन्दर गुफा में प्रवेश किया, दर्शन किए और नमस्कार भी किया। महात्मा जी के शरीर का वर्ण गौर था, सुवर्णमय कांति थी, मुख पर विशेष प्रकाश था, वह मद्रासी थे परन्तु रंग से काश्मीरी दिखाई देते थे। केवल सस्कृत और अंग्रेजी जानते थे अन्य भाषा में बोल नहीं सकते थे। सौभाग्य से मैं सस्कृत जानता था और मेरे मित्र प० श्यामलाल जी अंग्रेज़ी के अच्छे जानकार थे काम बन गया, हम ने बहुत सी बात पूछीं, अन्त में हम ने पूछा महाराज संसार में ऐसे कितने महात्मा हैं जिनका परमात्मा का साक्षात्कार है।

उन्हों ने उत्तर दिया कि केवल बारह-चौदह ही महात्मा ऐसे हैं जिन को ईश्वर का साक्षात्कार है। ऐसे इन गुफाओं में कई महात्माओं से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

पार्क से नीचे बाज़ार के बाएं कोने पर स्वर्गीय स्मामी नित्या नन्द जी की समाधी दर्शनीय है। यह बड़े उच्चकोटि के योगी थे। इस के साथ ही धर्मार्थ की एक सराय है जिस में यात्री

निवास कर सकते हैं। इस में एक महालक्ष्मी जी का सुन्दर मन्दिर भी बना है। आजकल यात्री बस सीधी यहां पर जा सकती है। अब तो कटड़ा में यात्रियों की शुख सुबिधा के लिए प्राईवेट, धर्मार्थ तथा सरकारी कई धर्मशालायें बन चुकी हैं।

कटड़ा में बस का अड्डा भी पक्का सुन्दर बना है। इसी स्थान पर एक सरकारी ऐलोपैथिक हस्पताल भी बना है। हस्पताल के दायें तार घर एवं डाकघर भी बने हैं। इस स्थान से यात्री सुगमता से अपने इष्ट मित्रों को टेलीफोन, तार आदि भेज सकते हैं।

यात्रियों की सहूलियत के लिए अब कटड़ा में एक बैंक भी खुल गया है। जिस की बिल्डिग देखने योग्य है। अड्डा से दक्षिण की ओर एक श्रीधर सभा की सात मंजिला बिल्डिग बन रही है। इस के नीचे थोड़ी दूरी पर चाय का बाग है जो कटड़ा की एक विशेषता है। इस के साथ ही काली देवी का ऊंचे टीले पर मन्दिर बना है।

कटड़ा के उत्तर में दर्शनी दरवाजे से उत्तर पूर्व में एक शंकराचार्य की पहाड़ी बनाने की योजना भी विचाराधीन है।

बस अड्डा से पूर्व की ओर भूमका नाम की नदी बहती है। जिस के किनारे कभी पं० श्रीधर जी निवास करते थे। इनको भगवती का साक्षात्कार हुआ था। इस नदी पर अब भी कई महात्मा आ कर ठहरते हैं। इस नदी का जल बड़ा ही पाचक तथा स्वादू है। यहां से एक किलोमीटर पूर्व की ओर चम्बा नाम का गांव है। जिस में चम्बा के वृक्ष आज भी देखने को मिलते हैं। फूलों के खिलने पर इस की शोभा देखने योग्य होती है। कटड़ा में एक दिन ठहरने के पश्चात् यात्री जम्मू के लिए प्रस्थान कर जाते हैं।

जम्मू में माता के यात्रियों को ठहरने के लिए स्थान

डोगरा ब्राह्मण प्रतिनिधी सभा। महाजन सभा। गीता भवन। श्री रघुनाथ मन्दिर। सुन्दर सिंह जी की धर्मशाला। विनायक मिश्रा की धर्मशालाएं विद्यमान हैं।

जम्मू में दर्शनीय स्थान

सब से बड़ा मन्दिर श्री रघुनाथ जी का है जो जम्मू के डोगरा राजाओं की विशेष देन है। इस मन्दिर में श्री राम, श्री सीता तथा श्री लक्ष्मण जी की मूर्तियां विद्यमान हैं। इस मन्दिर में भगवान् परशुराम जी को छोड़कर सभी अवतारों की (चित्र) मूर्तियां विद्यमान हैं। जम्मू नगर का सब से विशाल मन्दिर यही है। इस मन्दिर को बने सौ वर्ष से ज्यादा हो गया है।

इस मन्दिर के इर्द-गिर्द छोटे छोटे १४ और मन्दिर हैं। कभी इस मन्दिर में संस्कृत का विशाल विद्यालय चलता था। प्राज्ञ, विशारद, शास्त्री एवं कर्मकाण्ड की छात्रों को शिक्षा दी जाती थी। बड़े बड़े उच्चकोटि के विद्वान् इस विद्यालय में पढ़ाते थे। चारों वेदों के ज्ञाता या तो काशी में या जम्मू के श्री रघुनाथ संस्कृत महाविद्यालय में मिलते थे।

स्वर्गीय महाराजा रणवीर सिंह की धार्मिक कार्यों में विशेष रुचि थी। ऐसे महाराजा सारे भारतवर्ष में बहुत कम हुए हैं। मन्दिर के नाम से ही सं० का विद्यालय तथा मन्दिर के नाम से ही डोगरा फौज की फर्स्ट बटालियन का नाम रघुप्रताप रखा था, जो १६१४ में जर्मन के साथ लड़ी थी। और केरण का मोर्चा फतह किया था। द्वितीय महायुद्ध में भी इस ने विशेष वीरता दिखाई थी। इस को आज फर्स्ट डोगरा कहा जाता है। जर्मन का जीता हुआ झंडा और जर्मन की जीती हुई तोपें अभी भी इस के हैड क्वार्टर पर विद्यमान हैं।

इस मन्दिर के उत्तर में एक बहुत बड़ा संस्कृत पुस्तकालय है जिस में छः हज़ार पांडु लिपि में पुस्तकें विद्यमान हैं। एक पुस्तक एक हज़ार वर्ष पुरानी हस्तलिखित है, जो कागज पर लिखी हुई है। जबकि अंग्रेज का दावा था कि छः सौ वर्ष पूर्व यहां पर कागज था ही नहीं। यह पुस्तक सारे भारतवर्ष में अनुपलब्ध है।

मन्दिर के पूर्व की ओर स्वर्गीय महाराजा रणवीर सिंह जी

की समाधी भी दर्शनीय है। इस के साथ ही दक्षिण में एक नई महारानी तारा देवी स्मारक धर्मशाला भी बनी है। इस मन्दिर में इस समय संस्कृत की छोटी कक्षाओं की पढ़ाई होती हैं।

इस मन्दिर में दुर्गा भगवती के कई स्वरूपों के चित्र हैं, राग-रागनियों के भी चित्र हैं। यहां एक चित्र हनुमान जी का है इस की जितनी कीमत डाली जाए उतनी ही थोड़ी है। सारा चित्र श्री रामनाम से ही अंकित है। इस मन्दिर का घेरा कई एकड़ भूमि में है।

इस विशाल मन्दिर की नींव तो महाराजा गुलाबसिंह जी ने रखी थी। परन्तु इस को पूरा किया श्री रणवीर सिंह जी ने। यह मन्दिर इसी स्थान पर क्यों बना ?

एक दिन महाराजा गुलाबसिंह जी शिकार के लिए जा रहे थे तो रास्ते में एक छोटा तालाब मिला, जिस पर गाय और शेर इकट्ठे पानी पी रहे थे। यह दृश्य देख कर महाराजा गुलाबसिंह चकित रह गए। मन में सोचा यह क्या ? मैं एक स्वप्न देख रहा हूं। शेर और गाय इकट्ठे पानी पी रहे हैं :

थोड़ी देर के बाद पानी पी कर दोनों गंतव्य स्थान को चले गए। पास ही एक धूनी से धुआं भी उठ रहा था परन्तु पास में व्यक्ति कोई भी नहीं था। महाराजा गुलाब सिंह भी अपने यथेष्ठ लक्ष की ओर चले गए परन्तु मन में इस घटना की चर्चा बनी रही। वार वार मन सोच रहा था शेर और गाय एक साथ पानी पी रहे थे। धूनी से धुआं उठ रहा था परन्तु पास कोई न था ?

कई दिन बीत गए परन्तु कुछ भी पता न चला। एक दिन महाराजा ने अपने कुछ कर्मचारी भेज कर पता मंगवाया कि देखो उस तालाब पर धुआं अब भी है या नहीं। तलाश के बाद उत्तर मिला हां वहां पर एक महात्मा रहते हैं। महाराज ने दर्शनों के लिए महात्मा को बुलाया।

महात्मा जी ने कहा कि हम तो अयोध्या में लाखों रुपयों की गद्दी छोड़ कर आए हैं। हम महाराजा के पास जा कर क्या

करें गे। अगर किसी को जरूरत हो तो स्वयं मेरे पास आए। यह वैरागी बाबा प्रेमदास जी के भाई श्री रामदास जी थे।

एक दिन महाराजा गुलाब सिंह जी स्वयं वहां पर दर्शनार्थ गए, उन्हों ने बाबा जी को प्रणाम किया, कुशलक्षेम पूछने के पश्चात् अपनी उस दिन की विचित्र घटना सुनाई।

महात्मा जी ने कहा राजन् यह स्थान प्राचीन सिद्धों का है। इस स्थान पर हिंसक पशु भी अहिंसक बन जाते हैं।

महाराजा ने कहा महात्मा जी मेरे योग्य सेवा बतलाई जाए।

बाबा जी ने कहा तुम्हारे लिए सेवा है कि इसी स्थान पर श्री राम जी का दरबार बनाया जाए। बस फिर क्या था। राजा का आदेश पाते ही कार्य आरम्भ हो गया। स्वयं महाराजा गुलाब सिंह ने इस मन्दिर का शिला न्यास रखा। जिसे महाराजा रणबीर सिंह जी ने संपूर्ण किया। जिस स्थान पर बड़े मन्दिर के पीछे एक पानी टैंक (हौज, चबच्चा) है इसी स्थान पर तालाब था।

इस मन्दिर के थोड़े फासले पर जुम्मा नाम का मेघ (हरिजन) रहता था यह उसी की जमीन थी। जम्मू की धरती के मालिक मेघ (हरिजन) थे। जुम्मा ने एक चीते का बच्चा पाला था जो भेड, बकरी तथा गायों के साथ जंगल में चला जाता था, यह वही चीते का बच्चा गाय के साथ पानी पी रहा था। उस से जमीन मांगी गई और मन्दिर की स्थापना की गई।

एक हरिजन ९५ वर्ष की आयु का ४७ से पहले इस मन्दिर की कई घटनाएं सुनाता था। उस का पिता एक आना मज़दूरी ले कर इस मन्दिर में काम करता था। वह कहता था कि हमारा बाप सुनाता था कि काम करते केवल राम राम जपने को ही कहा गया था। कैसे धर्मातमा वह राजा थे। कहां चले गए वह, उन की गवाही देने वाली धरती एवं गगन चुम्बी स्वर्ण कलशें वाली मन्दिरों की ऊंची ऊंची चोटियां पुकार पुकार कर कह रही हैं कि वह राजा हमें बनाने वाले मरे नहीं हैं अपितु यश रूपी शरीर से आज भी जिन्दा हैं। यह हिन्दु संस्कृति के चिन्ह उन्हीं कां गुणानुवाद कर रहे हैं।

श्री रघुनाथ मन्दिर से पूर्व की ओर थोड़ी दूरी पर पंचवक्त्र भगवान् शिव का मन्दिर है । इस को रुपयों वाला मन्दिर भी कहते हैं। जम्मू में यह भी प्रसिद्ध मन्दिर है। इस के नए महन्त श्री १०८ परशु राम जी गिरि महाराज हैं, जो संस्कृत के शास्त्री एवं उच्च कोटि के आदर्श सन्त हैं।

इस मन्दिर में गौशाला भी विद्यमान है। गौओं का दूध आए हुए मन्दिर में सन्त महात्माओं को दिया जाता है।

महन्त जी ने कई विद्यार्थी मन्दिर में रखे हैं। जिन को अन्न, वस्त्र के अतिरिक्त पाठ्य पुस्तकें एवं बजीफा भी देते हैं। इन के द्वारा अन्य कई स्थान सहयोग प्राप्त हैं । कई बार मन्दिर में चढ़ी हुई सामग्री आटा, चावल, फल, फूल, वस्त्र आदि अन्ध-आश्रम, वृद्ध आश्रम में स्वयं वांट देते हैं।

इस मन्दिर में बड़े बड़े अच्छे सन्त महात्मा बाहर से आए हुए देखने को मिलते हैं । इस मन्दिर में आपको हिरण भी खेलते मिलें गे। ऐसा प्रतीत होता है मानों पिछले जन्म के शिव के गण ही उपस्थित हुए हों । प्रातः मयूर (मोर) भी नाचते हुए इस मन्दिर में मिलें गे । मानो नृत्य के द्वारा भगवान् शंकर को प्रसन्न किया जा रहा है । इस मन्दिर की दक्षिण दिशा में एक भगवती श्री दुर्गा माता का भी मन्दिर दर्शनीय है। सायं जब इस मन्दिर में आरती होती है तो एक समय बंध जाता है। बड़ी बड़ी दूर से चल कर भक्तगण आरती में शामिल होते हैं।

इस मन्दिर में चांदी के रुपए संगमरमर के पत्थरों पर लगे थे। मन्दिर में पैसे का जैसा सदुपयोग होना चाहिए इस मन्दिर में अभी तक वैसा ही होता है। भविष्य का पता नहीं। शिवरात्रि को इस मन्दिर में मेला लगता है। रात्रि को चार बार भगवान् शंकर को विधिपूर्वक पूजा की जाती है।

इस मन्दिर के दक्षिण में एक बाग भी विद्यमान है जो मन्दिर की शोभा को बढ़ाता है। बाहिर कुछ दुकानें भी मन्दिर की हैं जिनकी आय से मन्दिर का खर्चा चलता है।

जब भगवान् शंकर के मुख से पांच तत्व पृथ्वी, वायु, जल, तेज और आकाश निकले तो उन का नाम पंच वक्त्र महादेव पड़ गया। पांच मुख वाले महादेव। वास्तव में एक ही मुख है। पांच तत्वों से ही सृष्टि बनी है। इन के अलग होने पर नष्ट हो जाती है।

तीसरा स्थान जम्मू में देखने योग्य पीर खोह (गुफा) है। इस स्थान के महन्त नाथ सम्प्रदाय के हैं, और हैं हिन्दू संस्कृति के परम उमासक। तवी नदी के किनारे जम्मू नगर के पूर्वी तट पर यह स्थान विद्यमान है। पहाड़ी के अन्दर एक गुफा है जिस के अन्दर कुछ ही सीढ़ियां उतर कर एक कमरा बना है जिस में भगवान् शिव का सुन्दर लिंग स्थापित हैं। यह पत्थर खोद कर ही कमरा जैसा बनाया गया है। बड़ा ही विचित्र स्थान है। इस स्थान पर यदि आप धार्मिक बिचार रखते हैं तो कुछ ही क्षण बैठने से मन में विशेष शान्ति का अनुभव करें गे। प्रातः सायं आरती के समय इस मन्दिर की शोभा भी दर्शनीय होती है। इस शिवलिंग से आगे उत्तर की ओर गुफा चली गई है, जो इस समय बन्द है।

कहते हैं प्राचीन काल में यह रास्ता काश्मीर को जाता था गुफा के बाहर पहाड़ खोद कर पक्के कमरे रहने योग्य बनाए गये हैं। इस मन्दिर के उत्तर में एक सुन्दर पानी की विशाल टैंकी भी बनी है। इस के नीचे सूर्यपुत्री तवी नदी कल कल शब्द करती हुई बहती हैं। प्रातः काल सैंकड़ों नर-नारी इस घाट पर स्नान करने को आते हैं। इस घाट तक जम्मू की नगरपालिका ने विजली का विशेष प्रबन्ध किया है।

मन्दिर के साथ नीचे बहुत सी जमीन भी बनाई गई है। जिस में सब्ज़ी पैदा की जाती है। यह दोनों वस्तुएं मन्दिर में साधु अभ्यगतों एवं छात्रों के काम में आती हैं। यहां के महन्त यद्यपि वृद्ध हैं फिर भी खेती का काम स्वयं करते हैं। और देख भाल भी करते हैं। यहां एक व्यायामशाला भी महन्त जी ने बनाई है। यहां पर एक गौशाला भी है जिस का दूध साधु अभ्यगतों

तथा मन्दिर में शिवपूजन के लिए प्रयुक्त होता है।

पीर खोह गुफा को दूसरा रास्ता पीर मिठा बाज़ार से पंच वक्त्र मन्दिर से उत्तर की ओर मिट्ठा नाम के नाथ पीर हुए हैं। नाथों को पर भी कहा जाता है। जैसे पीर खोह का नाम है। कई गलती से इस को मुसलमानों का स्थान समझ लेते हैं जो उचित नहीं हैं। एक रास्ता पक्की ढक्की से भी जाता है।

चौथा स्थान देखने योग्य पक्का डंगा बाजार में श्री महालक्ष्मी जी का मन्दिर है। यह मन्दिर कोई बड़ा विशाल नहीं है। परन्तु इस में जो महालक्ष्मी जी की मूर्ति है वह अति रमणीय एवं आकर्षक है। मन्रिर के दूसरे छत्त पर यह मूर्ति स्थापित है इस के प्रांगण में एक विशाल पीपल का वृक्ष है जो मन्दिर की शोभा को बढ़ाता है। नीचे एक हनुमान जी का मन्दिर भी है।

यहां पर माता के यात्री कई वार सारी रात्रि भर माता का जागरण करते हैं। जम्मू नगर के उत्तरी क्षेत्र में यह मन्दिर केन्द्र (सैंटर) में पड़ता है। प्रातः सायं जब इस मन्दिर में पूजा होती है तो एक सुहावना दृश्य उपस्थित हो जाता है।

इस मन्दिर के पुजारी गृहस्थी हैं और कथा वार्ता करते रहते हैं। सत्संग भी होता रहता है। यहां स्त्रियां बडी संख्या में आती हैं, समय समय पर यहां नगर के लोग तथा बाहर से आये यात्री-गण भंडारे करते रहते हैं।

पांचवां दर्शनीय स्थान : पुरानी मण्डी का मन्दिर भी शहर के मध्य भाग में स्थित है और इस की गणना भी बड़े मन्दिरों में की जाती है। इस का निर्माण स्वर्गीय महारानी बन्दरालनी जी ने करवाया था। यहां पर पहले एक संस्कृत की पाठशाला भी चलती थी। यहां पर दर्जनों कमरे बने हैं। यह इमारत दो मंजिला है। परन्तु भगवान् श्री रामचन्द्र जी का मन्दिर नीचे प्रांगण के मध्य में शोभायमान है। इस में श्री राम, लक्ष्मण तथा सीता जी की सुन्दर मूर्तिया संगमरमर की बनी हैं। यहां दीवारों पर पुरानी चित्रकारी भी देखने योग्य है।

यहां साधु, अभ्यागतों के लिए भी इस मन्दिर में क्षेत्र (लंगर) खुला है। जो अन्न यहां आता है उस का सदुपयोग किया जात्ता है। यहां के पहले महन्त गोलोक वासी हो चुके हैं। इस समय उनके शिष्य ही महन्त हैं। वह कुरुक्षेत्र, गीता हाई स्कूल के शिक्षा प्राप्त हैं।

यह गद्दी वैरागी सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखती है। यहां के वर्तमान महन्त जी की विशेषता सौम्य मूर्ति, युवावस्था, हिन्दू संस्कृति तथा संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग (प्रेम) मधुरभाषी अपने निजी खर्च से कई छात्रों को उच्च शिक्षा दिला चुके हैं। कुछ वर्तमान में प्राप्त कर रहे हैं। शास्त्री, एम० ए० आचार्य, डाक्टरेट, आदि आदि परिक्षाएं पास करके छात्र महन्त जी की कृपा से इस समय उच्च पदों पर सुशोभित हो रहे हैं। भविष्य में महन्त जी फिर से संस्कृत एवं हिन्दी की कक्षाएं मन्दिर में खोलना चाहते हैं।

छटा स्थान : श्री गीता भवन भी अपना विशेष महत्व रखता है। यह स्थान श्री सनातन धर्म सभा ने बनबाया है। इस में यात्रियों के ठहरने के लिए सराय भी है। इस में श्री सत्य-नारायण जी का मन्दिर बना हुआ है। इस के साथ ही एक सत्संग हाल भी बना है, जिस में नित्यप्रति प्रातः संकीर्तन तथा कथा होती है। कई वर्षों से यह पवित्र कार्य चल रहा है। यदि माता के भक्तों को गीता भवन में ठहरने का मौका मिले तो प्रातः कथा में आवश्य ही सम्मिलित होना चाहिए। यहां के कथा बाचक पं० जी बहुत ही विद्वान् एवं मधुर-भाषी तथा पुराणों के परिगत हैं।

इसी प्रांगण में पूर्व की ओर श्री सनातन धर्म महिला महा विद्यालय (एस० डी० वुमेन कालेज) भी बना है। इस स्थान पर श्री सनातन धर्म सभा का प्रधान कार्यालय है। महाराजा डा० कर्ण सिंह ने यह स्थान दान रूप में सनातन धर्म सभा को दिया है। इस भवन (गीता भवन) का शिलान्यास महारानी यशोराज्य लक्ष्मी ने किया है।

यहां पर यात्रियों की सुबिधा के लिए स्नानागार तथा

वातायनों वाले कमरे भी बने हैं। पहले इस स्थान पर गौशाला भी थी। परन्तु अब उसे वेद मन्दिर के पास ले जाया गया है।

सातवां स्थान : मन्दिर श्री रणवीरेश्वर जी का है। यह गीता भवन के पश्चिम भाग में स्थित है। जम्मू के मन्दिरों में यह भी विशाल मन्दिर है। इस मन्दिर के सुवर्ण कलश भी गगन चुम्बी (आकाश को छूने वाले) हैं। पाकिस्तान से पूर्व स्यालकोट से आते दूर से ही दिखाई देते थे।

तीसरी मंजिल पर यह मन्दिर बना है। परन्तु असली मन्दिर की नींव जमीन से ही उठाई गई है। इस मन्दिर की भगवान् शिव तथा पार्वती जी की मूर्ति दर्शनीय है। यहां पर बिल्लौर पत्थर के शिवलिंग भी विद्यमान हैं। दूसरे शिवलिंग मानव शरीर जैसे भी देखने योग्य हैं। बाहर स्वामी कार्तिक जी की मूर्ति भी बनी है। यहां पर एक विशाल घण्टा लगा हुआ है।

अब पहले नन्दीगण के स्थान पर अब धर्मार्थ ट्रस्ट ने एक पीतल का नन्दीगण स्थापित किया है। जिस की स्थापना महाराजा कर्णसिंह जी ने अपने कर कमलों से की है। इस मन्दिर में भी कई कमरे यात्रियों के लिए बने हैं। पूर्व काल में जम्मू के डोगरा राजाओं ने बड़े बड़े मन्दिर बना कर प्रत्येक मन्दिर के साथ संस्कृत पाठशाला के लिए कमरे बनाए हुए हैं।

पहले इस मन्दिर के महन्त श्री महादेव गिरि जी ही अमर नाथ छड़ी के श्री महन्त थे, परन्तु अब उन की मृत्यु हो गई है। उन के स्थान पर दूसरे महन्त आए हैं जो मन्दिर का विशेष सुधार करने में संलग्न हैं। यहां यह मन्दिर स्थित है इस मार्ग को शाला-मार रोड़ कहते हैं।

आठवां स्थान : गुलाव भवन है यह श्री रणवीरेश्वर मन्दिर के साथ ही अर्थात् शालामार रोड़ पर ही गुलाब भवन विद्यमान है। यह स्थान (भवन) महाराजा गुलाब सिंह के नाम पर बनाया गया है, जिस ने भारत की सीमाओं को हिमालय के उस पार तक पहुंचा दिया है। अगर सर्वप्रथम हिमालय की सब से ऊंची चोटी गौरी-

शंकर (माऊंट ऐवरैस्ट) को तेनसिंह ने बिजित किया है तो ऐसे ही सर्व प्रथम भारत की सीमा को निर्धारित करने के लिए महाराजा गुलाब सिंह ने हिमालय को पार करके तिब्बत देश पर विजय प्राप्त करके मानसरोवर झील पर भारतीय ध्वज फहराया था। आज भी उस स्थान पर जरनल जोराबर सिंह की समाधी बतलाती है कि कभी महाराजा गुलाब सिंह की सेना ने इस प्रदेश को विजय किया था।

इस भवन में महाराजा गुलाब सिंह की एक विशाल मूर्ति लगी है। इस स्थान पर भारतीय विद्या भवन बम्बई की संस्कृत परीक्षाओं का केन्द्र भवन भी है। इसी स्थान पर टूरिज़म का सैन्टर भी बना है। यात्री यहां से यात्रा सम्बन्धी स्थानों की विशेष जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

नौवां स्थान : वाहू का दुर्ग (किला) है। जम्मू नगर से पूर्व की ओर तवी नदी के किनारे पहाड़ी पर किले के बीच महा काली का मन्दिर विद्यमान है। यह किला सैंकड़ों वर्ष पुराना बना हुआ है। एक मत तो यह बतलाता है कि राजा बाहूलोचन ने बनाया था। दूसरा मत ला० विधि चन्द द्वारा निर्मित देवीका महात्म्य में लिखा है कि राजा संग्राम सिंह और राजा परशुराम द्वारा बादशाह जहांगीर के समय बनाया गया है।

इस काली के मन्दिर में प्रति दिन सैंकड़ों यात्री दर्शनार्थ जाते हैं। यह माता बड़ी चमत्कार बाली है। जम्मू प्रांत के नर नारी कई प्रकार की मन्नतें इस मन्दिर में मानते हैं। जिन की मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं, वह इस मन्दिर में जीवित बकरियां चढ़ाते हैं। महाकाली होने पर भी सात्विकी देवी है। मांस की वलि नहीं लेती है। पुराने समय में जम्मू नगर की रक्षा के लिए यह किला प्रयाप्त था। रविबार को वीर सैनिक भी अपनी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने सैंकड़ों की संख्या में जाते हैं। यह स्थान बड़ा ही प्रत्यक्ष है।

युद्ध के समय लोगों की ऐसी धारणा रही है कि बाहवे वाली

माता जम्मू नगर की रक्षा करती है। ऐसा सुनने में आता रहा है कि जब पाकिस्तानी मिराज़ जहाज़ बम्बारमेंट करने यहां आते थे तो उन्हें केवल जल ही जल दिखाई देता था। तवी का पुल नजर ही नहीं आता था।

हमारी सरकार ने बाहू दुग तक सीटी बसों का प्रचलन प्रेड ग्रौंड से किया है।

जम्मू में पुराना सचिवालय (मण्डी मुबारिक), पैलिस रामनगर (महाराजा का महल) देखने यौग्या है। इस के अतिरिक्त गांधी नगर का मन्दिर भी बहुत सुन्दर है। यह मन्दिर ११ कनाल भूमि के घेरे में बना है। इस में मुख्य मन्दिर श्री लक्ष्मीनारायण जी का हैं। मूर्तियां बड़ी ही अद्‌भुत् संगमरमर की बनी हुई हैं। यहां एक मन्दिर शिव भगवान् का भी बना हुआ है। गणेश तथा हनुमान जी की मूर्तियां भी स्थापित हैं। एक सत्संग हाल भी बना है। जिस में प्रतिदिन सत्संग होता है। दक्षिण की ओर जंजघर बना हुआ है। इस मन्दिर के खर्चे के लिए २४ दुकानें मन्दिर के साथ बना दी गई हैं।

यात्रा सम्पूर्ण के पश्चात् माता के भक्त गन्तव्य स्थान की टिकट ले कर रेल में बैठ जाते हैं। डिब्बे में बैठने समय माता वैष्णवी के त्रिकूट पर्वत की ओर मुख कर के माता को नमस्कार करके जयकार बुलाते हैं। गये हुए इष्ट-मित्र, माता के भक्तों से कहते हैं कि भक्त जी अगले वर्ष फिर आना। जय माता दी हम चलते हैं। गाड़ी चल देती है।

माता वैष्नवी की चड़ाई का वह सुन्दर दृश्य माता के दरवार का पवित्र वातावरण, गुफा के अन्दर का रमणीय एवं पुनीत दृश्य, माता के चरणों का कल-कल करता हुआ पाप नाशक जल का सुरम्य शब्द, माता के जयकारारों की ध्वनि सब कुछ रेल के डिब्बे में बेठे हुए माता के भक्तों के मन में बार बार स्मरण आ रहा था।

मन्दिरों वाले शहर जम्मू की मधुर स्मृति भक्तों के मन को

मुग्ध एवं ग्रानन्दित किए हुए थी। ग्राज माता का भक्त मन में ग्रानन्द का ग्रनुभव कर रहा है। मानो जैसे कोई साधक चिर साधना के बाद उत्तम वर प्राप्त करके ग्रानन्द का ग्रनुभव प्राप्त करता है। नजाने कितनी मनो-कामनाएं पूर्ण हो गई हों ग्रौर कितनी पूर्ण होने के लिए उसने माता के दरबार में मन्नतें मानी हैं। यही सोच बिचार करते हुए उसका प्राप्तव्य स्थान (पहुंचने का स्थान) ग्रा गया। ग्रौर उस ने ग्रपने निवास स्थान में माता के जयकार के साथ प्रवेश किया। सारा परिवार तथा मुहल्ले वाले, भक्त जी को जय माता दी जयकारों से मानों बधाई दे रहे हों घर पहुंचने की।

ग्रादि शक्ति मां वैष्णवी के सच्चे भक्तो तथा मां के प्रिय पुत्रो! यात्रा करते समय मन में माता का ही स्मरण करना चाहिए। घर से चलते समय जो भी ग्रपनी कामना (इच्छा) हो ग्रपने मन में धारण कर लेनी चाहिए। काम, क्रोध, लोभ, मोह का परित्याग कर देना चाहिए। सारी ग्रायु के लिए नहीं तो कम से कम तीन चार दिन जो यात्रा सम्बन्धी हों उन में ग्रावश्य ही त्याग करें। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए मन में एक ही मनो-कामना हो कि मैंने माता के दर्शन करने हैं। मैं मां का पुत्र हूं कैसा? जो संसार के ताप, शाप से सन्तप्त है। जो ग्रपनी मां से चिरकाल से बिछुड़ा हुग्रा हूं। ग्राज मैं अपनी मां को मिलने जा रहा हूं।

जब तक मैं ग्रपनी मां के दर्शन न कर लूं जब तक मां के चरणों का शीतल स्पर्श न करलूं जब तक मेरी पीठ पर मेरी माता का स्नेह भरा वरदहस्त (हाथ) नहीं फिरे गा तब तक में एक क्षण के लिए भी सुख एवं उपभोग के लिए सोच भी नहीं सकता। मेरा मन व्याकुल हो रहा है क्यों मिलन प्रतीक्षा में माता से।

कटड़ा से माता वैष्णवी की चढ़ाई चढ़ते समय चरण पादुका से ही माता के जयकारों का उच्चारण करता जाए। एक एक माता की सीढ़ी चड़ता जाए। भक्त जो भी चढ़ावा माता के लिए ले जा रहा है, वह यह भाव धारण करे कि मैं छोटी सी भेंट लेकर

जा रहा हूं। कहीं अपने मन में धन का अभिमान् न पैदा हो : इस की बिशेष साबधानी रखें। ऐसा भाव मन में रख कर माता की चढ़ाई चढ़ता जाए। यह भी भाव मन में रखें कि मैं जो कुछ भी तुच्छमात्र यथा शक्ति (अपनी सामर्थ्य के अनुसार) लिए जा रहा हूँ, मां इस को देख कर प्रसन्न होगी।

माता के दरवार में पहुंच कर यथा स्थान अपना सामान आदि रख कर स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण करके धैर्य के साथ मां वैष्णवी की पावन गुफा में प्रवेश करें।

मां को तुम्हारे पहुंचने से पहले ही पता चल गया है कि मेरा पुत्र मेरे लिए कुछ ला रहा है। अन्दर माता की पिंडियों के पास पहुंच कर धूप, धीप, नैवेद्य द्वारा माता का पूजन करें। यथा शक्ति दक्षिणा अर्पित करें। अपने मन में हीन भावना मत पैदा होने दो। माता ने तो अपने पुत्र का प्यार देखना है। और देखनी हैं शुद्ध भावना।

पूजन कर के मां के चरणों में नत मस्तक हो कर नमस्कार करो। दो क्षण के लिए मौन भाव से अपनी मनो-कामना मां के चरणों में रख दो। मां ऐसे पुत्र को धन धान्य तथा गृहस्थ का सुख तो देगी ही और साथ में देगी चिरायु की शुभ आशीर्वाद। माता का आशीर्बाद प्राप्त करके, प्रसन्न चित से यथा शक्ति कुमारी पूजन या विप्र भोजन कराए। अथवा निर्धनों को यथा शक्ति दान दे कर शरीर का कल्याण करे।

घर को वापिस आते समय सोचे कि मैं कितना भाग्यशाली हूँ कि माता के दर्शन करके घर जा रहा हूं। घर में पहुंच कर सामर्थ्य के मुताबिक ब्राह्मणों को भोजन कराए अथवा कम से कम एक विप्र को भोजन या आटे का सीधा प्रदान करे। इस शुभ कृत्य से निवृत्य हो कर अपने गृहस्थ के संसारिक कार्यों में जुट जाए। ऐसे भक्तों के भण्डरे मां भरती है। तथा दुःखों को भी हरती है। इस में किसी प्रकार का भी मन में सन्देह नहीं करना चाहिए। परन्तु जो भक्त इस आशा से आते हैं कि चलो सैर ही सही।

आती बार जम्मू से बासमती या राजमाष लेते आएं गे। और ले आएं गे बच्चों के लिए अखरोट, सेब, नाशपाती आदि। ऐसे दिखावटी भक्तों को मां क्या देगी। उन की कामना कैसे पूर्ण होगी। कई ऐसे भक्तगण देखने को मिले कि माता के दर्शन करके आते हैं तो आते ही कटड़ा या जम्मू शहर में पूछते हैं बाबू जी यहां पर ठेका (शराब का) कहां है। क्या दुकान आज खुली होगी ?

कौन पूछ रहा है अपने को माता का भक्त कहलाने वाला हम तो उसे माता का भक्त नहीं कहेंगे, भले ही वह अपने को माता का भक्त समझे। कौन– जिसने अभी अभी अपने गले से माता की लाल अट्टी (मौली) उतारी नहीं है और सुरपान के लिए व्याकुल हो रहा है। ऐसी व्याकुलता मां के दर्शनों के लिए भी नहीं थी।

ऐसे भक्त माता के भक्त होंगे या शुम्भ-निशुम्भ के सेबक स्वयं सौचिए।

अतः प्रार्थना है कि माता वैष्णवी के दरवार में आने वाले भक्त कोई भी ऐसा भद्दा प्रदर्शन न करें जिस से समाज पर या माता के श्रेष्ठ भक्तों पर बुरा असर पड़े।

———

माता वैष्नवी के त्रिकूट पर्वत का महत्व

माता वैष्णवी का यह पवित्र पर्वत आदिकाल से ही मां वैष्णवी का गुणानुबाद करता हुआ, सगर्व उन्नत मस्तक किए हूए, वैष्णवी सिद्ध पीठ की अति प्राचीनता को प्रकट करने के लिए पावन महानदी चन्द्रभागा के किनारे स्थित है। नजाने सृष्टि के कितने ही उतार चढ़ाब इस हिमालय पुत्र ने अपनी आंखों से देखे हैं। इसी लिए वामन पुराण में इसे ज्यों लिखा है :

सुत: पर्वत राजस्य त्रिकूटोनाम पर्वत: ।।

वेदों में असिक्नी (चन्द्रभागा) नदी के लिए लिखा है कि जो त्रिकूट पर्वत से पश्चिम की ओर पर्वत को चीर कर बहती है। और त्रिकूट पर्वत की परिक्रमा करती हुई तथा इस के चरण छूती हूई दक्षिण की ओर समुद्र की तर्फ चली जाती है।*

विचार करने पर यह स्थान बिड्डा के पास पड़ता है। जहां वर्तमान सलाल प्राजैक्ट बन रहा है। ठीक इसी स्यान पर पर्वत को चीर कर ही चन्द्रभागा नदी बही है। बटोत, रामवन से होतीं हुई मानो त्रिकूट पर्वत की परिक्रमा ही कर रही हो। वहां से रियासी नगर के पास से हो कर कटड़ा के पास से त्रिकूट पर्वत के चरण छूती हूई अखनूर नगर की ओर चली गई है। (यही इस की समुद्र की ओर दक्षिण दिशा है)

---

* शिव पुराण में १११ पृ० पर सेसा ही वर्णण मिलता है।

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल जी ने अपनी पुस्तक 'पाणिनि कालीन भारत में'' त्रिकूट पर्वत के लिए ज्यों लिखा है :

त्रिककुत् (त्रिककुद् पर्वत) पृ० ५-४-१४७ तीन चोटियों वाले इस पहाड़ का नाम अथर्व वेद में आता है, (त्रैककुदं नेत्राञ्जनम्) अर्थात् यहां नेत्रों को लगाने वाला विशेष अञ्जन (सुरमा) उत्पन्न होता था। यह भी हिमालय की किसी चोटी का ही नाम था। डा० कीथ (लन्दन) ने इस की पहचान त्रिकोट से की है। वैदिक इन्डैक्स। ३२९ पृ० में लिखा है कि उत्तरी पंजाब और कश्मीर के बीच की कोई चोटी थी।

आदि शक्ति महामाया मां वैष्णवी का हिमालय से गहरा सम्बन्ध था। जैसे सप्तशती में लिखा है (हिमवानवाहनं सिंहं रत्नानि विविद्यानिच) जब सब देवताओं ने भगवती को अनेक अस्त्र, शस्त्र तथा वस्त्र, आभूषण दिए तो हिमालय ने भी अनेक प्रकार के रत्न और सवारी के लिए सिंह (शेर) दिया। स्वयं मां वैष्णवी ने देवताओं द्वारा स्तुति करने पर कहा था :

हे देवताओ चिन्ता मत करो मेरा वास इसी हिमालय पर ही रहेगा। (हिमालय गुफा में मेरा बास होगा। ये संसार सारा मेरा दास होगा)

जब शुम्भ, निशुम्भ ने सब देवताओं को पराजित कर दिया, सूर्य, चन्द्रमा के अधिकार भी छीन लिए, तब सब देवता मिलकर अपराजिता शक्ति का स्मरण करने लगे। जिस देवी ने (महिषासुर सग्राम के बाद) हमें वर दिया था कि विपत्ति के समय तुम सब की मैं सहायता करूंगी। और तुम्हारी आपदा का नाश करूं गी।

ऐसा विचार कर इन्द्रादि सब देव गण पर्वतों में उत्तम (श्रेष्ठ) पर्वत हिमवान् पर खड़े हो कर विष्णु माया भगवती की स्तुति करने लगे। जैसा सप्तशती दुर्गाचर्न सृतौ पृ० २६१ में लिखा है :

हृताधिकारास्त्रि दशा स्ताभ्याम् सर्वे निराकृताः।
महा सुराभ्यां तां देवीं संस्मरत्य पराजितम्।। ५
तयाऽस्माकं वरोदत्तो यथा पत्सु स्मृता खिलाः।।

भवतां नाशयिष्यामि तत् क्षणात् परमापदः ।। ६
इतिकृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णु मायां प्रतुष्टुवुः ।। ७

देवों द्वारा स्तुति या देवी सर्व भूतेषु विष्णुमायेति शद्विता, नमस्तस्यै ।। नमस्तस्यै ।। नमस्तस्यै नमो नमः । जो देवी सब प्राणियों में विष्णु माया से विराजमान है, उस को नमस्कार है, नमस्कार है ।

यह उपरोक्त स्तुति देवताओं ने त्रिकूट पर्वत पर ही की थी । क्यों कि बार बार माता का सम्बन्ध हिमालय के साथ कहा गया है । इसी त्रिकूट पर्वत पर शुम्भ निमुम्भ का दूत माता के पास अपने राजा का सन्देश देने आया था । जैसे दुर्गा सप्तशती में १०३ श्लोक में कहा है :

स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलो देशेऽति शोभने ।
सा देवीं ततः प्राहश्लक्षणम् मधुरया गिरा ।।

अर्थात् वह सुग्रीव नाम वाला दूत हिमालय के अति सुन्दर स्थान पर जहां देवी बैठी थी, वहां जा कर सुन्दर तथा मीठी बातें करने लगा ।

त्रिकूट पर्वत तथा इन्द्र वृत्रासुर संग्राम

एक बार इन्द्र और वृत्र का घोर युद्ध हुआ । परन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी वृत्र इन्द्र की पकड़ में नहीं आ रहा था । कभी वादलों में छुप ज़ाता था कभी नीचे आ जाता था । तब व्यग्र हो कर देवराज इन्द्र ने देवगुरु वृहस्पति जी से पूछा : ब्रह्मण ! यह असुर बहुत प्रयास करने पर भी मरता नहीं है । न ही दिखाई देता है ।

तब वृहस्पति जी ने कहा हे देवराज ! इस त्रिकूट पर्वत पर नेत्रों को लगाने वाला विशेष प्रकार का अंजन (सुरमा) है । जिस को लगाने से मनुष्य दिन में क्या रात्रि को भी सिंह, व्याघ्र, चोर और डाकू देख सकता है । तुम उसी का प्रयोग करो तुम्हें वृत्र आवश्य ही दिखाई देगा । (त्रिककुद नेत्रांजनम्) अथर्व वेद ।

अब प्रश्न उठता है कि वह त्रिकूट पर्वत कहां पर है। इन्द्र ने वृत्र को कहां पर मारा था। माता वैष्णवी के त्रिकूट पर्वत से मिलती हुई पश्चिम की ओर द्रावी की पहाड़ियां हैं। जिन पर सुरमा (अंजन) के पाए जाने के प्रमाण मिलते हैं।

यहां से जो नदी निकलती है, उस को अञ्जनी या डोगरी भाषा में अंजी कहते हैं। रियासी नगर के एक पं० लद्दू राम जी हुए हैं, जिन्हों ने कभी इस सुरमे का ठेका लिया था। इस ठेके से लद्दू राम जी को अच्छे पैसे बचे। इस समय पण्डित जी की वृद्धावस्था हो आई थी, परन्तु सन्तान का सुख नहीं देखा। फिर किसी वृद्ध तपस्वी का मिलन हुआ और वर्तालाप करते हुए महात्मा जी ने पं० जी का कुशल क्षेम पूछा।

पं० जी ने कहा महाराज ! और तो सब सुख है परन्तु सन्तान सुख से अभी तक बन्चित हूँ।

महात्मा जी ने कहा पण्डित जी जिस भगवती महामाया की पहाड़ी से सुरमे से इतना पैसा कमाया है, उस के निमित भी कुछ धन लगा कर मन्दिर भगवती का बना दो। तुम्हारी मनोकामना आवश्य पूर्ण होगी। क्यों कि प्रसन्न हुई भगवती धन और पुत्र भी देती है तथा मनुष्य को धर्म मार्ग पर चलाती है।

यथा ददाति वित्तं पुत्रांश्च मार्तं धर्मं तथा शुभम् ।।

अतः तुम उसी महामाया की शरण में जाओ।

ऐसे अद्‌भुत वाक्य महात्मा जी के सुन कर पं० जी प्रसन्न हो गए। उन्हों ने रियासी नगर में एक देवीद्वारा और एक यात्रियों के लिए सराय बनाई। भक्तवत्सला मां वैष्णवी की दया से पं० लद्दू राम जी के घर वृद्धावस्था में एक पुत्र और एक लड़की पैदा हुई। पुत्र का नाम शिवराम था उस समय का वह बना हुआ देवीद्वारा अभी तक रियासी नगर में विद्यमान है। अभी भी सुरमा देवीगढ़ के पास मिलता है, परन्तु इस में वह गुण पाए जाते हैं या नहीं जो बतलाए गए हैं। यह भूगर्भ शास्त्री ही जानते हैं।

रियासी और त्रिकूट पर्वत के बीच कुछ पहाड़ियां हैं जिन्हें

द्रावी की पहाड़ियां कहते हैं। सम्भवत: इन्द्र ने इस स्थान से द्रव्य (पदार्थ) प्राप्त किया हो (सुरमा) इसी लिए इनको द्रावी की पहाड़ियां कहते हैं। इस के साथ ही विढ्ढा का इलाका है, जहां इस समय सलाल प्राजैक्ट बन रहा है। इसी स्थान पर इन्द्र ने वृत्र को मारा था। क्यों कि इन्द्र को वृत्रहा कहा गया है।* क्यों कि पाणिनि के सूत्रों के अनुसार ह, को ढ़ हो जाता है। इसी लिए वृत्रहा का नाम बिगड़ कर विढ्ढ बन गया।

जब इन्द्र ने वृत्र को अलक्षित पाया (न देखा) तो उस ने त्रैककुदांजन (सुरमा) अपनी आंखों में डाला तब इन्द्र को वृत्र स्पष्ट दिखाई देने लगा। तब इन्द्र ने वृत्र के सिर पर वज्र का प्रहार किया। वृत्र का सिर फट गया, परन्तु इतना भयानक शब्द हुआ कि इन्द्र स्वयं भयभीत हो गया। इन्द्र के हाथ से वज्र छूट गया, और इन्द्र स्वयं त्रिकूट पहाड़ की गुफा में जा छुपा। वह गुफा यही जान पड़ती है।

त्रिकूट पर्वत पर मां वैष्णवी की गुफा की आयु भूगर्भ शास्त्रियों (ज्यालोजी के स्पेशलिस्टों) ने १०००००० वर्ष पुरानी मानी है। महर्षि मार्कण्डेय ने भी यही लिखा है कि दुर्गासप्तशती के ग्यारहवें अध्याय में स्तुति करते हुए इन्हों ने कहा :

किरीटिनी महावज्रे सहस्र नयनो ज्वले
वृत्र प्राण हरे चैन्द्रि नारायणि नमोस्तुते ।। २० श्लो

अर्थ हे किरीटिनि ! मुकुट को धारण करने वाली, शत्रुओं को मारने के लिए वज्र को धारण करने वाली। सहस्त्र नेत्रों से प्रकाशमान होने वाली, वृत्रासुर का संहार करने वाली, हे ऐन्द्री ! हे नारायणी ! मां वैष्णवी आप को नमस्कार हो।

भौगोलिक दृष्टिी से विचार करने पर त्रै ककुदम् नेत्रांजनम् (अथर्ववेद) त्रिकूट पर्वत अंजन अंजनी (अंजी) वृत्रहा (विढ्ढा)

---

*वृत्रहा : वृत्र को मारने वाला (इन्द्र)

यह सब एक साथ ही मिलते हैं। अतः यह वेद मन्त्र ठीक ही घटित होता है कि त्रैककुदंनेत्राजनम् (कई विद्वान् सुलेमान पर्वत को त्रिकूट पर्वत मानते हैं। कई लंका में स्थित पर्वत को त्रिकूट पर्वत कहते हैं। परन्तु उपरोक्त तथ्थों के आधार पर यही पर्वत मां वैष्णवी का पहाड़ ही त्रिकूट पर्वत ठहरता है।

वाचस्पत्यम् शब्दकोश पृ० ३३९२ शतपथ ब्रह्मण: त्रैककुद नाम पर्वत:। यत्र व इन्द्र, वृत्र महन्तस्य यदाक्षासीत्, गिरिं त्रिककुदं अक रोतदुत्रि ककुदं भवति।

अद्रि गोत्र गिरि ग्रावा चल शैल शिलोच्चया: लोके लोकश्च-क्रवाल स्त्रिकूट त्रिकुटा समा।। क्वचिद त्रिककुद सभौ, हेमेतु त्रिककुदस्तु इति पाठ: दृश्यते। उक्त पाठ: मेदिन्यां दृश्यते।

त्रीनि ककुद सदृशानि शृंगानि यस्य पर्वतस्य असौ त्रिकूट पर्वत: इत्यमर कोश.। त्रिकूट पर्वते निवस माना या शक्ति सा त्रिकुटा इति कत्थ्यते। वैल श्री ककुद (मन्न) के समान जिस पर्वत के तीन शिखर हैं, वही त्रिकूट पर्वत है। ककुद दक्ष कन्या का नाम भी है) माता की गुफा की सीढ़ियां चढ़ते समय दाएं ओर एक शिला लेख है। जो हिन्दी, उर्दू, डोगरी में अंकित है। लेख की कुछ पंक्तियां हम यहां पर उध्द्त कर रहे हैं। लेख ज्यों है :—

।। त्रिकुटा भगवत्यैनम: ।।

बि० सम्बत् १९१९ इह त्रिकुटा चल, त्रिकुटाचल निवासनी जगदम्बा त्रिवर्ग पुत्र सुख, सौभाग्य, राज्यै श्वर्य करा, दु:ख दारिद षड़ पीड़ रोग हरा, त्रिभुवनेश्वरी जी का यह स्थान है। इस स्थान पर हिन्दुस्थान कलकत्ता, बम्बई से स्त्रियां पुरुष बाल, बृद्ध दर्शनार्थ आते हैं। और जो जो अपनी मनोकामना करते हैं, सो सो पूरी होती है। यह सनातन स्थान है। इत्यादि ... । इन उपरोक्त तत्थ्यों के आधारपर यही त्रिकूट पर्वत है। इस पर्वत की गुफा में बास करने वाली जगद जननी को मां वैष्णवी कहते हैं।

अगर साधन जुड़ सके तो अगले संस्करण में पाठकों के सामने और भी तत्थ्य रख सकें गे। प्रतीक्षा के लिये क्षमा

प्रार्थी हैं।

यह त्रिकूट पर्वत मां वैष्णवी का आदिसिद्ध पीठ रहा है। जगदम्बा ने आर्य भूमि भारत में कई स्थलों पर क्रीड़ायें, लीलायें की हैं। परन्तु अन्ततः (आखिर में) समावेश या प्रवेश इसी गुफा में होता रहा है। यह दिव्य गुफा युग युगान्तरों से मां वैष्णवी का निवास स्थान रहा है।

त्रिकूट पर्वत के तीन शिखर आदि शक्ति मां दुर्गा के तीन नेत्र हैं। इसी लिए मार्कण्डेय पुराण में लिखा है—दुर्गां त्रिनेत्रां भजे। तीन नेत्रों वाली दुर्गा को मैं भजता हूँ। अर्थात् स्मरण करता हूँ। मां वैष्णवी के तीन नेत्र अपने भक्तों का कल्याण करने के लिए है। और दुष्टों का संहार करने के लिए हैं। मां वैष्णवी के त्रिकूट पर्वत के तीन शिखर मानो रज, तम, सत्व, गुण को प्रकट कर रहे हों।

क्यों कि ईश्वर की प्रकृति तीन गुणों में विभक्त हो कर सृष्टि का सृजन, पालन तथा संहार करती है। इसी लिए इस शक्ति को सृष्टि स्थिति विनाशानां स्थिति संहार कारिणी कहा है। सूर्य, चन्द्र, अग्नि यह उस प्रकृति के तीन नेत्र हैं। महालक्ष्मी मा वैष्णवी के ही दो स्वरूप और हैं। महा सरस्वती और महा काली। वास्तव में एक ही पराशक्ति मां वैष्णवी ही है। विश्व को मोहित करने वाली वैष्णवी शक्ति अपने तीनों स्वरूपों में कटड़ा के त्रिकूट पर्वत की दिव्य गुफा में विराजमान है।

इसी पर्वत पर महर्षि वसिष्ठ ने शक्ति से पूछा था, जब तप करने ब्रह्मचारिणी वेष में आई थी। वसिष्ठ जी ने कहा —

किमर्थ मागता भद्रे निर्जनस्त्व मही धरम्।
कस्या वातनया गौरी किं वा तव चिकीर्षितम्।।

अर्थ—वसिष्ठ जी पूछते हैं हे भद्रे! तू इस निर्जन पर्वत पर क्यों आई है। तू किस की पुत्री है और तेरी इच्छा क्या है।

तब इस काल में शक्ति सन्ध्या नाम से प्रकट हुई थीं। वह कन्या कहती है हे महर्षे!

तपः कर्तु महम् ब्रह्मण निर्जनं शैल मागता ।
ब्रह्मणो ऽहम् मनो जाता सन्ध्या नाम्ना च वैश्रुता ।।

हे महर्षे ! में तप करने के लिए इस निर्जन पर्वत पर आई हूँ, सन्ध्या मेरा नाम है। तब उस कन्या ने अपनी जानकारी के लिए वसिष्ठ जी से पूछा तप के लिए :

नोपदेशी महम् जाने तपसो मुनि सत्तमः ।
यदि ते युज्यते गुह्य मां त्वं समुप देशय ।।

हे महर्षे ! मैं तप के नियमों को नहीं जानती हूं । यदि आप को इस रहस्य का पता हो तो मुझे बतलाइए ।

तब वसिष्ठ जी ने कहा – हे भद्रे ! परमो यो महा तेज परमो यो महातपः परमो यो समाराध्यो विष्णु मनसि धीयताम् ।।

हे कल्याणि ! परम जो महा तेज परम जो महा तप, परम जो अराध्य है उन विष्णु भगवान् का तप करो। इस लिए इस पर्वत पर तप करते, करते इस कन्या को चार युग बीत गए। जैसे कालिका उपपुराण में १४० और ४१ श्लोक पर लिखा है—

एकान्त मनसया स्तस्याः कुर्वन्त्याः सुमहातपः ।
विष्णो विनस्त मनसो गतमेकं चतुर्युगम् ।।

विष्णु की तपस्या करने से ही यह शक्ति वैष्णवी कहलाई । यह तपस्या करते करते इस त्रिकूट पर्वत पर चार युग बीत गए। यह तपस्या ब्रह्मचारिणी वेष में की थी । उस युग में शक्ति ने उग्र तप करके विष्णु भगवान् से तीन वर मांगे थे ।

१ पैदा होते ही किसी को कामवासना न सताए ।
२ मेरा पति सात कल्प तक जीवित रहे ।
३ मेरी ओर जो भी काम बासना से देखे तत्काल ही वह नपुंसक बन जाए । अर्थात् पुरुषत्व हीन हो जाए ।

तब विष्णु ने प्रसन्न हो कर कहा हे तपस्विनी —

यो द्रक्ष्यति सकाम स्त्वां पाणिग्रह मृतेतव ।
सः सद्य. क्लीवतां प्राप्य दुर्वलत्वं गमिष्यसि ।।

अर्थात् जो भी काम वासना से तेरी ओर देखे गा वह उसी

समय दुर्बल हो जाए गा।

अब प्रश्न उठता है कि त्रिकूट पर्वत पर एक भैरों का मन्दिर इस लिए बनाया गया कि वह राक्षस था और सकाम हो कर माता के पीछे भागा। परन्तु हमारे धर्म में देवताओं के मन्दिर बनाए जाते हैं, राक्षसों के नहीं। भैरव तो माता का दास, सेवक था, वह तो पीठ रक्षक देवता है न कि भक्षक है।

यथा—एतानि नव पीठानि शंसन्ति नव भैरवः।

अर्थात् माता के नव पीठों की रक्षा करने वाला भैरव देवता है। प्रसन्न हुए विष्णु भगवान् सन्ध्या के पूर्व जन्म की कथा सुनाते हैं। (उस काल में शक्ति का नाम सन्ध्या था। जैसे—

त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवी जननी परा।
त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतद् सृज्यते जगत्॥

हे भगवती तू ही संध्या है तू ही सावित्री है, तू ही परा शक्ति है। तू ही जगत का सृजन, पालन, संहार करती है। ऐसी सन्ध्या नाम से शक्ति का वर्णन है)

हे कल्याणि तूने इस पर्वत पर चार युग तक तपस्या की थी, सत्य युग के बाद जो त्रेता युग आया उस में तू दक्ष की कन्या बनी थी। जिस का नाम सती पड़ा था। तुम ने शंकर भगवान् को प्राप्त किया। फिर दक्ष प्रजापति के यज्ञ में तुम ने स्वयं को दाह किया। तुम्हारे भुलसे हुए मृत शरीर को उठा कर तुम्हारे मोह में शिव जहां, जहां पर प्रलयंकारी ताण्डव करते हुए भारत की भूमि पर उन्मत्त हो कर नाचे थे। तुम्हारे पवित्र अंग जिस जिस स्थान पर गिरे वहां पर शक्ति पीठ तीर्थ बन गए।

सती का उत्तमांग सिर कटड़ा त्रिकूट पर्वत पर मां वैष्णवी की गुफा में स्थित हुआ। इसी स्थान पर भगवान् शंकर को शांति प्राप्त हुई थी। यहीं पर शकर समाधिस्थ हुए थे। इसी स्थान पर सती को पुनः प्राप्त करने के लिए मां की गुफा से ५० किलो मीटर की दूरी पर शांत, एकांत योगानुकूल पौनी नामक स्थान पर शिव अघोरी की गुफा है। यहां शंकर ने तप किया था।

यह स्थान माता की गुफा से पश्चिम की ओर है। रियासी

नगर से १५ मील की दूरी पर है। यह गुफा भी देखने योग्य है। यहीं पर उग्र तप के द्वारा शंकर ने पुनः हिमाचल पुत्री के रूप में पार्वती जी को प्राप्त किया था। ऐसा पवित्र यह त्रिकूट पर्वत है।

यथा—यदात्वं दारुण सन्ध्ये तपश्चरसि पर्वते।
यावद् चतुर्युगं तस्य व्यतीते कृत युगे ।।
त्रेताया प्रथमे भागे जाता दक्षस्य कन्याका ।।

अन्त में सती ने स्वशरीर त्याग की इच्छा प्रकट की। तब विष्णु भगवान् ने कहा हे कन्यके ! त्रिकूट पर्वत की तलहटी में १२ वर्ष से चन्द्र भागा नदी के तट पर महर्षि मेधातिथि का ज्योतिष्ठोम यज्ञ हो रहा है। तुम उस में जा कर अपना शरीर विसर्जन कर दो। और मेधातिथि की कन्या बन जाओ। यह स्थान माता की गुफा से दस मील दक्षिण पश्चिम की ओर पड़ता है। इसी स्थान के पास ही वीर वैरागी माधव दास (बन्दा) का आज आश्रम बना है। चन्द्र भागा नदी के तटवर्ती इस स्थान पर राजाओं तथा कई महात्माओं को बहुवार भगवती महामाया का साक्षात्कार हुआ है।

इस स्थान पर यज्ञ में एक करोड़ वलि और एक करोड़ आहूति लगी है। वलि मांस की नहीं खीर की दी है क्यों कि यह देवी सात्विकी है वैष्णवी शक्ति) इसी लिए यह स्थांन त्रिकूट पर्वत माता का सिद्धपीठ और सिद्ध स्थान रहा है। क्योंकि जितनी जल्दी सिद्धि इस स्थान पर हो सकती है अन्यत्र नहीं।

इसी पवित्र स्थान पर समाधि नाम का वैश्य और सुरथ नाम का राजा महर्षि मेधातिथि के आश्रम में त्रिकूट पर्वत की उपत्यका (तलहटी) में चन्द्रभागा नदी के किनारे पर महर्षि की शरण में आए थे। इसी पवित्र स्थान पर भगवान् विष्णु की आज्ञा से *महर्षि मेधातिथि के हो रहे ज्योतिष्ठोम यज्ञ में सन्ध्या ने अपना शरीर विसर्जित किया था। इसी लिये कालिका उप पुराण में ज्यों बर्णन किया है। श्लोक ८६ से ८९ तक।। हुते प्रज्वलिते बह्नौ न

*बारह वर्ष का यह ज्योतिष्ठोम यज्ञ हुआ था।

चिराद् क्रियतेत्त्वया। एतच्छै लोपत्यकायां चन्द्रभागा नदी तटे ॥ मेधातिथिर्महायज्ञं कर्तुं तपसाश्रमे । तत्र दत्वा स्वयंछिन्ना मुनिभिनोप लक्षिता ॥

शक्ति सम्बन्धी इतिहास देखने से ऐसा जान पड़ता है कि महर्षि मार्कण्ड़ेय का सप्तशती का सारा काण्ड़ इसी त्रिकूट पर्वत के आस पास ही घटित हुआ है । यह त्रिकूट पर्वत हिमालय का पुत्र है आज भी इस पर हिम (वर्फ) पड़ती है।

माता वैष्णवी की गुफा में जो माता का सिंह (शेर) है उस के दाएं पैर के नीचे मार्कण्ड़ेय ऋषि ने वीसिया यन्त्र दवाया है। माता वैष्णवी की गुफा में सच्चे भक्तों की मनो कामना जो जल्दी ही पूर्ण हो जाती है, वह उसी यन्त्र का प्रभाव है।

महाभारत में भीष्मपर्व गीता से पहले दसवें श्लोक २३ अध्याय में श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा था—

हे पार्थ ! तुम शुद्ध पवित्र मन से संग्राम की ओर मुख कर के मां वैष्णवी का चिन्तन करो। तुम्हें युद्ध में विजय प्राप्त होगी।

तब अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से पूछा : महाराज ! वह शक्ति कहां पर है, उस का वास कहां पर है, मैं किस का ध्यान करूं।

ऐसा वचन अर्जुन का सुनकर श्री कृष्ण ने कहा :—

वेद श्रुति महा पुण्यं ब्रह्मण्ये जात वेदसि।
जम्बू कटक चेत्येषु नित्यंसन्निहितालये ॥

अर्थात् वेदों में जिसको जात वेदसि अग्नि स्वरूपा लालवर्ण वाली कहा गया है । जम्बू की कटक पहाड़ियों में कटक पहाड़ी ढ़लान या पार्श्व भाग अथवा पिछला भाग, में जिसका वास है, और भी देवालयों में जिस का वास है। श्री स्थल (सरथल) शरीका, सुक्रतालय, ज्वाला भगवती, मनसा, मीनाक्षी, इन्द्राक्षी, कामाक्षी उन के स्थानों में जिस का वास है। उसकी शरण में जाओ। यह स्थान मां वैष्णवी का त्रिकूट पर्वत ही है। जिस की ढ़लान, पहाड़ी के पार्श्व, पिछले भाग में जिस की पवित्र गुफा है।

कुछ विद्वान् जम्बू का जम्बू द्वीप से सम्बन्ध जोड़ते हैं। परन्तु

द्वीप शब्द शास्त्रकार को जहां आवश्यक होगा, वहां जम्बू के साथ द्वीप शब्द भी दिया होगा । केवल जम्बू शब्द नहीं होगा। जैसे पराशर ऋषि कहते है :

अत्राऽपि भारतं श्रेष्ठं जम्बू द्वीपे महामुने। हे मुनियो ! जम्बू द्वीप में भारत श्रेष्ठ है । (एशिया टापु) दूसरा उदाहरण प्रतिदिन सन्ध्या के संकल्प में मिलता है :

अद्य वर्तमान् मासोत्तमे मासे जम्बू द्वीपे भारत खण्डे,

जम्मू के साथ द्वीप शब्द जुड़ा है। केवल जम्बू शब्द द्वीप के लिए बहुत ही कम प्रयोग में आता है । अत: यह जम्बू शब्द जम्भू के लिए ही प्रयुक्त हुआ है। उस समय का जम्बू ही आज का जम्मू है। क्यों कि जम्बू प्रांत या जम्बू अथवा जम्मू नगर का वर्णन वाल्मीकि रामायण और महाभारत में भी आया है। हरिबंश पुराण में भी इस का वर्णन मिलता है।

जम्बू मार्गं गमिष्यामि जम्बू मार्गं वसाम्यहम् एवं संकल्पमानोऽपि रुद्र लोके महीयते ।।

कटड़ा शब्द की उत्पत्ति

कटड़ा शब्द की परिभाषा और कटड़ा की उत्पत्ति मोनियर विलियम संस्कृत आंगल शब्द कोश पृ० २४३ कटक पहाड़ का पार्श्व भाग, अथवा डोगरी में जिसे 'केरी' कहते हैं। दूसरा अर्थ है पहाड़ों से घिरी वादी (वैली) ।

रघुवंश, कथा सरित सागर, हितोपदेश में कटक वैली के लिए ही प्रयुक्त हुआ ।

आप्टे कोश पृ० १२८ कटक—दी साईड आर रिज आफ मौन्टेन ।

कुमार सम्भव सर्ग सातवां श्लोक नं० ५२ प्रफुल्ल वृक्षैः कटकै रिव स्वैः कटक पहाड़, कटक पहिया, कटक मकान, कटक टेबललैन्ड ।

शिशुपाल में प्रथमसर्ग ६२ श्लोक कटक पहाड़ की तराई और वैली के लिए ज्यादा प्रमाण में आया है।

कटक से ही बिगड़ कर 'कटड़ा' शब्द की उत्पत्ति हुई है। वाद में पंजाबी का भी प्रभाव पड़ा होगा। क्योंकि कटड़ा शब्द डोगरी भाषा का नहीं है। पहाड़ों से घिरी वैली (वादी) को भी कटक कहते हैं।

आज का कटड़ा नगर ठीक पहाड़ों से घिरी वैली है। कई विद्वान् पाण्डवों का इस प्रदेश में आना नहीं मानते हैं। परन्तु माता वैष्णवी की गुफा से ठीक पश्चिम की ओर आधे मील के फासले पर गुफा के सामने एक पहाड़ी है। जिसको पाण्ड़वों की पहाड़ी कहते हैं। इस पर आज भी पाण्डवों के चिन्ह दिखाई देते हैं। श्री कृष्ण जी के काश्मीर में आने का प्रमाण मिलता है। पाण्ड़व यदि इस प्रदेश से परिचित न होते तो अन्तिम समय में स्वर्गारोहण की कामना से पांडव इस प्रदेश में न आते। इस ओर कई पहाड़ों के नाम उन्हीं के नामों पर ही रखे गए हैं।

अत: यह निश्चित है कि पाण्डव जम्मू काश्मीर के प्रदेश से परिचित थे। इसी लिए श्री कृष्ण ने अर्जुन से जम्बू कटक चैत्येपु कह कर दुर्गा की स्तुति करने को कहा होगा। क्योंकि विष्णु की पूजा करने वाली, विष्णु की भक्ति करने वाली स्त्री वैष्णवी कहलाती है। दुर्गा का नाम भी वैष्णवी, मनसा देवी का नाम भी वैष्णवी है। परन्तु जम्बू शब्द जुड़ा होने के कारण कटड़ा वैष्णवी देवी ही है। अन्य नहीं। क्यों कि जम्बू, जम्मू, जम्बू मार्ग तथा जम्बू प्रस्थ प्राय: जम्मू के लिए हीं प्रयुक्त हए हैं। यह रास्ता हिमालय (कश्मीर) जाने का रास्ता था।

महाभारत में तीर्थों का वर्णन करते हुए श्री वेदव्यास जी धर्मराज युधिष्ठर से कहते हैं कि महाभारत वनपर्व अध्याय ४० वां श्लोक ४२ वां जम्बू मार्गं समाविश्य देवर्षि पितृ सेवितम्। अश्वमेध मवाप्नोति सर्वकाम समन्वित:।।

नैरुक्त के टीकाकार पं० दुर्गाचार्य ने भी अपने को जम्बू का बतलाते हुए लिखा है। जो उभ्र और साम्बे के बीच किसी स्थान के रहने वाले थे :

इति श्री जम्बू मार्गाश्रम वासिनो भगवता दुर्गाचायस्य कृतौ

ऋज्वार्थायां निरुक्त वृत्तौ ।।

हरिवंश पुराण से १४१ अध्याय उ उध्धृत :

जम्बू मार्गं गमिष्यामि जम्बू मार्गं वसाम्यहम्
एवं संकल्प मानोऽपि रुद्रलोके महीयते ।।

यदि कोई आशंका करे कि बद्रीनारायण के मार्ग में भी एक जम्बू ग्राम का वर्णन मिलता है। परन्तु महाभारत में पहले पंचनद फिर जम्बू मार्ग फिर कश्मीर का वर्णन है। इस के बाद देविका महामदी का चन्दनावकी रियासत (चिन्हैनी) का, पुरमण्डल, उत्तर वाहनी का वर्णन आता है। यहां राजा वेणीदत्त और मान्धाता के मन्दिर बनवाए हुए हैं।

अतः यह जम्बू यही कश्मीर रियासत का जम्मू है। बद्री नारायण का नहीं हो सकता। इस के साथ वैष्णवी देवी यही कटड़ा वैष्णवी देवी है। त्रिकूट पर्वत भी यही त्रिकूट पर्वत है, जिस के पार्श्व भाग में मां वैष्णवी की सुन्दर दिव्य गुफा है। यह त्रिकूट पर्वत वही है जिस का यशोगान अथर्व वेद ने भी किया है :

त्रैककुदं नेत्रांजनम् ।। हे मां वैष्णवी के भक्तो! आप धन्य हैं। जो प्रतिवर्ष इस पावन पर्वत के दर्शन करते हैं क्यों कि कहा है त्रिकूट त्रिकुटासमा। त्रिकूट पर्वत के दर्शन भी त्रिकुटा भगवती के समान ही हैं। हे त्रिकूट पर्वत! तू भी धन्य है। जिस का यशोगान वेद ने भी मुक्तकण्ठ से किया है। और धन्य वे पाठक होंगे जो इस पुनीत (पवित्र) प्रसंग को पढ़ रहे होंगे। यही त्रिकूट पर्वत का महत्व था। यही माता वैष्णवी का आदि सिद्ध-पीठ है।

———

माता वैष्णवी की दिव्य गुफा

ब्रह्मांड में ईश्वर की एक ही शक्ति है जो समय समय पर अनेक रूप धारण करके देवताओं की कार्य सिद्धि करती रही है, और करती रहेगी। सृष्टि के अनेक कल्पों में उस ने संसार को अपना शक्ति स्वरूप वतलाया है। जिस जगत् जननी के चरणों में देवता दानव, मनुष्य राक्षस सभी मस्तक झुकाते देखे गए हैं। वह शक्ति है एक, परन्तु कई नामों से पुकारी जाती है। जैसे जैसे कार्य संसार में उसने किए उन्हीं उन्हीं नामों से उसके नामों का उच्चारण किया गया। वास्तव में सात्विकी जो दिव्य शक्ति है जो चराचर जगत का पालन पोषण करती है जिस के स्वरूप से महाकाली और महालक्ष्मी शक्तियां उत्पन्नत हुई हैं। उस आदि शक्ति महामाया को वैष्णवी शक्ति कहते हैं। इसी किए जो स्वरूप भगवती का कटड़ा वैष्णवी देवी की दिव्य गुफा में दर्शनों को मिलता है।

वह भारत तथा भारत के अन्यत्र नहीं। जिस स्थान पर स्वत: सिद्ध तीन पिंडियां बनी हैं। इस प्राचीन दिव्य गुफा में माता वैष्णवी का पूर्ण तजोमय दिव्य अवतार हुआ है। ज्यों तो माता का कार्यक्षेत्र सारा भारत तथा सारा संसार है। परन्तु आदि दिव्य स्थान माता का युग युग से यही कटड़ा त्रिकूट पर्वत की गुफा ही रही है। इसी स्थान से निकलकर मगवान् विष्णु के शरीर में प्रवेश कर के मधुकैटभ का नाश किया था।

इसी स्थान पर किसी कल्प में जब भगवती वैष्णवी ने मोहनी रूप धारण करके सुन्दर त्रिकूट पर्वत पर तप करना आरम्भ किया था, उस समय दत्यराज शुम्भ-निशुभ ने अपना 'सुग्रीव' नाम का दूत भेजा था। इसी पर्वत पर सुग्रीव को माता वैष्णवी (मोहित

करने वाली) ने सुग्रीव दूत को करारा जवाव दिया था :—

हे दूत ! मैंने बचपन में ही प्रतिज्ञा की थी जो मुझे युद्ध में जीते गा, जो मेरे घमण्ड को चूर करेगा, जो मेरे मुकावले का होगा वही मेरा पति होगा, अन्य नहीं।

शुम्भ के अन्य सेना पति गए बहुत प्रलोभन दिया कि तुम हमारे स्वामी से विवाह कर लो, परन्तु जव देवी जी न मानीं तो स्वयं शुम्भ त्रिकूट पर्वत पर गया। (इसी लिए आज भी उसी शक्ति की याद में इस त्रिकूट पर्वत पर माहाराजा श्री रण्वीर सिंह ने आदि कुमारी का मन्दिर बनवाया है।) और आदि कुमारी से कहा हे देवी ! इन्द्र का सब सुख वैभव मेरे पास है केवल तुम्हारी ही कमी है, तुम मेरे साथ चलो और उन सुखों का अनुभव करो। इस के उत्तर में आदि शक्ति ने कहा हे दैत्यराज ! जो आद्वितीय परब्रह्म परमेश्वर हैं जो सर्वदा-सर्वत्र व्यापक हैं जिनको वेद भी नहीं जान सकता मैं उन्हीं की सूक्ष्म प्रकृति शक्ति हूँ फिर दूसरों को पति कैसे बना सकती हूं।

सिहनी कितनी ही कामातुर क्यों न हो जाय, वह गीदड़ को कभी अपना पति नहीं बनाए गी। हाथिनी गदेह को और बाघिनी खरगोश को नहीं बरेगी।

हे दैत्यो ! तुम काल के फन्दे में फंसे हो अत: पाताल को चले जाओ यदि शक्ति हो तो मेरे साथ युद्ध करो। इस के पश्चात् शक्ति के साथ युद्ध हुआ सब दैत्य मारे गए। देवता प्रसन्न हुए और उन्हों ने भगवती की स्तुति की।

देवताओं का गर्व चूर करना

एक कल्प में देवताओं ने दैत्यों को परास्त कर दिया और अपने आप को धन्य मानने लगे हमारे से डर कर दैत्य पाताल को चले गए हैं हम सर्व समर्थ हैं, ऐसा भाव पैदा होने पर आदि शक्ति महामाया ने एक तेज पुन्ज प्रकट किया, जिस को देख कर सब देवता बड़ आश्चर्य चकित हुए। इस घटना का इन्द्र को भी पता

चला उस ने सर्व प्रथम वायु देवता को भेजा, शक्ति के पास पहुंचने पर शक्ति ने पूछा तुम कौन हो :

वायु ने कहा में संसार का प्राण, सर्व समर्थ वायु हूँ।

तब भगवती ने एक तिनका रखा कि हे वायु देवता! इस का चालन कीजिए तब बहुत प्रयत्न करने पर भी वायु उस तिनके को अपने स्थान से न चला सके, तब शर्मिन्दा हो कर वायु इन्द्र के पास चले गए फिर दूसरे देवता आए सब हार मान कर चले गए।

अन्त में स्वयं इन्द्र महाराज आए जिन को देख कर अपना स्वरूप भगवती ने अदृश्य कर लिया। यह देख कर इन्द्र स्तब्ध सा रह गया, तब इन्द्र ने उसी तेजोमय स्वरूप का चिन्तन किया, तब भगवती ने प्रकट हो कर इन्द्र को अभय प्रदान किया और कहा हे देवताओ! जब जब तुम्हारे ऊपर विपत्ति आए गी मैं तुम्हारी सहायता करूंगी। क्यों कि जैसे बछड़े के रम्भाने पर गौ अपने पुत्र बछड़े को मिलने के लिए उतावली हो जाती है उसी प्रकार मैं भी तुम्हारे अर्थात् अपने भक्तों के दुःख देख कर दुःखों को दूर करने के लिए उतावली हो जाती हूं।

हे देवताओ मेरे प्रभाव से ही तुम लोगों ने दैत्यों पर विजय प्राप्त की है, मेरे प्रभाव को न जान कर व्यर्थ अपने को तुम सर्वेश्वर मान रहे हो। जैसे इन्द्रजाल करने वाला सूत्र धार कठ पुतलियों को नचाता है, उसी प्रकार मैं इश्वरी हो कर समस्त प्राणियों को नचाती हूं।

हे देवताओ मेरे भय से ही अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र अपना अपना काम करते हैं। मेरे दो स्वरूप हैं : एक साकार और दूसरा निराकर। पहला स्वरूप मायायुक्त है, दूसरा माया रहित, देवताओ ऐसा जान कर गर्व छोड़ो और मुझे सनातनी प्रकृति की प्रेमपूर्वक आराधना करो।

दुर्गा नाम

सब ऋषि मिलकर सूत जी से कहने लगे हे तपोधन! हम प्रतिदिन दुर्गा जी का चरित्र सुनना चाहते हैं। हे महा प्राज्ञ!

आपके मुख से नाना प्रकार की सुधा सदृश मधुर कथाएं सुनते सुनते हमारा मन कभी तृप्त नहीं होता।

सूत जी बोले—मुनियो ! 'दुर्गम नाम से विख्यात् एक असुर था, जो रुरु, का बलवान् पुत्र था। उस ने ब्रह्मा जी के वरदान से चारों वेदों को अपने अधिकार में कर लिया था। यह असुर देवताओं के लिए भी अजेय था, वेदों के लुप्त होने पर सारी वैदिक क्रिया नष्ट हो चली।

सौ वर्षों के लिए वर्षा बन्द हो गई, यज्ञ यागादि बन्द हो गए। तीनों लोकों में हा हा कार मच गया तब सब देवता मिलकर इसी त्रिकूट पर्वत की दिव्य गुफा में आ कर जगज्जननी मातेश्वरी वैष्णवी की स्तुती करने लगे थे। हे मातेश्वरी ! अपने क्रोध को शान्त करो हमारी रक्षा करो, रक्षा करो। जैसे आपने शुंभ-निशुम्भ, चण्ड-मुण्ड का नाश किया, जैसे धूम्राक्ष, मधुकैटभ, रक्त बीज, महिषासुर जैसे शक्तिशाली असुरों का वध किया, उसी प्रकार इस दुर्गमासुर का भी बध कीजिए। बालकों से पग पग पर अपराध बनता रहता है, केवल माता के सिवा संसार में दूसरा कौन है, जो उस अपराध को सहन करता हो।

देवताओं और ब्राह्मणों पर जब जब दुःख आता है, तब तब तुम शीघ्र ही अवतार ले कर तुम सब लोगों को सुखी बनाती हो। देवताओं की व्याकुल यह प्रार्थना सुनकर कृपामयी देवी ने अपने विराट स्वरूप का दर्शन कराया और कहा देवताओ ! तुम अभय हो कर अपने अपने धाम को चले जाओ, तुम्हारी कामना पूर्ण कर दूंगी। तब महा माया आदि शक्ति ने अपने शरीर से दश महा विद्याओं को प्रकट किया। काली, तारा, छिन्नमस्ता, श्री विद्या, भुवनेश्वरी, भैरवी, बगला, धूम्रा, श्रीमती त्रिपुर सुन्दरी, और मातङ्गी, ये दश महा विद्याएं अस्त्र शस्त्र लिए निकलीं।

माता ने असंख्य मातृकाएं प्रकट करके असुरों के साथ घोर युद्ध किया अन्त में दुर्गमासुर मारा गया, देवताओं का दुःख टल गया तब देवताओं ने भगवती की स्तुति की और कहा हे भगवती ! आपने इस वली दुर्ग असुर का बध किया है इस लिए हम आपको

दुर्गा के नाम से पुकारते हैं। अथवा जिस शक्ति का कठिनाई से पार पाया जाए या जिस के पास कठिनाई से पहुंचा जाए उसे भी दुर्गा देवी या दुर्गा शक्ति कहते हैं।

(ब्रह्मा जी की अर्धनारीश्वर रूप की प्रार्थना)

वायुदेव कहते हैं, जब फिर ब्रह्मा जी की रची प्रजा बढ़ न सकी तब उन्हों ने पुनः मैथुनी सृष्टि करने का विचार किया। इस से पहले ईश्वर से नारियों का समुदाय प्रकट नहीं हुआ था। इस लिए तब तक पितामह मैथुनी सृष्टि नहीं कर सके थे। तब उन्हों ने मन मे ऐसे विचार को स्थान दिया। जो निश्चित रूप से उनके मनोरथ की सिद्धि में सहायक था उन्हों ने सोचा प्रजाओं की वृद्धि के लिए परमेश्वर से पूछना चाहिए। क्यों की उनकी कृपा के विना ये प्रजाएं बढ़ नहीं सकतीं।

ऐसा सोच कर विश्वात्मा ब्रह्मा ने तपस्या करने की तैयारी की। तब जो आद्या, अनन्ता, लोक भाविनी, सूक्ष्मतरा, शुद्धा ईश्वर की जो परमा शक्ति हैं उसी से युक्त भगवान् त्रिलोचन की तपस्या की। तपस्या से सन्तुष्ट हो कर भगवान् शंकर ने आधे शरीर से नारी आधे से पुरुष हो कर ब्रह्मा जी के पास आए। शिव को आया देख, ब्रह्मा जी उठ खड़े हुए और पार्वती सहित शिव की स्तुति की। स्तुति से प्रसन्न हो कर शिव और शक्ति ने ब्रह्मा जी से कहा—

हे ब्रह्मन्! आपने यह तपस्या प्रजाजनों की वृद्धि के लिए की है। तुम्हारी इस तपस्या से मैं संतुष्ट हूँ, और तुम्हें अभीष्ट वर देता हूं। तब शिव ने अपने शरीर से एक शक्ति को प्रकट किया। जो जन्म, मरण. जरा, आधि, व्याधि से रहित थीं, यही ईश्वर की परा शक्ति थी। इन को देख कर ब्रह्मा जी ने इन को प्रणाम किया और इन की स्तुति की।

ब्रह्मा जी बोले - सर्व जगन्मयी देवी! महादेव जी ने सब से पहले मुझे उत्पन्न किया और प्रजा की सृष्टि के कार्य में लगाया। इन की आज्ञा से मैं सृष्टि करता हूं, परन्तु मेरे बनाए हुए देवता

आदि की सृष्टि बढ़ नहीं रही है। अतः अब मैं मैथुनी सृष्टि कर के ही अपनी सारी प्रजा को बढ़ाना चाहता हूँ। आपके पहले, नारी कुल का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था। इस लिए नारी कुल की सृष्टि करने के लिए मुझ में शक्ति नहीं है। सम्पूर्ण शक्तियों का आविर्भाव आप से ही होता है।

अतः सर्वत्र सब की सब प्रकार की शक्ति देने वाली आप मातेश्वरी हैं। इस चराचर जगत की वृद्धि के लिए आप अपने एक अंश से मेरे पुत्र दक्ष की आप पुत्री हो जाइए। ब्रह्मा जी की प्रार्थना पर महामाया ने अपनी भौंहों से एक अपने ही समान एक कान्तिमती शक्ति प्रकट की। उस को देख कर देव देवेश्वर हर ने हंसते हुए कहा—तुम आराधना कर के ब्रह्मा जी का मनोरथ पूरा करो। ईश्वर की आज्ञा से ब्रह्मा जी को ब्रह्मरूपिणी अनुपम शक्ति दे कर महा माया पुनः शिव में ही प्रविष्ट हो गई।

उस युग से ही इस जगत के भीतर स्त्री जाति में भोग प्रतिष्ठित हुआ, और मैथुन द्वारा प्रजा की सृष्टि का कार्य चलने लगा। मुनिवरो! इस से ब्रह्मा जी को भी सन्तोष और आनन्द प्राप्त हुआ। वायु देवता ने कहा देवी से शक्ति के प्रादुर्भाव का यह सारा प्रसंग मैंने तुम्हें कह सुनाया। महादेव से ही सनातन परा शक्ति को पा कर प्रजापति ब्रह्मा मैथुनी सृष्टि की इच्छा ले कर स्वयं भी आधे शरीर से अद्भुत नारी और आधे शरीर से पुरुष हो गए।

आधे शरीर से जो नारी उत्पन्न हुई थी, वह उन से शत रूपा ही प्रकट हुई थी। ब्रह्मा जी ने अपने आधे पुरुष शरीर से विराट को उत्पन्न किया। वे विराट पुरुष हो स्वायम्भुव मनु कहलाते हैं। देवी शत रूपा ने उग्र तप के द्वारा मनु को ही वर रूप में प्राप्त किया। (अर्थात् अपना पति चुना) इन्हीं से सृष्टि की उत्पत्ति का प्रादुर्भाव हुआ।

हमारे पहले राजा मनु जी हुए हैं, जिन की मनुस्मृति (दण्ड नीति की पुस्तक आज भी विद्यमान है। संसार में यह कायदे कानून

की पहली पुस्तक थी, जिस ने मानव जीवन को एक संयमित जीवन में बांध रखा था।

अब पाठक समझ ही गए होंगे कि समय समय पर माता ने इसी त्रिकूट पर्वत की दिव्य गुफा से निकल कर भारत भूमि के अनेक क्षत्रों में अद्भुत लीलाएं की हैं। मां वैष्णवी की यह गुफा दस लाख वर्ष पुरानी बतलाई जाती है। मानव को सौभाग्यवश ही इस पवित्र गुफा तथा मां वैष्णवी के दर्शन होते हैं।

।। सुन्दर गुफा वाली माता तेरी सदा ही जय हो ।।

भैरव देवता की शास्त्रोक्त प्रमाणिक कथा

आज लोक समुदाय में भैरोंनाथ की अनेक दन्त कथाएं प्रचलित हैं। किसी ने लिखा है कि भैरों एक पहाड़ी राजा था। वह माता के पीछे लगा उसने माता के साथ बड़ा युद्ध किया और अन्त में मारा गया। किसी ने लिखा भैरों राक्षस कामातुर होकर माता के पीछे लगा। किसी ने लिखा गुरु गोरख नाथ जी का एक प्रसिद्ध शिष्य भैरोंनाथ था। गुरु गोरख नाथ जी कटड़ा में आए, साथ में प्रधान शिष्य भैरोंनाथ भी था। वह हंसाली में रहने वाले पं० श्री धर जी को नीचा दिखाना चाहते थे। इस लिए हजारों शिष्य साथ में लाए थे, उन्हों ने पं० जी के घर में ही भोजन के लिए कहा। इस स्थान पर एक कन्या दिखाई दी जिस को वश में करने के लिए गुरु गोरख नाथ जी की आज्ञा से भैरों नाथ ने पीछा किया। अन्त में माता के हाथों से मारा गया। जो माता की गुफा के बाहर शिला है वह भैरों का धड़ हैं। सिर भैरों के मन्दिर में है।

अन्य लेखकों ने लिखा कि पहले भक्त देवामाई से सीधे बावा जित्तो के घार से रसायनी गुफा से होकर सीधे माता की पवित्र गुफा में पहुंच जाते थे। उसी रास्ते वापस चले जाते थे। कटड़ा नगर एक तरफ रह जाता था।

अत: कटड़ा के लोगों ने महाराजा श्री रणवीर सिंह को कह कर कटड़ा के रास्ते मन्दिर बनवाए और इस रास्ते पर माता की गुफा से दो मील कटड़ा की ओर भैरों जी का मन्दिर बनवाया और कहा कि जाती वार इस के दर्शन करने से माता के दर्शन नहीं होते। अत: वापसी पर भैरों वली के दर्शन करने चाहिए। जो भक्त रसायनी गुफा के रास्ते जाएं, वह वापसी पर अवश्य कटड़ा के

रास्ते आएं, इस से कटड़ा की रौनक बढ़ जाएगी ।

इन दन्त कथाओं के आधार पर हमें कोई भी शास्त्रीय प्रमाण नहीं मिलता और न ही भैरों पहाड़ी राजा था और न ही गुरु गोरख नाथ जी के कटड़ा में भैरों नाथ के साथ आने का ऐतिहासिक प्रमाण मिलता है ।

अगर इतनी बड़ी प्रसिद्ध शकसीयत (व्यक्तित्व) हज़ारों शिष्यों सहित यात्रा पर आए हों फिर इतिहास मौन रहे यह कैसे सम्भव हो सकता है ।

पं० श्री धर जी माता के उपासक अवश्य थे, परन्तु कोई बड़े विद्वान् या शास्त्रार्थ महारथी नहीं थे, जिन के लिए इतनी बड़ी हस्ती श्री गुरु गोरख नाथ जी को कटड़ा में आना पड़ा । अगर किसी के पास ऐसा कोई ऐतिहासिक प्रमाण या सम्वत हो तो वह लिखना चाहिए । नहीं तो लेखक अपने पाठकों को गलत गपोड़ों के अन्दर धकेलना नहीं चाहता । वह तो अपने पाठकों के सामने सत्य और ऐतिहासिक प्रमाण रखना चाहता है । आज का युग युवकों का युग है जो पठित सभ्य समाज का एक महत्वपूर्ण अंग हैं । वह तो हर वस्तु को विज्ञान और इतिहास पर परखना चाहते हैं ।

हम इस बात से सहमत हैं कि वर्तमान युग में पं० श्रीधर जी ने माता के स्थान को अवश्य जागृत किया था, भूमिका नदी जिस स्थान पर पं० जी बैठ कर भगवती का आराधन करते थे, वह स्थान अभी तक विद्यमान है । यद्यपि इन का भी लेखक को पूर्ण सम्वत् आदि उपलब्ध नहीं हो सका, फिर भी इन के विषय में इन के बंश से जानकारी अवश्य प्राप्त होती है ।

आधुनिक युग को (माता वैष्णवी के भक्तों को) पं० श्रीधर जी की विशेष देन है । कटड़ा प्रदेश चिर काल तक इन का ऋणी रहेगा । वह माता के भक्तों में कर्मठ योगी थे ।

अब हम पाठकों के सामने भैरों नाथ के विषय में कुछ शास्त्रीय तत्थ रखना चाहते हैं । वास्तव में एक भैरों तो माता का पुत्र (दास) शिव जी का गण है ।

दूसरा प्रसंग ज्यों मिलता है कि कुछ विद्वानों ने भगवती के

नौ पीठ कुछ ने ५१ पीठ, कईयों ने दो उप पीठ मिला कर ५२-५३ बना दिए हैं। इन सब शक्ति पीठों का जो रक्षक देवता है उसे भैरव कहते हैं। कुछ विद्वानों ने नौ भैरों, कुछ ने ५१ भैरों बतलाए हैं जैसे :—

सर्व प्रथम, सिद्ध पीठ —वाचस्यपत्य कोश पृष्ठ ५२६४ से :

जातो लक्ष्य वलिर्यत्र होमो वा कोटि संख्यक: ।
महाविद्या जपा कोट्य: सिद्ध पीठ: प्रकीर्तित: ।।

तन्त्रोक्ते स्थान भेदे ।

अर्थात्—जिस स्थान पर एक लक्ष वलि दी हो (भात, क्षीर, माष) जहां एक करोड़ आहुति लगी हो, जिस स्थान पर महाविद्या का एक करोड़ जाप किया गया हो, उसे सिद्ध पीठ कहते हैं। इस के आधार पर मां वैष्णवी की गुफा भी आदि सिद्ध पीठ है। मेधा ऋषि का बारह वर्ष का महा यज्ञ ज्योतिष्ठोम इसी त्रिकूट पर्वत की उपत्यका (तलहटी) में चन्द्रभागा नदी के तट पर हुआ था।

कालिका उपपुराण पृष्ठ ६० श्लोक ८६ से ८९ तक :

हुते प्रज्वलिते वह्नौ न चिराद् क्रियते त्वया ।
एतच्छैलोपत्यकायां चन्द्रभागा नदी तटे ।।
मेधातिर्महायज्ञं कर्तुं तपसाश्रमे ।
तत्र गत्वा स्वयंछन्ना, मुनिभिर्नोपलक्षिता ।।

(सिद्धि स्थान) वाचस्पत्य पृ० ५२६७ से

अत: परं प्रवक्ष्यामि सिद्धि स्थानानि यामितु ।
यस्मिन् आराधिता देवी क्षिप्रं भवति सिद्धियदा ।।

अर्थ—जिस स्थान पर देवी की आराधना करने से जल्दी ही फल प्राप्त हो जाए अर्थात् शीघ्र ही मनोकामना पूर्ण हो जाए उसे सिद्ध स्थान कहते हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर भी यह स्थान सिद्ध स्थान है। जितनी जल्दी यहां पर सिद्धि प्राप्त होती है अन्यत्र नहीं। त्रिकूट पर्वत में मां वष्णवी की

गुफा सिद्ध स्थान है, इस का प्रमाण देवी पुराण से भी मिलता है।

वाचस्पत्य कोश पृ० ५२९७ देवीपुरान से उध्दृत् :

सिद्धि स्थान कौन कौन से हैं। यह पाठ देवी पुराण का है।

तुंगारं, शतशृंगं च त्रिकूटं पर्वतं तथा।
विंध्या गंगा सरित यत्र रेवा तीर मथा पिवा ॥
नीपयाषमी असुरक्षात, अथवा मण्डलेश्वरे।
शंकरेश्वर रामेशे अथवा अमरेश्वरे ॥
वेत्रवत्या स्तटे रम्ये, हरिश्चन्द्र तथा पुरे।
सरस्वती तटे पुण्ये, सुगन्धा यत्नो ऽपिवा ॥
स्थानेष्वेषु जयं कुर्यात् नन्दाहे कृतमानसः।
भैरवं शूलभेदे च चण्डीशं त्रिपुरान्तकम् ॥
अष्ट चक्रं चक्रोश्वासं कपालाक्षा गुनमामकम्।
अजाविकं खरोष्ट्राक्षं स्थानानि एतानिच् ॥

यही सिद्धि स्थान विद्वानों ने बतलाए हैं। जहां पर तप या आराधना करने पर शीघ्र फल की प्राप्ति होती है।

सिद्धि कब करनी चाहिए—उस के लिए सिद्धि योग बदलाया हैं। वाचस्पत्य पृ० ५२९७ से सिद्धियोग :

शुक्रेनन्दा, बुधे भद्रा, शनौ रिक्ता कुजे जया।
गुरौ.पूर्णा च संयुक्ता सिद्धि योगः प्रकीर्तितः ॥

सिद्धि योग कौन सा है : –

शुक्रवार को प्रतिपदा, षष्टी, एकादशी यह नन्दा तिथियां हैं।

द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी—भद्रा तिथि : तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी जया ।

चतुर्थी, नौवीं, चतुर्दशी यह रिक्त तिथियां कही गई हैं।

पंचमी, दशमी, पूर्णमाशी सह पूर्ण तिथियां हैं।

प्रतिपदा, षष्टी, एकादशी : नन्दा। द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी : भद्रा। तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी : जया। चतुर्थी,

नवमी, चतुर्दशी : रिक्ता। पंचमी, दशमी, पूर्णिमा : पूर्णा।

(सिद्धि, दक्ष कन्या भेदे, वह्नि पुराणे)

अब पाठकों के सन्मुख सिद्धिपीठ, सिद्धि स्थान तथा सिद्धि योग आगए हैं। अब पाठक पीठ रक्षक भैरों को भी पढ़ें।

वाचस्पत्य पृ० ४३४१

एक पंचाशच्च पीठाः शक्ति भैरव देवताः।
अंग प्रत्यंग पातेन बिष्णु चक्र क्षतेन च ॥
काश्मीरे कण्ठ देशेश्च, त्रिसन्ध्येश्वर भैरवः।
स्थनो जलन्धरे, इत्यादि, एतानि नव पीठानि शंसति नव भैरवः॥
श्री शैलेच मम ग्रीवा महालक्ष्मीस्तु देवता।
भैरवः संवरो नन्दो देश देशे व्यपस्थिताः ॥

(कालिका उपपुराण में ५१ पीठों का वर्णन १६ में अ० में देखना चाहिए।)

अब यह स्पष्ट हो जाता है कि भैरों माता के पीछे लगने वाला कोई राक्षस या दानव नहीं है, वह तो माता के पीठ का रक्षक देवता (डयोडी आफीसर) है। उस का पूजन तो सर्व प्रथम होना चाहिए, न कि माता के दर्शनों के पश्चात्।

यह भी स्पष्ट हो गया है कि कटड़ा वैष्णवी देवी सिद्धपीठ का जो पीठ रक्षक भैरों है उस का नाम संवरा नन्दा, भैरों है। वास्तव में शास्त्रों के आधार पर यही भैरों जी की कथा का वर्णन मिलता है। अन्य कपोल कल्पित ही सत्य समझना चाहिए। इस से कई अन्ध विश्वासी भक्तों के मन को ठेस तो लगे गी ही परन्तु क्या करें हम भी लाचार हैं। शास्त्रों में कहीं भी भैरों का माता के पीछे लगने का प्रसंग है नहीं। गलत कथा लिखने को हम तैयार नहीं। माता के पीठ रक्षक भैरों की सदा ही जय हो।

———

वैष्णवी माता का सिंह (शेर)

हमारे हिन्दु शास्त्र में प्रत्येक देवी या देवता का कोई न कोई वाहन अवश्य बतलाया गया है । इसी सिद्धान्त के आधार पर भगवती वैष्णवी आदि शक्ति का वाहन सिंह (शेर) है। यह सिंह वास्तव में सर्व धर्म स्वरूप है जैसे प्रत्येक देवता के तेज से शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ था, उसी प्रकार प्रत्येक देव के अंश से सिंह का शरीर निर्मित हुआ है ।

जब भगवती महा माया को सब देवों ने अस्त्र, शस्त्र, वस्त्र, आभूषण दिए, तब पर्वत राज हिमालय ने भगवती को अनेक प्रकार के रत्न दिए तथा सवारी के लिए दिया केसरी (बबर शेर) सिंह तभी से मां वैष्णवी को सिंह वाहनी कहने लगे। (हिमवान वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च) ।

आदि शक्ति ने संसार में एक मर्यादा स्थापित करदी, कि जिस नारी स्वरूप को अबला बल रहित कहा जाता था वह तो सबला है। (अर्थात् वह शक्तिशालिनी, तेजस्वनी बल युक्ता है) कोई भी हमारा पुरुष वाचक देवता सिंह सवारी नहीं है। सिंह के कान खींच कर उस के ऊपर सवारी करने वाली केवल जगदम्बा ही है। शक्ति के आगे बड़े बड़े सिंह सूरमे नत मस्तक हो जाते हैं। त्रिकालज्ञ ऋषियों ने, आर्यों के सामने सम्मिलित पारिवारिक जीवन का कितना अच्छा उदाहरण रखा है :

एक सम्मिलित परिवार में भिन्न भिन्न प्रकृति के व्यक्ति होने पर भी वह सम्मिलित परिवार चलता था और प्रेम पूर्वक चलता था। देखिए जैसे भगवान् शिव की बैल की सवारी है । शिव शक्ति सिंह वाहनी (शेर की सवारी) । कार्तिकेय मयूर

(मोर) की सवारी। भगवान् विघ्न विनाशक श्री गणेश जी चूहे की सवारी। यह सब वाहन एक दूसरे को खाने वाले हैं। जैसे शेर बैल को, मोर शिव के गले में पड़े सर्पों को, सर्प गणेश वाहन चूहों को खा जाते हैं। इन का जन्मसिद्ध वैर है परन्तु फिर भी भारतीय ऋषि मर्यादानुकूल यह सब प्रांतीय भेद-भाव मिटा कर हम सम्मिलित आदर्श पारिवारिक जीवन बिता रहे हैं। और फिर भी बितायें गे।

वास्तव में रजो गुण पर सत्व गुण की ही विजय को अलंकारिक ढंग से बताया गया है। जैसे दक्ष प्रजापति ने चन्द्रमा को सत्ताईस कन्याएं व्याह दीं और रोहिणी से चन्द्रमा ज्यादा प्रेम करते थे। चन्द्र मास में (एक महीने में) सत्ताईस ही नक्षत्र होते हैं और रोहिणी तारा चन्द्रमा के बिल्कुल साथ में ही होता है ऐसे ही शक्ति का तथा धर्म का प्रतीक भगवती का सिंह है।

कहीं कहीं चित्रों पर सिंह की सवारी न हो कर व्याघ्र (चीते) की सवारी बतलाई गई हैं। इस प्रसंग के पीछे भी एक विचित्र इतिहास माता के भक्तों को पढ़ने को मिलेगा।

शुम्भ - निशुम्भ ने विश्वात्मा ब्रह्मा जी से विचित्र वरदान मांगे थे। जो कोई भी व्यक्ति दैत्य - दानव, सुर - मानव हमें प्रभो! मार न सके, हमारी मृत्यु जगदम्बा के अंश से उत्पन्न शक्ति* 'अयोनिजा' पर पुरुष अस्पर्शा से हो, ऐसे वरदान लिए थे। वरदान पा कर दानव - मानव सब घमण्ड में आ ही जाते हैं। इसी सिद्धान्त के वशीभूत हो कर शुम्भ - निम्शुभ ने देवताओं को परास्त करके अनेक अधिकार छीन लिए। इन्द्र का पद भी स्वयं सम्भाल लिया।

ऐसा होने पर सब देवता दुःखी हो कर भगवान् शिव के पास गए कि महाराज दैत्यराज शुम्भ - निशुम्भ ने हमें परास्त कर दिया है, हमारे सारे अधिकार छीन लिए हैं। प्रभो! ब्रह्मा जी के वरदान मिथ्या (झूठ) नहीं हो सकते। अतः आप कोई ऐसी

---

* जो शक्ति मैथुनी सृष्टि के विना ही पैदा पुई हो, दिव्यकन्या।

युक्ति निकालें जिस से पार्वती जी किसी प्रकार घर से बाहर चली जाएं और ब्रह्मा जी की तपस्या करें जिस से उन के अंश से शक्ति प्रकट हो कर दैत्यों का नाश कर दें। तब दुखी हुए देवताओं की व्याकुल प्रार्थना सुन कर भगवान् शिव ने देवताओं को अभय दे कर उन्हें अपने अपने धाम भेज दिया।

एक दिन वामदेव जी ने हंसते हंसते भगवती पार्वती को काली कह दिया, यह हास सुन कर भगवती ने कहा था। यदि आप को इस काले रंग पर प्रेम नहीं है तो आप इतनी देर तक अपनी इच्छा को क्यों दवाए रहे, प्रकट क्यों नहीं किया। देवी ने कहा प्रभो! पति के प्यार से बञ्चित होने पर जो नारी अपने प्राणों का भी परित्याग नहीं कर देतीं, वह कुलांगना शुभलक्षणा होने पर भी सत्पुरुषों द्वारा निन्दित ही समझी जाती है। मेरा शरीर गौर वर्ण का नहीं है। इस बात को लेकर आप को बहुत खेद होता है। अन्यथा क्रीड़ा या परिहास में भी आप के द्वारा मुझे काली, कलूटी कहा जाना कैसे सम्भव हो सकता था!

मेरा कालापन आपको प्रिय नहीं है, इस लिए वह सत्पुरुषों द्वारा भी निन्दित है। अतः तपस्या द्वारा इस का त्याग किए बिना अब मैं यहां रह ही नहीं सकती।

शिव ने कहा देवी यदि तुम्हें अपनी श्यामलता को ले कर दुःख हो रहा है तो यह मेरी इच्छा से या स्वयं की इच्छा मात्र से बदला जा सकता है।

भगवती जी ने कहा—नहीं नाथ आप के द्वारा या अपने द्वारा बदलने का संकल्प नहीं कर सकती। अब तो तपस्या द्वारा ब्रह्मा जी की आराधना करके ही मैं शीघ्र गौरी बन जाऊं गी।

फिर देवी, पति - माता-पिता की आज्ञा ले कर तप करने को सखियों सहित पूर्वपरिचित तपोस्थान इसी त्रिकूट पर्वत की गुफा में चली गईं। जिस के लिए लिखा है (सुतः पर्वत राजस्य त्रिकूटो नाम पर्वतः)।

हम ने पहले ही लिख दिया है कि भगवती वैष्णवी का यह आदिवास स्थान है। इस को ही भगवती का आदि पीठ कहते हैं।

जब जब भगवती ने तप किया इसी परिचित स्थान पर किया है। देवताओं ने जब जब भगवती की स्तुति की है इसी स्थान पर की है। इस भूमि का एक एक कण पावन तथा बन्दनीय है। इस स्थान पर भगवती ने घोर तपस्या की।

एक दिन इन की ओर आता एक व्याघ्र देखा गया, ज्यों ही व्याघ्र निकट आया तो भगवती के देखने मात्र से ही वह जड़वत हो गया, वह दुष्ट भाव को लेकर देवी जी के सन्मुख आया था, परन्तु अब चित्र लिखित सा खड़ा रहा, भूख प्यास से पीड़ित हो कर मां की ओर बुरी नजर से देख रहा था कि यह मेरा भोजन है। परन्तु माता समझती थी कि यह मेरा उपासक है। जंगली जीव जन्तुओं से मेरी रक्षा कर रहा है। उन के मन में दयाभाव ही जागृत था। सच ही मां जगद् जननी जगद्अम्बा (मां) ही है।

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

अर्थात् संसार में पुत्र कुपुत्र हो सकता है परन्तु माता, माता ही रहती है वह कुमाता नहीं बनती। मां भगवती की स्नेह भरी दृष्टि पड़ते ही व्याघ्र की जड़ता धीरे धीरे दूर होने लगी उस के मन से दुष्ट भाव हट कर श्रेष्ठता के भाव पैदा हो गए, उस के मन में तृप्ति सी बनी रहने लगी। वह माता का सच्चा उपासक बन गया। वह जंगली जानवरों को माता के पास से खदेड़ देता था। उधर माता की उग्र तपस्या को देख कर ब्रह्मा जी स्वयं चल कर शक्ति के पास आए। ब्रह्मा जी को आया देख भगवती ने उनका यथोचित सत्कार किया।

ब्रह्मा जी ने कहा–हे जगद् जननी तुम स्वयं जगद् की सब मनो कामनायें पूर्ण करने वाली हो, फिर यह उग्र तप कैसा ? यह केवल आप की लीला मात्र है। ब्रह्मा जी ने कहा–देवी ! मैं आप की कौन सी इच्छा पूर्ण करूं।

तब ईश्वर की परा शक्ति ने कहा–पिता मह ! मुझे भगवान् शिव ने उपहास में काली कहा है, अब में शीघ्र ही गौरी बनना चाहती हूँ।

तब ब्रह्मा जी ने कहा - एवमस्तु (ऐसा ही हो। परन्तु देवी

हम भी आप से प्रत्युपकार (बदले) में यह मांगना चाहते हैं कि अपनी काली चमड़ी से एक ऐसी शक्ति उत्पन्न करो जो शुम्भ निशुम्भ का वध करे। सृष्टि कर्ता ब्रह्मा जी के कहने मात्र से ही भगवती पार्वती के शरीर से काली चमड़ी सांप की केंचुली की तरह उन के शरीर कोष से उतर गई और वह गौरी हो गईं।

भगवती के शरीर कोष से उतरी काली चमड़ी से तुरन्त एक दिव्य कन्या उत्पन्न हो गई। जो देखने में अद्वितीय सुन्दरी थी।

तब ब्रह्मा जी ने उस दिव्य शक्ति वैष्णवी को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित कर दिया। आती वार ब्रह्मा जी अपने साथ एक सिंह (शेर) भी लाए थे। वह भी उस शक्ति को प्रदान कर दिया, पहले कल्प में हिमालय ने सिंह दिया था, अब स्वयं सृष्टि कर्ता ब्रह्मा जी ने सिंह प्रदान किया।

शरीर कोश से उत्पन्न होने के कारण ब्रह्मा जी ने उस देवी का नाम कौशिकी रखा। उस का निवास स्थान बिन्ध्य पर्वत को बतलाया। उसे देवकार्य सिद्ध करने को तुरन्त निवास स्थान पर भेज दिया।

उमा ने ब्रह्मा जी से एक और प्रार्थना की कि भगवन् यह व्याघ्र मेरे पास आया है। इस को मुझे साथ ले जाने की अनुमति प्रदान की जाए। ब्रह्मा जी ने उस के पूर्व जन्मों की दुष्टता का तथा क्रूरता का वर्णन किया।

परन्तु भगवती ने कहा प्रभो! इस ने मेरी जंगली जानवरों से रक्षा की है। यह मेरा श्रद्धालु भक्त बन गया है, अतः आप इस को मुझे साथ ले जाने की आवश्य ही अनुमति प्रदान करें। तब ब्रह्मा जी शक्ति का वचन टाल न सके और व्याघ्र को साथ ले जाने की अनुमति प्रदान कर दी। तब हर्ष से सखियों के सहित व्याघ्र को आगे रख कर भगवती ने शिव धाम को प्रस्थान किया।

कैलाश भवन में सब द्वार-रक्षक, सम्बन्धी, इष्ट मित्र तथा स्वयं भगवान् 'शिव' भगवती की अगवानी को द्वार पर आए थे। सादर सप्रेम सत्कार के पश्चात् शक्ति ने शिव भवन में प्रवेश किया,

कुशल मंगल पूछने के पश्चात् देवी के गौर शरीर को देख कर शिव ने प्रसन्नता प्रकट की। तब भगवती ने अपनी एक इच्छा प्रकट की कि भगवन्! यह मेरे साथ एक व्याघ्र आया है इस को मैं अपने अन्तः पुर में रखना चाहती हूँ। आप इसे गण की संज्ञा प्रदान करें।

भगवती की इस इच्छा को भगवान् शिव ने पूर्ण किया, उस को भी अपने अन्य गणों के साथ गण की संज्ञा प्रदान कर दी। शिव को तथा शिव शक्ति को उस ने आनन्दित किया था इस लिए इस को सुनन्दी गण की संज्ञा दी गई। तभी से माता का वाहन व्याघ्र को भी माने जाने लगा है। इसी लिए कहीं कहीं चित्रों में व्याघ् को भी माता का बाहन बतलाया गया है। यही माता के सिंह (शेर) की कथा है जो भिन्न शास्त्रों पुराणों में उपलब्द होती है।

माता का सिंह वास्तब में धर्म का चिन्ह है। माता की शक्ति धर्म पर आधारित है। शेर वास्तव में धर्म ध्वजा है। इसी लिए माता की शक्ति आसुरी न हो कर सात्विकी है। इसी लिए इस को वैष्णवी, शक़्ति कहा गया है।

वैष्णवी देवी की गुफा में सिंह के दाएं पांव के नीचे मार्कण्ड़ेय महर्षि ने वीसा यन्त्र दवाया है, जो भक्तों की मनो-कामनाओं को जल्दी ही पूर्ण करता है।

सिंह के प्रत्येक शरीर के अंगों में देवताओं का बास है। जैसे देवी पुराण में वर्णित है प्रसंग :—

मेरुः स्याये वृषणेंन्धयस्तु जनने स्वेद स्थिता निम्नगा।
लागुले सह दैवतै विलसिता वेतावलं वीर्यंकत् ।।
श्री विष्णोः सकला सुरा अपि यथा स्थानं स्थिता यस्यतु।
श्री सिंहो ऽखिल देवता मय वपुर्देवी प्रिया पातुमाम् ।।
यो वालग्रह पूतनादि भयहृद्यः पुत्रलम्मी प्रदोयः,
स्वप्न ज्वर रोग राजभय [illegible]ला ।।

सर्वत्रोत्तम कविभिर्यस्योपमा दीयते ।
देव्या वाहन रेषरोग भय हृत्सिंहो ममास्त्विष्टदः ॥५॥
(इति देवी पुराणोक्त देवी वाहन सिंह ध्यानम्)

गुफा में दर्शनों के लिए जाते भक्त जयकार बुलाते हैं। वग्घे शेरां वाली माता तेरी सदा ही जय हो। सुन्दर गुफा वाली माता तेरी सदा ही जय हो।

———

माता वैष्णवी के अनेक अवतार

संभवामि युगे युगे—जैसे भगवान् युग युग में अवतार लेते हैं। वैसे ही उन की परा शक्ति भी युग युग में अवतार लेती हैं। क्यों ? श्रेष्ठ तुरुषों की रक्षा के लिए दुष्ट, दानवों का संहार करने के लिए और धर्म की स्थापना के लिए भगवान् तथा भगवती प्रकट होते हैं या अवतार लेते हैं।

हमारे शास्त्रों में जैसे त्रिगुण ममी सृष्टि है। (अर्थात् रज, तम, सत्वगुणी बतलाई गई है) वैसे ही त्रिदेबमयी भी है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव। जैसे यह तीनों देव पुरुष अवतार में आते हैं, वैसे ही महा काली, महा लक्ष्मी, महा सरस्वती, मातृ अवतारों में (अर्थात् स्त्री सं० वाचक अवतारों में) आते हैं।

(मेल, फीमेल अवतार) हमारे शास्त्रों में ज़ितनी महत्ता पुरुषों को दी है, उतनी ही मातृ शक्ति (स्त्री जाति को भी दी है) भगवान् और भगवती का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जैसे चन्द्र और चांदनी, वृक्ष और बीज का नैंकट्य का सम्बन्ध है। वैसे ही परमात्मा तथा परा शक्ति का। या प्रकृति और पुरुष का सम्बन्ध जुड़ा हुआ है।

प्रकृति के बिना पुरुष (परमात्मा) की सत्ता को कौन जान सकता है। प्रकृति की रचना ही भगवान् की सत्ता या ईश्वर के अस्तित्व को प्रकट कतती है। अन्यथा, मनुष्य परमात्मा को कैसे पहचान सकता है। इस चराचर जगत का निर्माण वही ईश्वरी शक्ति महा माया करती है। वही इस संसार को मोहित किए हुए है। वही संसार का पालन पोषण करती है और प्रसन्न होने पर मनुष्यों को मुक्ति भी देती है। वही वैष्णवी शक्ति है। जैसे—

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त वीर्या ।
विष्वस्यबीजम् परमासि माया ॥
संमोहितम् देवी समस्त मेतत् ।
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति हेतुः ॥

अर्थ : तुम अनन्त बल सम्पन्न वैष्णवी शक्ति हो । शिव की कारणभूता परामाया हो, देवी ! तुम ने इस समस्त जगत को मोहित कर रखा है। तुम्हारी ही प्रसन्नता से पृथ्वी पर मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

महा शक्ति के अनेक रूप हैं। संसार के निर्माण में वह प्रकृति है। योग शास्त्र में वह योगशक्ति या परा शक्ति है। इस का पार बिना प्रभु कृपा सम्भव नहीं ।

सृष्टि में अनेक कल्प हैं । तथा अनेक युग, एक कल्प में बीतते हैं। जैसे श्रीश्वेतवरार कल्प–का अठाईसवां कलियुग इस समय चल रहा है। जैसे हमारी सृष्टि में ब्रह्मा जी भी बदलते रहते हैं वैसे ही यह शक्तियां कल्प तथा युगों में अपने रूप स्थान बदलती रहती हैं। यहां तक कि हमारे अवतार भी बदलते रहते हैं। वह भी २४ संख्या में बटे हुए हैं । जैसा समय, स्थान, कार्य होता है उसी के अनुसार वह अपना रूप रंग स्थान बना लेते हैं। जैसे –

मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, राम, कृष्ण ।

ऐसे अनेक नाम हैं। वैसे ही आद्या शक्ति महामाया के भी कई अवतार तथा नाम हैं। जो समय समय पर तथा स्थान स्थान पर प्रकट होते हैं । जैसे शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चन्द्रघण्टा, कूष्माण्डा, स्कन्दमाता, दुर्गा, भीमा, भवानि, ब्रह्माणि, वैष्णवी, शिवा, पार्वती सभी उसी परा शक्ति के रूप हैं।

यह ईश्वर की एक ही शक्ति है जो उसी प्रभु की प्रेरणा से अनेक रूपों में विभक्त हो कर विश्व को मोहित करती है। यही उस की माया है। जिस को ऋषि, मुनियों ने दुरत्यया कहा है। इस शक्ति के रूप, रंग, नाम भिन्न हैं परन्तु है ईश्वर की शक्ति। जैसे सोने के कई गहने अलग अलग नामों से पुकारे जाते हैं, परन्तु

सब में एक सोना ही काम कर रहा है। गहने के बनने से पहले भी सोना था, अब भी सोना है। गहने (आभूषण) को पिगला देने पर भी सोना ही है।

बस ऐसे ही आदि, मध्य, अन्त में ईश्वर की एक ही शक्ति कार्य कर रही है। इस शक्ति में स्त्री, पुरुष का भेद नहीं है। सब एक ही स्वरूप हैं। अब हम इस शक्ति का सब में प्रबल अवतार जो वैष्णवी के रूप में हुआ है उसी का वर्णन माता के भक्तों के सन्मुख रखने लगे हैं।

यह वर्णन तो रत्नाकर (समुद्र) के समान है। इस में से कई भक्त रत्न, मोती, कीमती पत्थर निकाल लेंगे। कई खाली मुट्ठी वापिस लौटें गे। यह तो अपने भाग्य या उसी भगवती की अपार कृपा से ही सब कुछ सम्भव है। मानसरोवर से मोती हंस ही चुन सकते हैं जिन को इन की पहचान है। वक और काक (कौए) टाएं टाएं कर के मल का ही सेबन करें गे। ऐसे ही इस पुस्तक को पढ़ कर हंस रूपी सच्चे मां वैष्णवी के भक्त लाभ उठा सकें गे। परन्तु काक रूपी दूषित पुरुष इस पुस्तक को पढ़ कर आवश्य ही टायें टायें करें गे।

क्यों कि महात्मा तुलसीदास जी ने लिखा है -

सकल पदार्थ हैं जग मांहीं, कर्म हीन नर पावत नाहिं।

इस प्रभु की सृष्टि या संसार में सब कुछ है परन्तु मन्द भाग्य कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। हे भक्तो जितनी भी प्रभु की शक्तियां अनेक रूपों में प्रकट हुई हैं। उन सब में वैष्णवी शक्ति श्रेष्ठ तथा सशक्त है। जैसे कहा भी है—

त्वं वैष्णवी शक्ति अनन्तवीर्या, विश्वस्य बीजं परमासिमाया।

हे वैष्णवी शक्ति ! तू अनन्त वल की मालिक है। तू विश्व संसार) की बीज रूपा है, तुम ने ही इस विश्व को मोहित कर रखा है। मां तेरी प्रसन्नता से ही भक्त मोक्ष (मुक्ति) अर्थात जन्म - मरन के चक्र से छूट जाते हैं। ऐसी वैष्णवी मां की गाथा (कथा) मां के श्रद्धालु भक्तों को सुनाने लगे हैं।

एक कल्प में दक्ष प्रजापति ने अपनी सत्ताईस कन्यायें चन्द्रमा को ब्हाह दीं। परन्तु चन्द्रया जी सब से ज्यादा प्रेम रोहिणी से करते थे। इस से दुःखी हो कर दक्ष प्रजापति ने चन्द्रमा को शाप दे दिया कि तुम क्षय को प्राप्त हो जाग्रो।

तब सब देवता बड़े दुःखी हुए। वह सब मिल कर ब्रह्मा जी के पास गए, तब ब्रह्मा जी ने एक नदी का प्रादुर्भाव किया जिस का नाम चन्द्र भागा था। इस नदी की उत्पत्ति वृहद्लोहितसर तथा सीतारव्य नाम नदी के संगम से हुई थी। इस सरोवर में स्नान करने से चन्द्रमा शाप मुक्त हो गए।

वास्तव में यह सीता नदी गंगा की ही एक धार का नाम है। गंगा जी की चार धारायें थीं, जो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर की ग्रोर जाती हैं (शिवपुराण) पूर्व की ओर जाने वाली इस गंगा की धारा को ही सीतारव्य नदी कहते हैं। इसी स्थान पर लाहुल (कुल्लू) लोहितसर या रुग्रालसर पर ब्रह्मा जी की मानस पुत्री सन्ध्या ने तप किया था। यहां पर मुनि बसिष्ट उन से मिले।

कुल्लू की एक तहसील केलिंग में वसिष्ठ जी की गुफा भी बनी है। यहीं से चन्द्रभागा नदी की उत्पत्ति हुई है। कुछ लेखक चन्द्र भागा को चनाब या चीन ग्राव कहते हैं। परन्तु शिव पुराण में (कल्याण ग्रंक में जैसा वर्णन दिया है उस से स्पष्ट होता है कि यह सनासर या (सतीसर) को मानना ज्यादा उपयोगी है जैसे संक्षिप्त शिव पुराण ग्रंक पृ० १११ ब्रह्मा जी कहते हैं -

---

कालिका उपपुराण पृ० ५७

यत्र देव सभा भूता सानौ तस्य महागिरेः।
तत्र जाता देव नदी सीताक्षा वचनाद् विधेः॥
स्नापयित्वा यदा चन्द्रं सीता तोयैः मनोहरैः।
चन्द्रपपु ब्रह्म वाक्याद् सर्वे ते त्रि दिवौकसः॥
तदा सीता जलं चन्द्र स्नान योगाच्च सा ऽमृतम् जलम्।
तद्धर्शनाज्जला तस्मादुत्थिता कन्यकोत्तमा।
चन्द्रभागेति तन्नाम विधिश्चक्रे स्वयंततः॥

हे नारद ! मैं ने वसिष्ठ से कहा है कि तुम सन्ध्या के पास जा कर उसे तप का उपदेश करो । जो आज्ञा कह कर वसिष्ठ मुनि उसी समय वहां से चले गए । और बृहद्लोहित सरोवर पर सन्ध्या के पास गये । चन्द्र भाग पर्वत पर एक देव सरोवर है, जो जलाशय गुणों से परिपूर्ण है । मानसरोवर के समान शोभा पाता है । वसिष्ठ ने उस सरोवर को देखा और उस पर बैठी हुई सन्ध्या पर भी दृष्टिपात किया ।

कमलों से प्रकाशित होने वाला वह सरोवर सन्ध्या से वैसे ही भोभा पा रहा था । जैसे प्रदोष काल में उदित हुए चन्द्रमा और नक्षत्रों से आकाश शोभा पाता है । सुन्दर भाव वाली सन्ध्या को वहां बैठा देख, मुनि ने कौतुहल पूर्वक उस बृहल्लोहित नाम वाले सरोवर को अच्छी तरह देखा । उसी पर्वत के शिखर से दक्षिण समुद्र की ओर जाती हुई, चन्द्र भागा नदी का भी उन्हों ने दर्शन किया । जैसे गंगा हिमालय से निकल कर समुद्र की ओर जाती है, उसी प्रकार चन्द्र भागा के पश्चिम शिखर का भेदन कर के वह नदी समुद्र की ओर जा रही है ।

यहीं पर बैठी सन्ध्या को देख कर वसिष्ठ जी ने आदरपूर्वक (सनासर से चन्द्र भागा पश्चिम की ओर सलाल (रियासी) में जा कर इस ने पश्चिम शिखर का भेदन किया है, जो स्पष्ट दृष्टि-गत होता है । त्रिकूट पर्वत के चर्ण छूकर यह नदी दक्षिण की ओर समुद्र की तर्फ चाली है) इस विषय पर अभी और तत्थय देखे जा रहे हैं ।

वासिष्ट जी बोले भद्रे ! तुम इस निर्जन पर्वत पर किस लिए आई हो ? किस की पुत्री हो और तुम ने यहां क्या करने का विचार किया है ? मैं यह सब सुनना चाहता हूँ । यदि छिपाने योग्य बात न हो तो बताओ । महात्मा वसिष्ठ की यह बात सुन कर सन्ध्या ने उन महात्मा की ओर देखा । वे अपने तेज से प्रज्व-लित अग्नि के समान प्रकाशित हो रहे थे ।

सन्ध्या ने उन तपोधन को प्रणाम करके कहा । सन्ध्या बोली ब्रह्मन् ! मैं ब्रह्मा जी की मानस पुत्री हूं । मेरा नाम सन्ध्या है

और मैं तपस्या करने के लिए इस निर्जन पर्वत पर आई हूं। यदि मुझे उपदेश देना आप को उचित जान पड़े तो आप मुझे तपस्या की बिधि बताइए। मैं यही करना चाहती हूँ। मैं तपस्या की बिधि को बिना जाने ही तपोवन में आ गई हूँ। इसी लिए चिन्ता से सूखी जा रही हूँ, हृदय कांप रहा है।

तब उस ब्रह्मचारिणी सन्ध्या को वसिष्ठ मुनि ने कालिका पुराण के अनुसार विष्णु भगवान् की तपस्या करने को कहा। क्योंकि वही संसार के आदि पुरुष हैं। सन्ध्या से तपस्या का सारा बिधि-बिधान बता कर वसिष्ठ मुनि वहां पर ही अन्तर्धान हो गए (छुप गए)।

तब सन्ध्या ने चन्द्र भागा नदी के तट पर इसी त्रिकूट पर्वत पर भगवान् विष्णु की उग्र तपस्या की, तो विष्णु भगवान् प्रसन्न हुए, और प्रत्यक्ष दर्शन दे कर सन्ध्या से वर मांगने को कहा।

भगवान् विष्णु से दिव्य दृष्टि तथा दिव्य वाणी को पाकर उन की स्तुति कर के सन्ध्या ने कहा हे नाथ! यदि आप मेरी साधना से प्रसन्न हैं और आप मुझे वर के योग्य मानते हैं तो प्रथम वर मेरा यह पूर्ण करो कि संसार में आकाश और पृथ्वी पर जन्म लेते ही कोई भी जीव सकामता (काम युक्त) की भावना को प्राप्त न हों। नाथ! मेरी सकाम दृष्टि न पड़े। मेरे जो पति हों वे भी मेरे अत्यन्त सुहृद हों। पति के अतिरिक्त जो भी पुरुष मुझे सकाम भाव से देखे, उस के पुरुषत्व का नाश हो जाए। (वह तत्काल नपुंसक हो जाए)। निष्पाप सन्ध्या का यह बचन सुनकर प्रसन्न हुए भगवान् विष्णु बोले—

देवी सन्ध्ये! सुनो, भद्रे! तुमने जो जो वर मांगा है, वह सब तुम्हारी तपस्या से सन्तुष्ट होकर मैंने दे दिया। संसार में प्राणियों की चार अवस्थाएं होती हैं। पहली शैशवावस्था, दूसरी कुमारावस्था, तीसरी यौवनावस्था, चौथी वृद्धावस्था। अतः देवी! तीसरी अवस्था के आने पर जीव काम भाव से युक्त होंगे। परन्तु कहीं कहीं पर दूसरी अवस्था के अन्त में भी काम

युक्त हो जाया करें गे ।

तुम्हारी तपस्या से मैंने संसार में यह मर्यादा स्थापित करदी है जिस से जीव जन्म लेते ही काम धारी न वन जाए। तुम भी इस लोक में दिव्य सती भाव को प्राप्त करोगी, जो तीनों लोकों में दूसरी स्त्री के लिए संभव नहीं होगा। पाणिग्रहण करने वाले पति के सिवा जो कोई भी पुरुष सकाम होकर तुम्हारी ओर देखे गा वह तत्काल नपुंसक होकर दुर्बलता को प्राप्त हो जाएगा। तुम्हारे पति एक दिव्य महर्षि होंगे जो तुम्हारे साथ सात कल्पों तक जीवित रहेंगे ।

तुमने मुझसे जो जो वर मांगे थे वे सब मैंने पूर्ण कर दिये हैं। अब तुमसे दूसरी बात कहूंगा जो तुम्हारे पूर्वजन्म से संबंध रखती है। (एक वार सन्ध्या के मन में काम भाव उत्पन्न हुआ था)। हे देवी! तुम ने अपने मन में पहले ही यह संकल्प कर रखा है कि मैं इस शरीर को अग्नि में जला दूंगी। उस प्रतिज्ञा को सफल करने के लिए तुम्हें एक उपाय बतलाता हूँ। उसे निः-सन्देह करो।

मुनिवर मेधातिथि का एक यज्ञ चल रहा है, जो बारह वर्षों तक चलने वाला है। उस में अग्नि पूर्णतया प्रज्वलित है। तुम बिना बिलम्ब किए उसी अग्नि में अपने शरीर का उत्सर्ग कर दो। इसी पर्वत की उपत्यका में (अर्थात् त्रिकूट पर्वत की तलहटी में) चन्द्रभागा नदी के तट पर तपसाश्रम में मुनिवर मेधातिथि महायज्ञ का अनुष्ठान कर रहे हैं। तुम अपनी इच्छा से वहां जाओ, मुनि तुम्हें वहां देख नहीं सकें गे। मेरी कृपा से मुनि की अग्नि से प्रकट हुई उनकी पुत्री हो जाओ गी।

तुम्हें अपने मन में जिस किसी स्वामी (पति) को प्राप्त करने की इच्छा हो, उस को मन में धारण करके अग्नि में प्रवेश कर जाओ।

हे सन्ध्ये! जब तुम इस त्रिकूट पर्वत पर चार युगों तक तपस्या कर रही थीं, उन्हीं दिनों उस कल्प का सत्य युग बीत जाते

पर त्रेता के प्रथम भाग में प्रजापति दक्ष के बहुत सी कन्याएं उत्पन्न हुईं तो दक्ष ने अपनी उन सुशीला कन्याओं का विवाह यथा योग्य वरों के साथ कर दिया। सत्ताईस कन्याएं चन्द्रमा को विवाह दी थीं। रोहिणी से अधिक प्रेम के कारण चन्द्रमा की शाप की कथा सुना कर तथा चन्द्र भागा नदी की उत्पत्ति सुना कर भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गए।

अब पाठकों को इस स्थान के विषय में थोड़ा सा स्पष्ट कर दें कि यह स्थान त्रिकूट पर्वत के नीचे कटड़ा वैष्णवी की गुफा से ८-१० मील की दूरी पर चन्द्र भागा नदी के तट पर है, जहां मेधातिथि ने यज्ञ किया था। इसी पवित्र स्थान पर कभी वीर बन्दा वैरागी ने अपना आश्रम बनवाया था जिस को आज ड़ेरा वावा बन्दा कहते हैं। यह चन्द्र भागा के तट पर ही है। सन्ध्या के विषय में कालिका उप-प्राण में वर्णन :—

वसिष्ठ —किमर्थ मागता भद्रे निर्ज़नस्त्वंमही धरम्।
कस्या वा तनया गौरि, किं वातवचिकीर्षितम्।। १८

सन्ध्या - तपः कर्तुं महम् व्रह्म निर्जनं शैल मागता।
ब्रह्मणोऽहं मनो जाता सन्ध्या नाम्ना च विश्रुता।।

सन्ध्या—नोपदेश महम् जाने तपसो मुनि सत्तम।
यदि ते युज्यते गुह्यं मा त्वं समुदेशय।।२३
वसिष्ठो मन्त्रयां चक्रे गुरुवच्छिष्य तदा।
वस्स्ठि उवाच—परम यो महत्तेजः, परमो यो महत्तपः।
परमो यः समा राध्यो विष्णोर्मनसिधीयताम्।।
धर्मार्थ, काम, मोक्षाणाम्, य एक स्त्वादि कारणम।
तमेक जगत माद्य, भजस्व पुरुषोत्तमम्।।

शंख, चक्र, गदा, पद्म, धरङ्कमल लोचनम्।
शुद्ध स्फटिक संकाशं क्वचिन्नीलाम्बुद छविम्।।
(मार्कण्ड़ेय उवाच)
उपदिश्य वसिष्ठोऽथ सन्ध्यायै तपसः क्रियाम्।
तामाभाष्य यथान्याय तत्रैवान्तर्दधे मुनि।। ४० श्लो०

सन्ध्यापि तपसो भावं ज्ञात्वा मोद मवाप्य च ।
एकान्त मनस स्तस्सोः कुर्वत्याः सुमहत्तपः ।।

विष्णोर्विन्यस्त मनसि गतमेकं चतुर्युगम् ।
प्रत्यक्ष वीक्ष गोविन्द तुष्टाव जगतां पतिन् ।।

हिमानीतर्जितांभोज सदृशं वदनं तथा ।
निरीक्ष्य कृपयाविष्ठोः हरिः प्रोवाच ता मिदम् ।।

श्री भगवानुवाच—प्रीतोऽस्मि तपमा भद्रे भवत्या वरमेणवै ।
स्तवेन च शुभां प्रज्ञे ! वरं वरय साम्प्रतम् ।।

येन ते विद्यते कार्यं वरेणास्ति मनोगतम् ।
तत् करिष्ये च भद्रं ते, प्रसन्नोऽहं तव व्रतैः ।।

यदि देव प्रसन्नोऽसि तपसा मम साम्प्रतम् ।
वृत्ता स्तदाऽयं प्रथमो वरो मम विधीयताम् ।।

उत्पन्न मात्रा देवेश, प्राणिनीऽस्मिन्नभस्तले ।
न भवन्तु क्रमेणैव स कामः संभवन्तु वैः ।।

पतिव्रताहल्लोकेषु त्रिष्वपि प्राधता यथा ।
भविष्यग्ति तथा नान्यः वर एको वृत्तो मम ।।

सकामा मम दृष्टिस्तु कुत्रचिन्न पतिष्यति ।
ऋते पतिं जगन्नाथ, सोऽपि मेऽति सुहृतरः ।।

योद्रक्ष्यति सकामो मां पुरुषस्तस्य पौरुषम् ।
नाशं गमिष्यति तदा सतुल्कीवो भविष्यति ।।

त्वं च लोके सति भावं तादृशं संभविष्यसि ।
त्रिषु लोकेषु नान्यस्य यादृशं सम्भविष्यति ।।

या पश्यति सकामस्त्वां पाणिग्रहमृते तव ।
स सद्यः क्लीवतां प्राप्य दुर्बलत्वं गमिष्यति ।।

पतिस्तव महाभाग स्तयोरूप समन्वितः ।
सप्त कल्पान्त जीवी च भविष्यति त्वया सह ।।

कालिका उप-पुराण श्लो० ८६ से ८९ तक पृ० ६० ।

हुते प्रज्वलिते वह्नौ न चिराद क्रियतं त्वया ।
एतच्छैलोपत्यकायां चन्द्र भागा नदी तटे ॥

मेधातिथिर्महायज्ञं कर्तुं तपसा श्रमे ।
तत्र गत्वा स्वयं छिन्ना मुनिर्भिनोप लक्षिला ॥

मत्प्रसादात् वह्नि जात स्तस्य पुत्री भविष्यसि ।
यस्त्वया वांछनीयोऽस्ति, स्वामी मनसि कश्चन् ॥

तन्निधाय निज स्वान्ते त्यज वह्नौ वपु स्वकम् ।
यदा त्वं दारुण सन्ध्ये - तपश्चरसि पर्वते ॥

यावश्चतुर्युगं तस्य व्यतीते कृतयुगे ।
त्रेताया प्रथमे भागे जाता दक्षस्य कन्यका ॥

भगवान् विष्णु के चले जाने पर उनकी आज्ञा से सन्ध्या मेधातिथि मुनि के यज्ञ में चली गई। भगवद् कृपा से उसे किसी ने देखा भी नहीं। तब सन्ध्या ने अलिक्षित हो कर यज्ञ की अग्नि में प्रवेश किया। पुरोड़ाश मय शरीर उस का जल कर चारों ओर नभ को सुगन्धित करने लगा।

तब भगवान् की आज्ञा से अग्नि देव ने उस के शरीर को सूर्यमण्डल में पहुंचा दिया। तब सूर्यदेव ने उसके दो भाग कर दिए, शरीर के उपरी भाग से प्रातः सन्ध्या का निर्माण हुआ, जो दिन और रात के बीच में पड़ने वाली आदि सन्ध्या है। उस के शरीर का शेष भाग सायं सन्ध्या बना।

सायं सन्ध्या सदा पितरों को प्रसन्नता प्रदान करती है, और प्रातः सन्ध्या सदा देवताओं को प्रसन्नता देती है। भगवान् विष्णु की कृपा से उसका शरीर दिव्य रूप को धारण कर गया, और मेधातिथि के यज्ञ सम्पूर्ण होने पर पूर्ण आहूति के समय दिव्य कन्या बन कर मेधातिथि की पुत्री बन गई। यही अरून्धती के नाम से ससार में विख्यात हुई।

उस कन्या का विवाह मुनि श्रेष्ठ तपोधन वसिष्ठ जी से

हुआ। वसिष्ठ जी को अपना पति पा कर विशेष शोभा को प्राप्त होने लगी। सब सतियों में अरुन्धती श्रेष्ठ है। यही पूव जन्म की सन्ध्या थी। यही त्रेता युग के प्रथम भाग में दक्ष कन्या सती बनी थीं। जिन का सतीदाह होने पर भगवान् शंकर द्वारा उन के शव को उठा कर घूमने पर उत्तमांग (सिर) कटड़ा वेष्णवी देवी की गुफा में स्थापित हुआ था।

यह पवित्र गुफा भगवती वैष्णवी का आदि स्थान या सिद्ध पीठ स्थान है। इसी गुफा से बाहर जा कर अनेक क्रीड़ाएं करके भगवती इसी स्थान पर समा जाती रही हैं। इसी लिए यह माता वैष्णवी का आदि दिव्य स्थान है।

ब्रह्मा जी नारद जी से कह रहे हैं। हे मुनि शिरोमणे! इस प्रकार मैंने तुम्हारे समक्ष सन्ध्या के पवित्र चरित्र का वर्णन किया है जो समस्त कामनाओं को प्राप्त करा देता है। इस में अन्यथा विचार करने की आवश्यकता नहीं हैं।

प्रजापति ब्रह्मा जी की यह बात सुन कर नारद जी का मन प्रसन्न हो गया। उन्हों ने कहा प्रभो! यह अरुन्धाती पूर्व जन्म में सन्ध्या की कथा धर्म वृद्धि करने वाली है। इस सती की कथा पढ़ने या सुनने से भी मनुष्य के पापों का ह्रास होता है। स्त्रियों को इस कथा के पढ़ने से मन में सतीत्व भाव तथा पतिव्रत धर्म के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

अब पाठकों को स्वधा नामक दक्ष कन्या के विषय में थोड़ी जानकारी देते हैं।

ब्रह्मा जी नारद को सुना रहे हैं हे महर्षे! दक्ष प्रजापति की साठ कन्यायें थीं। जिन में सत्ताइस चन्द्रमा को ब्याह दी थीं, कुछ कश्यपादि ऋषियों को ब्याह दीं। एक कन्या का विवाह पितरों के साथ कर दिया, जिस का नाम स्वधा था। मुने! स्वधा की तीन पुत्रियां थीं। जो सौभाग्यशालिनीं तथा धर्म मूर्ति थीं। उन में से ज्येष्ठ पुत्री का नाम मेना था। मंझली, धन्या के नाम से प्रसिद्ध थी, और सब से छोटी कन्या का नाम कलावती था। ये सारी कन्यायें पितरों की मानसी पुत्रियां थीं। उन के

मन से प्रकट हुई थीं। इन का जन्म किसी माता के गर्भ से नहीं हुआ था, अतएव यह अजोनिजा थीं। केवल लोक व्यवहार से ये तोनों स्वधा की पुत्री मानी जाती थीं। इन के सुन्दर नामों का वर्णन करके मनुष्य सम्पूर्ण अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है। ये सदा सम्पूर्ण जगत कीं बन्दनीया लोक मातायें हैं, और उत्तम अभ्युदय से सुशोभित रहती हैं। सब की सब परम योगिनी, ज्ञानबिधि तथा तीनों लोकों में सर्वत्र जा सकने वाली हैं।

ब्रह्मा जी कह रहे हैं—मुनीश्वर ! एक समय वे तीनों बहिनें भगवान् बिष्णु को प्रणाम तथा भक्ति पूर्वक उन की स्तुति करके वे उन्हीं की आज्ञा से वहां ठहर गईं। उस समय वहां सन्तों का बड़ा भारी समाज एकत्र हुआ था। मुने ! उसी अवसर पर मेरे पुत्र सनकादि सिद्ध गण भी वहां गए, और श्री हरि की स्तुति बन्दना करके उन्हीं की आज्ञा से वहां ठहर गए।

सनकादि मुनि देवताओं के आदि पुरुष और सम्पूर्ण लोकों में बन्दित हैं। वे जब वहां आ कर खड़े हुए, उस समय श्वेत द्वीप के सब लोग उन्हें प्रणाम करते हुए उठ कर खड़े होगए। परन्तु यह तीनों बहिनें उन्हें देख कर भी वहां से नहीं उठीं। इस से सनत कुमार ने उन को (मर्यादा रक्षार्थ) उन्हें स्वर्ग से दूर हो कर नर स्त्री बनने का शाप दे दिया। फिर उन के प्रार्थना करने पर वे प्रसन्न हो गये और बोले।

सनत कुमार ने कहा—पितरों की तीनों कन्याओ ! तुम प्रसन्नचित्त हो कर मेरी बात सुनो। यह तुम्हारे शोक का नाश करने वाली और सदा ही तुम्हें सुख देने वाली है। तुम में जो ज्येष्ठ है वह भगवान् विष्णु के अंशभूत हिमालय गिरि की पत्नी हो। उस से जो कन्या होगी पार्वती के नाम से विख्यात होगी।

पितरों की दूसरी प्रिय कन्या योगिनी धन्या, राजा जनक की पत्नी होगी। उन की कन्या के रूप में महालक्ष्मी अवतीर्ण होगी—रामचरितमानस शक्ति दृष्टि (२०६) पृ०

आद्यां शक्ति महादेवीं श्री सीतां जनकात्मजाम्।

अर्थ—आदि शक्ति के स्वरूप में श्री सीता जी महाराजा जनक के घर में उत्पन्न हुई थीं।

इसी प्रकार पितरों की छोटी पुत्री, कलावती द्वापर के अन्तिम भाग में वृष भानु वैश्य की पत्नी होगी और उस की प्रिय पुत्री राधा के नाम से विख्यात हो गी। योगिनी, मेनका, पार्वती जी के वरदान से अपने पति के साथ उसी शरीर से कैलाश नामक परम पद को प्राप्त हो जाए गी। धन्या तथा उन के पति जनक कुल में उत्पन्न हुए जीवन मुक्त महा योगी राजा सीरध्वज लक्ष्मी स्वरूपा सीता के प्रभाव से वैकुण्ठ धाम में जाएं गे।

भृषभानु के साथ वैवाहिक मंगल कृत्य होने के कारण जीवन मुक्त योगिनी कलावती भी अपनी कन्या राधा के साथ गोलोक धाम में जाए गी। इस में संशय नहीं है। विपत्ति में पड़े बिना कहां किन की महिमा प्रकट होती हैं। उत्तम कर्म करने वाले पुण्यात्मा पुरुषों का संकट जब टल जाता है तब उन्हें दुलर्भ सुख की प्राप्ति होती है।

अब तुम लोग प्रसन्नता पूर्वक मेरी दूसरी बात भी सुनो— जो सदा सुख देने वाली है। मेना, की पुत्री जगदम्बा, पार्वती देवी अत्यंत दु:सह तप करके भगवान् शिव की प्रिय पत्नी बने गी। धन्या की पुत्री सीता, भगवान् श्रीराम जी की पत्नी होंगी और लोकाचार का आश्रय ले श्री राम के साथ बिहार करें गी।

साक्षात् गोलोक धाम में निवास करने वाली राधा ही कलावती की पुत्री होगी। वे गुप्त स्नेह में बन्ध कर श्री कृष्ण की प्रियतमा बने गी।

ब्रह्मा जी नारद को कहने लगे कि इस प्रकार शाप के व्याज से दुर्लभ वरदान दे कर सब के द्वारा प्रशंसित भगवान् सनत कुमार मुनि भाईयों सहित वहीं अन्तर्धान हो गए। तात् पितरों की मानसी पुत्री वे तीनों बहिनें इस प्रकार शाप मुक्त हो सुख पाकर तुरन्त अपने घर को चली गईं। यही तीन शक्तियों की संक्षिप्त कथा थी जो मानव के जन्म जन्म के पाप ताप को दूर करती है।

अब माता के भक्त समझ ही गए हों गे कि पहले कल्प में सन्ध्या, बाद में वसिष्ठ पत्नी अरुन्धतीवनी। यह किसी भी धर्म का अवरोधन नहीं करती थी, इस लिए इसे अरुन्द्धती कहा गया है। फिर सती बनी, पुनः स्वधा पुत्री मेना से उत्पन्न होने वाली पार्बती बनीं। यह सब स्वरूप एक ही शक्ति मां वैष्णवी के हैं।

इस त्रिकूट पर्वत पर मां वैष्णवी ने चार युग तक भगवान् विष्णु की घोर तपस्या की थी। इसी स्थान पर भगवान् विष्णु ने शक्ति को तीन वरदान दिए थे। यहीं मां वैष्णवी के अनेक अबतारों की संक्षिप्त कथा थी। जिस के पढ़ने मात्र से मतुष्य की मनो कामना पूर्ण हो जाती है। ऐसी यह पावन कथा है मां वैष्णवी की। विष्णु की भक्ति करने से वैष्णवी कहलाई।

इसी लिए माता ने देवताओं से कहा था कि—हे देवताओ :

हिमालय गुफा में मेरा वास होगा।
ये संसार सारा मेरा दास होगा।।

सब मिल कर बोलो सुन्दर गुफा वाली मां तेरी सदा ही जय हो। सब की मनो कामना पूर्ण करने वाली मां तेरी सदा ही जय हो।

———
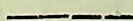
वैष्णवी माता का माहात्म्य

।। श्री गणेशाय नमः ।।

ब्रह्मा जी के दस मानस पुत्रों में से एक दक्ष प्रजापति थे। इन की साठ कन्याएं थीं । दक्ष की कन्याओं में एक सती जी थीं। इन्हों ने अपने उग्र तप द्वारा भगवान् शंकर को प्राप्त किया था। यह अनन्य पतिव्रता भाव से भगवान् शंकर की सेवा सुश्रुषा करती हुई अपना गृहस्थ जीवन व्यतीत करती थीं।

एक दिन की घटना है कि अचानक आकाश विमानों से ढ़क गया। भगवान् शंकर उस समय घर पर नहीं थे। सती जी ने देवगणों से पूछा कि यह गगनमण्डल पर विमान कैसे जा रहे हैं।

देवगण बड़ी नम्रता से बोले सती ! आप के पिता, दक्ष महाराज ने एक महान् यज्ञ का आयोजन किया है। उसी यज्ञ में दक्ष, कन्याएं, देवांगणाएं, सुरबालाएं सुसज्जित हो कर रंगबिरंगे वस्त्र पहिन कर विमानों पर सवार हो कर दक्ष नगरी की ओर जा रही हैं।

अपने पिता द्वारा यज्ञ का आयोजन सुन कर तथा अन्य बहिनों को पिता के घर जाते देखकर सती जी का मन भी विचलित सा हो गया, और वह भी यज्ञ में जाने के लिए उत्सुक हो गईं। परन्तु भगवान् शंकर के घर में आने की प्रतीक्षा करने लगीं। ज्यों ही शिव भगवान् घर में आए, तुरन्त सती जी ने पिता दक्ष के यज्ञ में जाने का प्रस्ताव रख दिया। शंकर भगवान् दक्ष पर पहले ही रुष्ट थे। क्यों कि दक्ष ने अपने यज्ञ में शिव को आमन्त्रित नहीं किया था।

शंकर बोले सती ! बिना बुवाए पिता के घर भी जाना उचित नहीं। परन्तु स्त्रियों का मायके के प्रति विशेष मोह होता है। सती जी ने कहा भगवन् ! गुरु के घर, बैद्य के घर, पिता के घर बिना बुलाए भी जाना अनुचित नहीं होता।

प्रायः स्त्रियां मायके की थोड़ी सी भी कोई अच्छी बात सुन ल तो विशेष गौरव का अनुभव करती हैं। इसी लिए बुद्धिमान पुरुषों ने कहा कि यदि घर में सुख शान्ति बनाए रखना चाहो तथा गृह कला से वचाब चाहते हो तो स्त्रियों के मायके की किसी बात का खण्डन न करें। फिर संसार में तिर्या हठ प्रसिद्ध है ही। इसी सिद्धांत के वशीभूत हो कर भगवान् शंकर ने सती जी को दक्ष के यज्ञ में जाने की अनुमति दे दी। परन्तु साथ ही यह भी चेतावनी दे दी कि हे सती ! यदि कोई स्त्री अपने पति की इच्छा के विरुद्ध कहीं चली जाती है या अन्य कोई भी काम करती है तो उसे सुख नहीं मिल सकता।

शिव की आज्ञा से नन्दीगण सजने लगा। भगवान् शिव ने गणों को सती के साथ जाने की अनुमति दे दी। सती के अंगरक्षक गणों के अतिरिक्त साठ हज़ार सेना भी थी, जो सती की यात्रा शोभा को बढ़ा रही थी। नन्दीगण को सजते देख सती जी का मन पिता के घर जाने के लिए उतावला हो रहा था कि मैं भी अपनी बहिनों के साथ पिता के घर में यज्ञ का उत्सव देखूं।

शिव के गणों के साथ नन्दी गण पर सवार हो कर दक्ष की नगरी के लिए प्रस्थान कर दिया। सती की यात्रा की शोभा इस प्रकार थी कि जैसे चन्द्रमा के विना रोहिणी तारा अन्य नक्षत्रों में शोभाएमान हो। विद्वान् पुरुषों ने ठीक ही कहा है कि जैसे नीर बिना नदी, कमल बिना सरोवर, चन्द्र बिना रात्रि शोभाय-मान नहीं होतीं, उसी प्रकार पति के बिना पत्नी भी शोभायमान नहीं होती।

जैसे ही सती जी का नन्दी गण दक्ष नगरी में राज महल के सामने जा कर रुका तो स्वागत के लिए कोई भी राजकीय प्रबन्ध नहीं था। परन्तु दूसरी ओर सती की अन्य बहिनों का स्वागत

उन की माता तथा दास दासियां आगे बढ़ बढ़ कर सप्रेम कर रही थीं। हां इतना अवश्य हुआ कि उनकी माता ने केवल मात्र उन का स्वागत किया।

इसी लिए संसार में लड़की का जितना प्रेम अपनी मां से है अन्य जीवों से नहीं (सात्विक प्रेम)।

दक्ष प्रजापति राज महल में प्रथम पदार्पण करते ही सती को यह बात शंकर भगवान् की स्मरण हो गई कि पति के बिना शोभा नहीं होती। जैसे तैसे तैसे सती माता के गले मिली, अन्य बहिनों से कुशल प्रश्न पूछे, परन्तु सब ने उदासीन भाव से ही उन के उत्तर दिए। (संसार में मातृ शक्ति चेतती अवश्य है परन्तु समय बीत जाने के बाद, अग्नि जलती अवश्य है, परन्तु भोजन पकाने के बाद पुत्र बधु (नूं) को होश तो आती है, सास के मर जाने के बाद)।

यह सब देख कर सती का मन भारी हो गया। इस के पश्चात् सती जी अन्य बहिनों के साथ दक्ष का यज्ञ मण्डम देखने गईं। वहां जा कर सती जी ने अन्य देवी देवताओं का यज्ञ भाग देखा। परन्तु यज्ञ मण्डप में कहीं पर भी शंकर भगवान् का यज्ञ भाग नहीं देखा। अपना तथा पतिदेव का इतना अपमान देखकर सती का विशुद्ध तथा सरल मन बिक्षुब्ध हो गया।

जैसे आग की एक छोटी चिनगारी से बारूद का ढ़ेर फट जाता है, उसी प्रकार अपमान की चिनगारी से सती का मन उत्तेजित हो गया। यह क्या ? मेरे पिता ने यज्ञ का मुझे निमन्त्रण तक नहीं भेजा। पति के मना करने पर भी मैं मोहवश पिता का यज्ञ देखने चली आई। सब देवों में शिरोमणि महादेव शिव का इतना अपमान मेरे सामने हो यह मैं देख नहीं सकती। कोई भी आर्य स्त्री इन चर्म चक्षुओं के द्वारा अपने पति का अपमान नहीं देख सकती।

बुद्धिमानों ने कहा है कि अत्यधिक दुःख होने पर मनुष्य किं कर्तव्य मूढ़ (क्या करूं क्या न करूं) हो जाता है। उसे ध्यान ही नहीं रहता कि मुझे क्या करना उचित है क्या नहीं। इसी

सिद्धांत के वशी भूत हो कर सती ने सोचा अब मैं अपमानित होकर पति को मुंह न दिखलाऊंगी । ऐसा सोच कर वह यज्ञ कुण्ड में कूद गईं । सारे यज्ञ मण्डप में हा हा कार मच गया । विजली की तरह यह समाचार गणों के द्वारा भगवान् शंकर को मिला । निश्चय ही संसार में जो स्त्री अपने पति का कहना न मान कर अपनी मन मानी करती है उस की अन्त में यही दशा होती है ।

अर्थात् अन्त में दुःख भोगना पड़ता है । परन्तु यह सिद्धांत शिव के समान पत्नी व्रत धारी सदाचारी पुरुष के लिए और पति परायणा सदाचारिणी सती के समान स्त्री पर चरितार्थ होता है, अन्य व्यभिचारी पति पत्नी पर नहीं । उसी समय रुद्र की क्रोधाग्नि से आठ प्रकार के ज्वर पैदा हुए ।

धन्य धन्य मातृशक्ति तू धन्य है, तू दुर्गा, वैष्णवी, जगदम्बा, महालक्ष्मी है, पर महा काली स्वरूप भी तेरा ही है । जब तेरे में सात्विक भाव रहते हैं तब तू जगद् जननी सरस्वती, रजो गुणी मां वैष्णवी है पर तामसिक भाव आते ही मां तू काली का रूप धारण कर लेती है । जिस के क्रोध को शांत करने के लिए स्वयं शिव को चरणों में लेटना पड़ा था ।

हे मातृ शक्ति यदि तूने हठ न किया होता पति की बात को माना होता, मर्यादा का उलंघन न किया होता तो आज शिव भगवान् को रुद्र रूप धारण न करना पड़ता, और न ही इस शांत आरोग्य अव्याधिमय संसार में आठ प्रकार के ज्वर पैदा होते । इस से पूर्व राजयक्ष्मा, मिरगी, विसंज्ञा आदि मृत्युभय न थे क्योंकि स्वयं वेद कहता है —

नमृत्युरासीद् नऽमृतंनर्तहि –संसार में पहले न मृत्यु थी, न अमृत था, मृत्यु बनी तो फिर अमृत बना । बीमारी बनी तो औषधि का निर्माण हुआ । ऐसे ही तू ने त्रेता युग में किया था ।

श्री राम भगवान् के बार बार मना करने पर भी तू न मानी अपनी हठधर्मी ठानी और बन जाने की बनी कहानी । वन में जा कर तू ने लक्ष्मण की मर्यादा रूपी लकीर का उलंघन किया,

जिस का परिणाम रावण द्वारा हरण हुआ।

लकीर रूपी मर्यादा के अन्दर जब तक रही तब तक दुष्ट भाव वाले रावण को अन्दर आने की मजाल न हुई, पर ज्यों ही मर्यादा को पार किया दुष्टों ने आ दवोचा। द्वापर में द्रोपदी के रूप में। कलियुग में संयोगता के रूप में। हमें तेरी हठ धर्मी से अनेक कष्ट तथा सन्ताप भोगने पड़े। यद्यपि यह सारी उसी आद्य शक्ति की माया थी जो संसार को लीला कर के बतला रही थी।

दक्ष प्रजापति ने जब मां वैष्णवी की अराधना की थी, तब दक्ष के तप से प्रसन्न हो कर उस को दशन दिए और वर मांगने को कहा। तब दक्ष ने कहा –

हे महामाया आदि शक्ति। यदि तू मेरे तप से प्रसन्न है तो मेरी पत्नी के गर्भ से जन्म ले कर शंकर भगवान् की पत्नी बनो। जिस से देव कार्य पूर्ण हो सके।

तब वरदान देते समय जगदम्बा ने कहा प्रजापते दक्ष ! मैं देवकार्य सम्पन्न करने के लिए तेरी पत्नी के गर्भ से जन्म लूंगी, शंकर की पत्नी भी बनूं गी, पर शर्त साथ में यह है कि जिस दिन मेरा इस घर में अपमान होगा, मैं उसी दिन अपने शरीर को त्याग दूं गी। (यह प्रसंग हिन्दी विश्वकोष पृ० ४९४ से लिया गया)

इस शर्त से सती जी का जिस दिन दक्ष ने अपमान किया उसी दिन सती जी ने अपना शरीर त्याग दिया। इसी सभाचार से शंकर क्रोधित हुए। क्रोधाग्नि से आठ प्रकार के ज्वर तथा वीर भद्र आदि संहारक गणों को पैदा किया। तत्काल रुद्र ने दक्ष यज्ञ विध्वंस की गणों को आज्ञा प्रदान कर भेज दिया।

शिव गणों ने जाते ही दक्ष यज्ञ मण्डप को तत्काल नष्ट भ्रष्ट कर के अपवित्र कर दिया। यहां तक की स्वयं दक्ष प्रजापति का सिर तक काट लिया। उधर शंकर भगवान् अपनी प्रिय पत्नी सती के मोह में उन्मत्त हो गए। उन्हों ने यज्ञ कुण्ड की अग्नि में झुलसे हुए सती के शरीर को मोहवश कन्धों पर उठा लिया और प्रलयं कारी ताण्डव करने लगे।

उसी समय पृथ्वी डोल गई, दिग्गज कांप उठे, यक्ष, गन्धर्व सिहर उठे, हिमालय भय से चलायमान होने लगा। समुद्र में ज्वार भाटा आ गया। जहां तक कि लोकपाल भयभीत हो गये। सोचते थे कि अब क्या होगा।

शिव सती की झुलसी देह को छोड़ने को त्यार न थे। ब्रह्मा, विष्णु, शनि ने मन्त्रणा (सलाह) की, कि जब तक सती की देह शंकर के शरीर के साथ स्पर्श करती रहेगी चाहे कितने युग क्यों न बीत जाएं पर देह का एक अंग भी न गिरे गा।

(हिन्दी विश्व कोष पृ० ४९६)

तब योगबल से विष्णु ने शकर के शरीर में प्रवेश किया, चक्र के द्वारा अनेक अंग कट कट कर पृथ्वी पर गिरने लगे। भगवान् शंकर सती जी की देह को लेकर जिस ओर नाचते जाते थे, उसी ओर अनेक पवित्र शरीर के अंग गिरते जाते थे।

इस महा ताण्डव में सारे भारतवर्ष में मां भगवती के ५१ (इकाबन) अंग गिरे हैं, इसी लिए ५१ ही भगवती के तीर्थ स्थान बन गए। अन्त में शिर कटड़ा वैष्णवी देवी की सुन्दर गुफा में स्थित हुआ। इस पुनीत स्थान पर भगवान् शंकर सती के सिर को रख कर शांत तथा समाधिस्थ हूए थे। यह वही वैष्णवी देवी का पवित्र स्थान है। इस स्थान पर नारियल की भेटा भगवती के उसी पवित्र (सिर) का सूचक चिम्ह है, न कि ध्यानु भक्त के सिर का चढ़ावा सूचक है।

ध्यानु भक्त की घटना को सम्राट अअबर के समय से जोड़ा जाता है। क्या ? अकबर बादशाह के समय से पूर्व यह स्थान विद्यमान नहीं था क्या ? उस से पूर्व इस स्थान पर नारियल की भेटा नहीं चढ़ाई जाती थी। अवश्य चढ़ाई जाती थी।

ध्यानु भक्त की घटना को भी हम सत्य मानते हैं, परन्तु उस के सिर का नारियल से कोई सम्बन्ध नहीं। केवलमात्र माता के भक्तों के मन में भ्रम पैदा करने के लिए ऐसे प्रसंग जोड़े गए हैं, इस के सिवा और कुछ नही। ऐसे ही कटड़ा से माता की गुफा

तक जितने ही स्थान हैं कल्पित मात्र हैं ।

हिन्दू धर्म में असली देवता के सम्मान को कम करने के सिवा और कुछ भी नहीं । एक देवी या देवता के दर्शनों के लिए अनेक अन्य देव-देवियों का निर्माण कर देना असली देवता की महत्ता को कम करने के सिवा और क्या है ? कटड़ा से चरणपादुका, आद कुंवारी जो जीवन भर कुंवारी ही रही थी । जिस की प्रतिज्ञा थी कि—

यो मां जयति संग्रामे, यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रति बलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ।।

अर्थात् जो मुझे युद्ध में जीते गा, जो मेरे घमण्ड को चूर करे गा, जो मेरी समानता (मुकाबले) का हो गा, वही मेरा पति होगा ।

ऐसा पुरुष संसार में सिवा ईश्वर के और कौन हो सकता था । अतः महा शक्ति का नाम आद कुंवारी ही रहा । भगवती का कुंवारी रहना उन की अजय शक्ति का प्रमाण है । इसी अजय शक्ति को प्राप्त करने के लिए भक्त गण दिन रात उन के चरणों का स्मरण करते हैं ।

यहां आदि कुंवारी मन्दिर के साथ गर्भजून भी बनी है जो मनुष्यों द्वारा बनाई गई है, न कि स्वतः प्रकट है । इस के आगे हाथी मत्था आता है जिस स्थान की चढ़ाई हाथी के मत्थे के समान खडी है । न कि जहां कोई माता का हाथी रहता था । इस के आगे कमानगोषा की चढ़ाई है, जो धनुष के समान टेढ़ी है । इस के आधार पर इसे कमानगोषा की चढ़ाई कहते हैं । इस के आगे प्रसिद्ध घाटी भैरव घाटी है । यहां की कहावत मशहूर है कि भैरों नामक कोई पहाडी राजा माता के पीछे लगा और माता डर के मारे गुफा में जा छुपी । यह घटना कितनी हास्यास्पद है । जिस शक्ति के सामने बड़े बड़े दैत्य, दानव, शूरवीर, शुम्भ निशुम्भ, मधुकैटिभ, महिषासुर जैसे वली ठहर न सके, उस भगवती के सामने एक मामूली पहाड़ी भैरों नाम का राजा क्या ताव ला

सकता था। जिस शक्ति की स्तुती करते हुए ऋषियों - मुनियों ने इकट्ठा गायन किया है कि—

ए कैव शक्ति परमेश्वरस्य, भिन्ना चतुर्धा व्यवहार काले।
पुरुषेषु विष्णु, भोगे भवानि, समरे च दुर्गा प्रलये च काली ।।

अर्थात्—ईश्वर की एक ही शक्ति है, जो चार प्रकार से बटी है। पुरुषों में विष्णु भोगों में भवानी, संग्राम में दुर्गा, प्रलय में काली है।

जिस शक्ति के बिना शिव भी शव हैं, स्वयं शंकर भगवान् कहते हैं—

शक्तोऽहञ्च त्वया सार्धं, सर्वशक्ति स्वरूपया।
तवहीन: शवसमो निश्चेष्ट: सर्व कर्मसु ।।

हे शक्ति ! तेरे से में भी शक्तिमान हूं, सब शक्तियों की तू ही कारण है। तेरे बिना में शव (मुर्दे) के समान हूँ। सब कार्यों में असमर्थ हूँ। जिस शक्ति के बिना शिव भी शव हैं— ग्रर्थात् यदि शिव का शक्ति रूप 'इ' हटा दिया जाए तो पीछे शव ग्रर्थात् मुर्दा रह जाता है।

उस महा शक्ति के पीछे लगने का या उस से युद्ध करने का कौन दु:सहास कर सकता है। भैरव घाटी में भैरों की मूर्ति बना कर उस का गलत ढंग से प्रचार किया गया, यह सब महा शक्ति का महत्व कम करने के सिवा या माता के थक्तों के मन में सन्देह पैदा करने के ग्रतिरिक्त कुछ भी नहीं।

जो भैरों शिव का गण है वह तो माता का दास है, अन्य भैरों कहां से ग्रा गया। वास्तव में यह घाटी बड़ी विकट थी। इस घाटी पर विशेष फिसलन थी। इस घाटी से कई भक्त गिर कर शिवलोक को चले गए। (ग्रर्थात् गिर कर मर गए) इसी लिए संस्कृत में इस को भैरव घाटी कहते हैं। अर्थात् भय, डरावनी, डर देने वाफी घाटी या भैरव घाटो एवं भैरों घाटी कहते हैं। शेष कथाय कलिपत मात्र हैं।

जिस शक्ति के सामने दैत्य, दानव, इन्द्र ब्रह्मा, वरुण, यम,

कुवेर हाथ जोड़ कर स्तुति करते देखे जाते हैं, वही माता एक भैरों नामक छोटे से राजा से डर के मारे गुफा में जा छुपी। वह भगवती थी या गांव की कोई असहाय अवला, साधारण स्त्री थी। जैसे माता के अन्य स्थानों का रास्ते में उनके गुणों के आधार पर नाम रखा है, ठीक वैसे ही भैरों घाटी का नाम भी उस के कठिन मार्ग के नाम पर ही रखा है। हां पश्चात् किसी भक्त ने श्रद्धावश इस स्थान पर भैरव का मन्दिर अवश्य बनवा दिया। जिस का सम्बन्ध आज भैरों से जोड़ा जाता है।

अन्त में चल कर प्राकृतिक सुन्दर, शान्त, एकान्त दिव्य गुफा के दर्शन होते हैं। इसी गुफा में शिब भगवान् ने विश्राम किया था। इसी पवित्र गुफा में सती जी का पावन सिर रखा था। मोह दूर होने पर शंकर तो चले गए, परन्तु सती जी का सिर वहां पर ही स्थित रहा। इसी से सब शक्तिपीठों से यह वैष्णवी सिद्धपीठ अति पुनीत तथा प्राचीन है।

भारतवर्ष में जितने भी भगबती के ५१ स्थान हैं, उन सब में यही स्थान सर्वोत्तम, पवित्र, पाप नाशक, भक्तत मन रञ्जक, अभीष्ट (मन चाह) फलदायक कहा गया है। इसी लिए इस स्थान पर गए माता के भक्त जयकार बुलाते हैं।

मन दियां मुरादां पूरियां करन वाली माता तेरी सदा ही जय हो।

इसी पवित्र गुफा में राज्य प्राप्ति के लिए धर्मराज महाराज युधिष्ठर ने सच्चे मन से कामना की थी। इस के चिन्ह अभी भी माता की गुफा के द्वार से पश्चिम पहाड़ी पर विद्यमान हैं। जिस को पाण्डवों की पहाड़ी कहते हैं। यहां पत्थरों पर उन के चिन्ह खुदे हैं। पर यह केवल नाले के पार ही हैं। इसी स्थान पर मौर्य राज्य के सम्राटों ने माता के चर्णों में बड़े बड़े उपहार भेजे थे।

इसी के आधार पर महा मन्त्री चाणक्य ने पंजाब में महा शक्ति यज्ञ किया था। इसी पवित्र स्थान पर गुरु रामदास समर्थ ने तीन दिन के अनुष्ठान के पश्चात् चन्द्रहास नामक खड़ग

(तलवार) छत्रपति शिवाजी को प्रदान की थी। यहां ही पूज्य गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज ने माता के चर्णों में प्रथम भेंट चढ़ा कर चण्डी की स्तुती का गायन किया था। तभी उन्हों ने एक लाख रुपया खर्च करके कालीदास नामक पण्डित द्वारा शक्ति महा यज्ञ करवाया था।

इस का वर्णन गुग्गर की हिस्ट्री में ज्यों दिया है—

गुग्गर की हिस्ट्री पृ० ७६ से उद्धृत, ले० श्री नृसिंह दास जी दिवान जम्मू सम्पादक चांद पत्र जम्नू (काश्मीर)।

जम्मू के राजा श्री गजा सिंह के शासन की सब से महत्वपूर्ण घटना, सिक्खों के दशमेश पूज्य गुरु श्री गोबिन्द सिंह जी महाराज पुरमण्डल कीं तीर्थ यात्रा पर आए। राजा गजा सिंह की दर्खास्त (प्रार्थना) पत्र रप जम्मू में भी आए। वह राजकीय मेहमान रहे।

१६७२ ई० में श्री गुरु जी जम्मू से दिव्य गुफा कटड़ा में महामाया वैष्णवी माता के दर्शनों के लिए गए। यहां पर उन्हों ने धर्म युद्ध में आमयावी के लिए मन्नत (प्रार्थना) मानी। फिर बापसी पर राजा के पास कुछ दिन ठहर कर पंजाब के लिए चले गए।

धन्य धन्य महा शक्ति विश्व को मोहित करने वाली मां वैष्णवी वह दिन भी कितना धन्य होगा, जिस दिन हिन्दू जाति का देदीप्यमान अज्ञान तथा भय के अन्धकार को दूर करने वाला प्रचण्ड एवं प्रखर सूर्य श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज पैदल यात्रा करते हुए, तथा मन में नजाने क्या क्या हिन्दू जाति के लिए भाव लेकर गए होंगे।

इस को उन्हीं की पवित्र आतमा जानती होगी जिन्हों ने देश की खातिर अपने चार पुत्रों का बलिदान दे कर भी यह नहीं कहा कि मैं कोई बड़ा भारी काम कर आया हूं। हां इतना अवश्य कहा था कि यह भी कर्तार का फर्ज था जो मैं निभा आया हूं। ऐसे महा पुरुषों के द्वारा ही हिन्दू इतिहास गौरवान्वित है। गौरवान्वित था और गौरवान्वित रहे गा।

यह वही पुज्य गुरु जी अलौकिक गुफा में हिन्दू जाति की रक्षा के लिए केवल रक्षक के रूप में ही नहीं थे अपितु शास्त्र रक्षक भी थे इन्हों ने अपने खर्च से ब्राह्मणों को वेद रक्षा हेतु वेद पढ़ाने काशी भेजा था । यह वही श्रद्धेय गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज हैं जिन्हों ने अपनी प्रथम रचना हिन्दी में कृष्णावतार पर लिखी थी ।

वह स्वयं फारसी के अलावा हिन्दी, संस्कृत के भी विद्वान थे । इसी पवित्र स्थान पर प्रथम वार बन्दा वीर वैरागी की भेंट गुरु जी से हुई थी । वन्दा यहां (गुफा) से ८-१० मील की दूरी पर ही रहते थे । जहां पर भक्त और भगवती का मिलन था वहां पर दो योद्धाओं का भी मिलन हो ही गया । यह यात्रा धार्मिक तथा राजनैतिक दृष्टि से भी महत्व पूर्ण थी ।

वाणासुर की कैद में बन्ध जाने पर जब वाणासुर की पुत्री उषा कीं सहेली श्री कृष्ण जी के पौत्र अनिरुद्ध को उठा कर द्वारिका से ले गई, तब अनिरुद्ध उषा के साथ सहवास कर रहे थे, जिस की खबर वाणासुर को मिल गई । युद्ध हुआ, अनिरुद्ध कैद कर नागपाश में जकड़ दिए गए । तब उन्हों ने इसी आदि शक्ति मां जगदम्बा का स्मरण किया । स्मरण करते ही मां ने काली रूप धारण कर के नागपाश को काट कर अनिरुद्ध को विजय का बरदान दिया था ।

जब महाभारत के युद्ध में दादा भीष्म पितामह पाण्डव सेना का संहार करते जा रहे थे, तब अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से इस का उपाय पूछा था । तब श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा था —

हे पार्थ ! रथ से उतर कर संग्राम की ओर मुंह कर के मां जगदम्वा का ध्यान कर, उसी मां वैष्णवी ने सारे संसार को मोहित कर रखा है । इस का वर्णन महाभारत में गीता से पहले भीष्मपर्व का २३ वां अध्याय १० वां श्लोक ऐसे है —

वेदश्रुति महापुण्ये ब्रह्मण्ये जात वेदसी ।
जम्बू कटक चत्येषु नित्यं सन्निहिलालये ।।

अर्थात् वेदों ने श्रुति स्मृतियों ने जिस को जात वेदसि अग्नि वर्णा कहा है। जम्बू की कटक पहाड़ी का पार्श्व भाग या (केरी) में जिस का सदैव वास है तथा अन्य सुरकाला, श्री स्थल (सरथल) आदि अनेक स्थानों में जिस का वास है उस का स्मरण कर रहें।

यहां पर दो बातें शंका वाली हैं। एक जम्बू शब्द दूसरा कटक। जम्बू शब्द जम्बूद्वीप का बाची है, परन्तु जहां पर जम्बू का द्वीप अर्थ बतलाना हो वहां पर जम्बूद्वीप शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे जम्बू द्वीपे भारत खण्डे। सब द्वीपों में जम्बू द्वीप की उत्तमता बतलाते हुए कहा है : जम्बू द्वीपे महा मुने।

महाभारत काल में जम्बू शब्द प्रचलित था, जैसे जम्बू मार्गा दउपावृत्य, व्यासदेव जी युधिष्ठर से तीर्थ यात्रा वर्णन में कहते हैं वनपर्व में—हे राजन् ! जम्बू मार्ग को पार कर काश्मीर में जाएं।

इस से यही स्पष्ट होता है कि जम्बू कटक चैत्येषु जम्बू की पहाड़ियों पर जिस का नित्य वास है, 'कटक' शब्द पहाड़ के ढ़लान, केरी, पार्श्व भाग, मोनियार विलियम संस्कृत-अंग्रेजी शब्दकोश पृ० २४३ कटक शबद का अर्थ पहाड़ का पार्श्व भाग या केरी, महाड़ों से घिरी बादी। इस का वर्णन रघुवंश में १६ - ३१ पर देखिऐ। आप्टे कोष पृ० १२८।

प्रफुल्ल वृक्षौः कटकै - रिवस्वैः कुमार सम्भव सर्ग ७ पर श्लोक ५२।

शिशुपाल वध में भी कटक का वर्णन आया है। सर्ग ४ श्लोक ६५। कथा सरित सागर हितोपदेश में भी कटक का वर्णन आया है।

सम्भवतः कालान्तर में कटक पहाड़ों से घिरी वादी को कहने से ही कटड़ा शब्द की उत्पत्ति हुई हो। क्यों कि कटड़ा ठीक पहाड़ों से घिरी वादी या वैली है। पश्चात् पंजाबी का प्रभाव पड़ने से भी कटक से कटड़ा बन गया हो। उपरोक्त प्रसंग से यही स्पष्ट होता है कि अर्जुन ने इसी मां वैष्णवी का स्मरण किया था।

ऐसे पवित्र स्थान पर ही वीर बहादुर बन्दा ने अपना खड़ग रखकर

माता की गुफा में तीन दिन अनुष्ठान करके मुगलों पर धावा बोला था। इसी स्थान पर जम्बू के बड़े बड़े प्रतापी डोगरा तथा अन्य राजाओं ने अपना गौरवान्वित मस्तक झुका कर माता का आशीर्वाद प्राप्त किया था। इसी माता के चर्णों में बैठ कर मियां डीडो ने शाही सेनाओं को कई वार शिकस्त दी थी। इसी पवित्र गुफा के दर्शनों के लिए अपनी वृद्धावस्था के ६० वर्षों की आयु में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के सरसंघ चालक श्री माधव राव गोल्वलकर जी के माता ताई जी तथा पिता सदाशिव राव, नगपुर से चलकर आए थे।

इसी स्वरूप का ध्यान करके कलकत्ता के प्रसिद्ध साम्य-बादी नेता की धर्मपत्नी जी ने उन के बीमार होने पर मनौती मानी थी कि यदि मेरे पतिदेव ठीक हो जायेंगे तो मां मैं तेरे मन्दिर में नंगे पांव चल कर आऊंगी और पूरी कपड़ों की पोशाक चड़ाऊं गी।

हमारे देश के प्रसिद्ध नेता तथा जम्मू कश्मीर के मुख्य मन्त्री मान्यवर श्री शेख मुहम्मद अब्दुल्ला महोदय ने भी माता के चरणों में श्रद्धा के फूल एवं भेटा सप्रेम अर्पित की थी।

भारत की प्रसिद्ध फिलमी गायिका सुश्री लता मंगेशकर भी गत वर्ष माता के दर्शनों को आई थी।

इसी पवित्र स्थान की महत्ता को बढ़ाने के लिए तथा कटड़ा में योगाश्रम की सम्पन्नता के लिए काग्रेस के प्रधान श्री ढेवर महोदय आए थे। कितना पावन स्थान है, इस की महत्ता का वर्णन करते चाहे सदियां बीत जाएं तो भी थोड़ा है। माता की गुफा में त्रिमूर्ति महा सरस्वती, महा लक्ष्मी और महा काली की पिण्ड़ियों के सामने खड़े हो कर नत मस्तक हाथ जोड़ कर शुद्ध मन से भक्त जो भी कामना करे गा वह आवश्य पूर्ण होगी। ऐसा नारद, शुकदेव आदि ऋषियों के मत हैं।

इस में किंचित् भी सन्देह नहीं करना चाहिए ऐसा शंकर-गगेश संबाद में लिखा है। इस कथा को जो भी भक्त सच्चे मन

से पढ़े गा उस का वही फलादेश प्राप्त होगा जो माता के चल कर दर्शनों से होता है।

वैष्णवी माता की पवित्र गुफा के दर्शणों के लिए प्रति वर्ष लाखों यात्री आते हैं, परन्तु इसी के साथ संसार के प्रसिद्ध नेता, धार्मिक नेता, समाजिक नेता, महापुरुष तथा श्रेष्ठ कलाकार, संगीतकार, चित्रकार, सिनेमा के प्रसिद्ध अभिनेता तथा अभिनेत्रियां मां वैष्णवी की पवित्र गुफा के दर्शन कर चुके हैं।

कुछ विदेशी भी इस पवित्र गुफा के दर्शन कर चुके हैं। लन्दन और फ्रांस के व्यक्ति भी यहां आए थे, उन्हों ने लिखा है कि हमें गुफा के अन्दर जाने नहीं दिया। उस समय हिन्दू के अति-रिक्त किसी दूसरे व्यक्ति को गुफा के अन्दर जाने नहीं देते थे। वह लिखते हैं कि हम ने भी गुफा में जाने का ज्यादा आग्रह किया नहीं। हमें प्रसाद दिया गया, गुफा के बाहर ही। जैसा उन्हों ने प्रसाद का वर्णन किया है, वह मीठी फुल्लियां हो सकती हैं। फिर चढ़ावे के पैसे ले कर पुजारियों ने अन्दर माता के चरणों में चढ़ा दिए।

यह घटना महाराजा गुलाब सिंह के समय की है। अब तो बहुत से विदेशी दर्शनों को आते हैं । अब वह पाबन्दी नहीं रही। वर्तमान युग में प्रायः सभी फिलम निर्माता मां वैष्णवी के दर्शनों को आते हैं। गत वर्ष भारत कें भूतपूर्व गृह मन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा तथा इन्टर नैशनल कोर्ट के न्यायाधीश (जज) डा० निगेन्द्र सिंह भी पवित्र गुफा के दर्शन कर चुके हैं।

जै माता की, जय वैष्णवी की, जय आदि शक्ति की।

———

वीर सैनिकों से

वीर सैनिको ! याद रखो।

क्या ?

माता वैष्णवी के बिना हमारा कौन है।

यह वीर सैनिक देश का सच्चा सन्यासी, योगी, त्यागी, तपस्वी, भारतमाता का सच्चा सपूत है और है देश का रक्षक प्रहरी, भारत माता की लाज बचाने वाला सिंह सपूत। माता, पिता, भाई, बहिन, पुत्र, मित्र, धन, कलत्र, सब का मोह त्याग कर वीर सैनिक बनने के लिए सेना में भर्ती हो गया।

ट्रेनिंग के बाद पक्का सैनिक बन गया। अकस्मात युद्ध छिड़ गया। संग्राम का विगुल बज उठा। मारू बाजे बजने लगे। घर का मोह छूट गया। उल्लास से भुजायें फड़क उठीं। शत्रु को मिलने के लिए रणस्थल में। मन व्यग्र होने लगा, यूनिट, ब्रिगेड, डिब्ब, कोरें बंट गईं। दिशायें मिल गईं। मोर्चे खोदे जाने लगे, खन्दकें खुदने लगीं। शत्रु की सेना को लक्ष्य बना कर तोपों के मुंह खोल दिए गए, गोलों से आकाश गूंज उठा। तोपों की गड़गड़ाहट से निकट प्रदेश के लोगों की शांति निद्रा टूट गई। भय, कम्प, क्रोध, मोह के भाव उत्पन्न हो गए।

देखते देखते अपने लड़ाकू विभान (हवाई जहाज) शत्रु के क्षेत्र में और दुश्मन के विमान अपने क्षेत्र में आ कर मर्म स्थानों पर बम्वारमैंट करने लगे। अपनी स्त्री, पुत्र, माता, पिता, बहिन, भाई कहां पर हैं। इस का इस समय सैनिक को ध्यान ही नहीं, ध्यान

है तो शत्रु पर साधे हुए लक्ष्य का । आकाश से बम्वर्षक विमान बम बरसा रहे हैं । तोपें आग उगल रही हैं, भूमि पर मशीनगनें, ब्रेनगनें, स्टेनगनें, टामीगनें, बन्दूकें कारतूस बरसा रही हैं । इस समय वीर सैनिकों का जीवन कच्चे सूत के धागे के समान है ।

हे वीर सैनिको ! सोचो, समझो, देखो इस समय युद्धक्षेत्र में तुम्हारा कौन ? तो सीधा सा उत्तर है महा शक्ति वैष्णवी मां, जो लड़ते हुए समर भूमि में त्रिकूट पर्वत के तीन शिखरों से मानो त्रिशिखर रूपी तीन नेत्रों से देख रही है । वही उस समय अपने पुत्रों की रक्षा करती है । परन्तु शर्त यह है कि जो पुत्र अपना पूर्ण विश्वास अपनी सच्ची मां जगद् जननी जगदम्बा पर रखता है । अन्य पुत्रों पर यह सिद्धांत लागू नहीं होता है ।

हे वीर सैनिको ! यह जम्मू कश्मीर की भूमि देव भूमि तो है ही परन्तु साथ ही वीर भूमि भी है । बड़े बड़े योद्धा इस भूमि पर अवतरित हूए हैं । जैसे महाराजा ललितादित्य, मेघवाहन, महाराजा गुलावसिंह, जरनल, जोरावर सिंह, जरनल भूपसिंह, जरनल वाजसिंह, और अन्त में हुए हैं । वीर शिरोमणि ब्रिगेडियर श्री राजेन्द्र सिंह, कर्नल भगवान सिंह जिन्हों ने इटली और जर्मन के मोर्चों को तोड़ा था । अपनी और अपनी वीर भूमि जम्मू कश्मीर की विदेशों में धाक जमाई थी । कैसी वीर भूमि है यह स्मरणीय बन्दनीय और पूज्यनीय है ।

हे वीर योद्धाओ ! यह जम्मू कश्मीर की भूमि रण स्थली रही है । सन् १९४७ ई० में मुट्ठी भर डोगरा वीर सैनिकों के साथ ऊडी के मोर्चे पर असंख्य कवालियों के साथ लड़ते लड़ते डोगरा सेना के महारथी वीर ब्रिगेडियर श्री राजेन्द्र सिंह ने वीर गति पाई थी । यह सारी जानकारी हमें इन के साथ लड़ने वाले साथियों से प्राप्त हुई थी । जब तक इनके शरीर में प्राण रहे तब तक एक भी कवाली कश्मीर की भूमि में दाखल हो नहीं सका । इस बीर भूमि में केवल हिन्दू ही वीर नहीं थे परन्तु मुस्लमानों ने भी भारत भूमि की सुरक्षा के लिए कई वार डोगरा फौजों में वीरता

के कारनामे कर दिखाए हैं। कर्नल पीर मुहम्मद तथा उनके पितामह जो महाराजा रणजीत सिंह के पास रहे। उन्हों ने भी भारत की उत्तरी सरहदों को महाराजा गुलाब सिंह के आदेश से विजित किया था। कर्नल वली मुहम्मद इत्यादि कई वीर इस पवित्र भूमि के लिए लड़ चुके हैं।

ऐसे ही झंगड़, नौशहरा क्षेत्र में भारत माता के सच्चे सपूत वीर योद्धा स्वर्गीय ब्रिगेड़ियर उस्मान ने पाकिस्तानी सेना का मुकाबला करते हुए वीरगति पाई थी।

सन् १९४७ में पाकिस्तान ने झंगर के मोर्चे पर हमला किया था, घमासान लड़ाई चल रही थी। पाक की असंख्य सेना आक्रमण कर रही थीं। उन दिनों ब्रिगेडियर साहब भूमि पर सोते थे, बाएं हाथ से भोजन करते थे। इन की प्रतिज्ञा थी कि जीते जी मैं शत्रु को भारत भूमि के अन्दर में इक इन्च भी घुसने नहीं दूंगा। उस समय इन्हों ने वैष्णवी माता के त्रिकूट पर्वत की ओर मुख करके प्रार्थना की कि हे मां! क्या तूं केवल हिन्दुओं की माता है या सारे जहान की। (विश्व माता या जगद् जननी) तू तो सब की ही मां है। हे मां! मुझे ऐसी खैरात दो कि जिस से पाकिस्तानी हमारे मोर्चे को तोड़ न सकें।

लड़ते लड़ते भले ही मेरी जान भी चली जाए, परन्तु मां मेरी पराजय (शिकस्त) न हो। लोग मुझे भारत माता का सच्चा सपूत कहें न कि गद्धार। यह नहीं सोचें कि यह मुस्लमान था यह पाकिस्तान के साथ लड़ा ही नहीं। मेरी लाज मां तेरे ही हाथ है। झंगड़ में लड़ते लड़ते भले ही वीरगति पा जाऊं। पर भारत मां का सच्चा सपूत कहा जाऊं।

यह घटना लिखते समय कुछ लोगों ने सन्देह किया था कि मुस्लमान होने पर वह ऐसे कह सकते थे?

इस विषय की पूरी जानकारी सन् १९४७ में झंगड़ जाने पर हमें प्राप्त हुई थी। हमने इन की समाधि के भी दर्शन किए। इस विषय पर विशेष विवाद नहीं होना चाहिए। क्यों कि कई हिन्दू

पीरों की पूजा तथा कवरों पर मन्नतें करते हुए देखे गये हैं।

ऐसे ही कई मुस्लमान भी हिन्दुओं के देवी देवताओं को मानते देखे गए हैं। माता वैष्णवी के दर्शनार्थ जाते समय कई मुस्लमानों को रास्ते में माता वैष्णवी के चित्रों को आगे रख कर माता की सुन्दर भेटें गाते देखा गया है। उस समय मेरे साथ मेरे छोटे भाई श्री द्वारिका नाथ शर्मा भी थे, जो इस समय कहीं पर सेना में सूवेदार हैं। एक मुस्लमान को माता वैष्णवी की गुफा के अन्दर पहले फारसी में फिर संस्कृत के श्लोकों में स्तुति करते देखा, वह एक विदेशी था।

फ्रांस के ऐसे अंग्रेज़ भी मिले इसी भूमि में जो हम से भी ज्यादा जानकारी माता वैष्णवी के विषय में रखते थे। लेखक ने पिछले प्रसंग में जम्मू कश्मीर के मुख्य मन्त्री वक्शी गुलाम मुहम्मद का थी वर्णन किया है।

इस वीर भूमि पर जरनल यदुनाथ सिंह, जरनल कुलवन्त सिंह, जरनल प्रीतम सिंह, जरनल आतमा सिंह हैं *। उस समय के मेजर रन्धावा, कर्नल चक्रवर्ती, कर्नल शमशेर सिंह आदि अनेक सेनापति इस पवित्र भूमि के दर्शन करके अथवा इस युद्ध भूमि या रणस्थली में अपने युद्ध कौशल दिखा कर वीर गति को प्राप्त हो गए अथवा पदोन्नति कर के पुनः भारत को ही चले गए।

ऊड़ी, पुन्छ, झंगड़, छम्ब के मोर्चों पर हजारों वीरों ने वीर-गति पाई है। जम्मू कश्मीर की भूमि पर १९४७ से आज १९७६ तक तीन बड़े युद्ध हो चुके हैं। तीनों युद्धों में भगवती की कृपा से भारतीय सेना विजयी रही।

१९४७ में एक कर्नल ने पुन्छ का एक मोर्चा लेना था। प्रातः चार बजे धाबा बोलना था, ये जंगली रास्ता पहाड़ी पर चलना था रात्रि का घना अन्धकार, इतनी कठिनाईयों के होते हुए भी सेना ने

---

* जिन की यादगार माता के जाते समय जम्मू नगर से १४ मील के फासले पर सड़क के किनारे बाएं तर्फ नन्दनी से इस ओर नाले के पार वस से स्पष्ट दिखलाई देती है।

प्रस्थान कर दिया। आधे रास्ते में जा कर रास्ता भूल गए। कर्नल ने भगवती महा माया का स्मरण किया और प्रार्थना की कि मां अब तू ही हमें रास्ता बतला। इतने शब्द कहते ही रात्रि के घने अन्धकार में एक बकरी वहां पर आ गई और सेना के पास आ कर खड़ी हो गई। माता के उपासक उस कर्नल ने सेना को कहा कि जिस ओर यह बकरी जाए गी उसी ओर हमें चलना है। यहां पर यह रुके, वहां पर हमें रुकना है।

वह बकरी रात के अन्धेरे को चीरती हुई सेना के आगे आगे चलती गई यहां पर जा कर वह ठहर गई सारी फौज वहां ठहर गई। टोह ली तो देखा शत्रु का मोर्चा पास ही था, ठीक प्रातः चार बजे धावा बोल दिया सूर्योदय से पहले ही घमासान लड़ाई के पश्चात् मोर्चा पाकिस्तान से जीत लिया। वह बकरी जिन्दा माता के मन्दिर जम्मू में वाहू के किले में सजा कर पैरों में घुंघरु डाल कर उसी फौज ने चढ़ाई थी।

परन्तु यह सिद्धांत कभी कभी लागू होता है सर्वदा ऐसा मत समझना। सेना में तो एक अटल सिद्धांत होते हैं, जो बदले नहीं जा सकते। यह तो कभी कभी अकस्मात ऐसी घटनाएं घटित होती हैं। यह सारी बातें दृढ़ विश्वास की हैं। मानो तो देवता नहीं तो पत्थर।

ऐसी अनेक और भी घटनाएं घटित हुई हैं, परन्तु विस्तार भय से हम दे नहीं रहे हैं। माता के जयकार बुलाते युद्ध में जाते समय, जवान मां वैष्णवी के दरवार में मनौतियां मान जाते हैं। हे मां! युद्ध में यदि हमारी विजय हो गई और हम जिन्दा आगए तो घर पीछे जायें गे पहले तेरे दरवार में आ कर दर्शन करें गे।

इसी विश्वास पर इस भूमि पर जो तीन युद्ध हुए उन में भारतीय वीर सैनिकों की विजय हुई है। अतः हे वीर सैनिको! याद रखो मां वैष्णवी भी हर समय तुम्हारे अंग - संग में है। चिन्ता मत करो, तुम दिन रात उसी महा शक्ति का स्मरण किया

करो। ऐसा करने से आप पर कोई भी विघ्न - वाधा आ नहीं सकती। यदि आ भी जाए तो मां वैष्णवी का वरदहस्त तुम्हारी पीठ पर है। सब बाधायें टल जायें गी, तुम्हारी मां सिंह बाहनी है। तुम अमर पुत्र हो, हर क्षेत्र में तुम्हारी विजय निश्चित है।

हम शुभ कामना करते हैं कि माता के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास रखने वाले वीर सैनिकों के परिवार में सुख शांति और गृहस्थ में धन धान्य की वृद्धि हो। और हर प्रकार से सुख शांति के सन्देश मिलते रहा करें।

हे सैनिको ! सदा शत्रु पर तुम्हारी विजय हो। हे महा शक्ति ! महा माया मां वैष्णवी वीर सैनिकों का आप के चरणों में शत शत प्रणाम।

———

श्री सप्तश्लोकी दुर्गा

श्री दुर्गा सप्तशती कल्याण गीता प्रैस गोरखपुर से उद्धृत

शिव उवाच—देवी त्वं भक्त सुलभे सर्वकार्य विधायिनि ।
कलौहि कार्य सिद्ध्यर्थ मुपायं ब्रूहि यत्नतः ।।

देव्युवाच—शृणुदेव प्रवाक्ष्यामि कलौ सर्वेष्ट साधनम् ।
मया तवैव स्नेहेनात्यम्वा स्तुतिः प्रकाश्यते ।।

ॐ अस्य श्री दुर्गा सत्तश्लोकी स्तोत्र मन्त्रस्य नारायण ऋषिः। अनुष्टुप् चन्दः श्री महाकाली महालक्ष्मी महा सरस्वत्यो देवताः श्री दुर्गा प्रीत्यर्थं सप्तश्लोकी दुर्गा पाठे विनियोगः ।।

ॐ ज्ञानिना मपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ।।१।।

दुर्गे स्मृता हरसिभीति मशेष जन्तोः ।
स्वस्थै स्मृता मति मतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्य दुःख भय हारिणि का त्वदन्या ।
सर्वोपकार करणाय सदार्द्र चित्ता ।।२।।

सर्व मंगल मंगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणि नमोस्तुते ।।३।।

शरणागतदीनार्त परित्राण परायणे ।
सर्व स्यार्ति हरे देवी नारायणि नमोऽस्तुते ।।४।।

सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्व शक्ति समन्विते ।

भयेभ्य स्त्राहि नो देवी दुर्गे देवी नमोस्तुते ।।५।।

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा ।
रुष्टातु कामान् सकलान भीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां ।
त्वामाश्रिता ह्या श्रयतां प्रयान्ति ।।६।।

सर्वा वाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्या खिलेश्वरि ।
एव मेव त्वयाकार्य मस्मद वैरी विनाशनम् ।।७।।

———

— हे माता के भक्तो ! —

आज मनुष्य का जीवन समस्याओं से भरा हुआ स्वयं भी एक समस्या है। मानव की आयु स्वल्प है और विघ्न बहुत हैं। समय की कमी, कार्य की अधिकता को देखते हुए हम ने सप्तश्लोकी दुर्गा को अपनी पुस्तक में रखा है, ताकि जो माता के श्रद्धालु भक्त स्तुती करना चाहें, ज्यादा समय नहीं तो कम से कम सप्तश्लोकी दुर्गा ही पढ़ लें। जो माहात्म्य सारी दुर्गा के पढ़ने से होता है वही फलादेश सप्तश्लोकी दुर्गा के पड़ने से भी होगा।

माता का प्रवेश

आज घर घर में माता का प्रवेश होते सुना जाता है। माता के श्रद्धालु भक्त उमड़े हुए वहां पहुंच जाते हैं। परन्तु वहां पर होता कुछ और ही है। कलियुग के पाखण्डी नर, नारी, अपने को माता का भक्त बता कर, सिर को हिला हिला कर, फूंकें मार मार कर, जयकारों का उच्चारण करके, बीच बीच में भयानक शब्द कह कर जो शब्द प्रभावशाली तथा कर्ण कटुक होते हैं। जैसे—

या दुष्ट तेरा सत्यानाश हो जाए, तुम्हारा पुत्र मर जाए, आठ दिन के अन्दर तुम्हारा सारा काम काज नष्ट हो जाए गा, आदि आदि शब्द कह कर सादे, सरल चित्त, श्रद्धालु भक्तों को इस दुःख से बचने का उपाय भी स्वयं ही बतलाते हैं। जैसे —

या दुष्ट, या चाण्डाल एक हज़ार रुपया और दस तोले सोना माता के चढ़ा दे तो इस आने वाले कष्ट से बच सकता है। ऐसे नाना प्रकार के प्रपंच रच कर सादे लोगों से पैसा ऐंठते हैं। ऐसे कई चित्र देखे जो अपने को माता के भक्त कहलाने वाले (जिन में माता का प्रवेश होता था) हथकड़ियां पहने आज हवालातों के सीखचों में वन्द या जेलखानों में सड़ रहे हैं।

माता के सच्चे भक्तो याद रखो इस प्रकार के पुरुष ही नहीं स्त्रियां भी विद्यमान हैं। जो झट ही माता का रूप धारण कर लेती हैं। हजारों रुपए भक्तों से बटोर कर वह कुकृत्य करते हैं। जिस को लिखने में मेरी लेखनी शर्माती है, लजाती है। आप स्वयं सोचिए विचारिए कि जो संसाररिक नर, नारी, दिन में सौ सौ बार झूठ बोलते हैं व भोजन करने के पश्चात् पूरी तरह पानी से

दांत भी साफ नहीं करते, शंका शौच के बाद पूरी तरह जल का सेवन भी नहीं करते, उन नराधमों में माता का प्रवेश हो यह कैसे हो सकता है।

कुछ लोग प्रश्न बता देते हैं, कुछ चमत्कारी बातें भी बता देते हैं। वह क्या है ? वह भूतात्माएं होती हैं या भटकी हुई आत्मायें। जो अपना नाम माता से जोड़ लेती हैं।

सब स्त्री - पुरुष ऐसे नहीं होते। कुछ ऐसे भी होते हैं जिन को माता का साक्षात्कार हो जाता है, वह तो अकेले ही आनन्द का अनुभव करते हैं। जैसे पूज्य, श्रद्धेय श्री रामकृष्ण जी परम हंस थे। ऐसे पुरुष पैसे इकट्ठे नहीं करते, वह तो गृहस्थ को एक भार मानते हैं। उन का स्थान माता वैष्णवी की तरह शांत, एकांत कोलाहल से रहित जंगलों में या पहाड़ों पर होता है। नगरों में या घरों में नहीं। हां इतना आवश्य है कि कुछ लोग माता के साधक आवश्य हैं।

यदि हमें कहीं विचित्रता देखने को मिली तो वह थी दिल्ली वाली पूज्य माता जी जिन्हों ने कटड़ा में श्री चिन्तामणि मन्दिर बनवाया है। सम्भवतः ऐसे कुछ नर, नारी और भी हैं, हम उन्हें जानते नहीं यदि होंगे भी तो बहुत थोड़े हों गे। अब माता के भक्त उपरोक्त बातों का स्वयं निर्णय करलें।

आदि शक्ति भगवती की आज्ञा से अपनी लेखनी को यहीं विश्राम देते हैं। मां वैष्णवी के भक्तों की जय हो। भक्त मन-रंजनी माता की सदा ही जय हो।

———

जगदम्बा और वलि प्रथा

भारत वर्ष में वलि प्रथा प्राचीन समय से ही चली आ रही है इस को वलि प्रथा न कह कर कुप्रथा ही कहता उचित होगा। यह प्रथा तामसिक और सात्विक ढंग से चली आई है। तमोगुण प्रधान पुरुष मांस की वलि चढ़ाते हैं। सात्विक गुणी पुरुष खीर या भात की वलि चढ़ाते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि यह वलि प्रथा चली कैसे ? तो स्पष्ट उत्तर है कि मनुष्य की स्वार्थ, महास्वार्थ तथा अधम स्वार्थ मनोप्रवृत्ति ने ही इसे जन्म दिया है। जिस वस्तु को मनुष्य स्वयं चाहता था या पसन्द करता था, उसी से देवता का नाम जोड़ कर स्वयं भोगना प्रारम्भ कर दिया।

हाथी की वलि अथवा सिंह की वलि क्यों नहीं चढ़ाते, भैरों के शराव की वलि, काली के बकरे की वलि, शिव पर भांग का गिलास भर कर चढ़ाना, यह क्या शिव तो आक धतूरा भी पीते थे। तुम भी पी कर देखो भांग ही क्यों ?

रावण ने अपने दस सिर काट कर चढ़ाए थे तुम भी चढ़ा कर देखो। जो जगदजननी है, संसार की मां है वह ऐसा कभी नहीं कर सकती कि एक के पुत्र की वलि ली जाए और दूसरे को तन्दरुस्त किया जाए। यह कैसे सम्भव हो सकता है। उस के लिए सब पुत्र समान हैं। इसी लिए मां को जगदम्बा, जगद् का अर्थ संसार अम्बा माता को कहते हैं। उसी से जगदम्बा, जगद जननी, विश्व जननी, विश्व माता मां के ही नाम हैं। ऐसी माता कब चाहेगी कि मेरा कोई भी पुत्र मरे।

वलि लेने वाली देवी होगी या राक्षसी। देवता वही है जो दूसरों के लिए कष्ट सहन करे और दूसरों को सुख पहुंचाए। महादेव जी ने स्वयं जहर (विष) पान किया और दूसरों को अमृत पिलाया। इसी लिए वह सब देवों में महादेव हैं। अर्थात् सब से बड़े देवता इसी सिद्धांत के आधार पर माता को विश्व माता कहा गया है।

यथा— त्वमीश्वरी देवी चराचरस्य ।।

हे देवी ! तू चराचर की माता है। मां तो सब जगत् की रक्षक है न कि भक्षक।

हमारे देश में वलि प्रथा बड़ी प्राचीन है। यहां कभी अश्वमेध यज्ञ, कभी छाग (बकरा) यज्ञ कभी नरमेध यज्ञ तक प्रचलित थे। इसी कुप्रथा को मिटाने हेतु बुद्ध धर्म को अग्रसर होना पड़ा। समाज में उस ससय सुधार करने के लिए। मानव अपने स्वार्थ के लिए कैसी कैसी कल्पनाएं कर लेता है। संसार के निर्माता, भाग्य, विधाता तीनों देव हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों देवताओं के वलि नहीं चढ़ाई जाती है। तो फिर वलि प्रथा को किस ब्रह्मा ने जन्म दिया ?

स्पष्ट है कि मानव की उग्र लिप्सा ने ही इसे जन्म दिया है। जैसे भैरों के पुजारी सुरा शराब का नैवेद्य लगाते हैं। कहां भारत के चारवाक दर्शन ने भी लिखा है कि यावद्जीवेद् सुखं जीवेद ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्। इन्होंने भी सुख का साधन घी को माना है शराब को नहीं। सुरां पिवेत का वर्णन नहीं मिलता।

कई लोग अपनी भूख को शांत करने के लिए कहते हैं कि हम भांग इस लिए पीते हैं कि शिव भगवान् भी पीते थे। परन्तु वह धतूरे का नाम नहीं लेते।

हे मानव ! तेरी कैसी स्वार्थमयी भूख है ? तू सूती कपड़ों को अपवित्र मानता है, परन्तु कीमती गर्म अथवा रेशमी कपड़ों को पवित्र मानता है। तेरे लिए लोहा अपवित्र परन्तु सोना गन्दी नाली में भी पड़ा हुआ पवित्र है। धन्य मानव धन्य धन्य तेरी

स्वार्थमयी वृत्ति। भूतों की उपासना करने बाला भूत योनि में ही जाता है।

वलि प्रथा सर्वथा निषिद्ध है। यदि आप चाहो तो कढ़ा प्रसाद या खीर की वलि दो। यदि आप सत्य ही वलि देना चाहते हो तो वलि दो अपने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार की। जिस से तुम्हारा इस लोक तथा परलोक में भी कल्याण हो। आप को जीवों की वलि नहीं देनी चाहिये और घर घर में जा कर वलि न देने का प्रचार भी करना चाहिये। ऐसा करने से वलि प्रथा समाप्त हो सकती है और माता जगदम्बा भी प्रसन्न हो कर हर प्रकार से सुख शांति देने की कृपा करेगी।

।। जय वैष्णवी शक्ति, जय जगद् जननी जगदम्बा ।।

———

धन्यवाद

जिज्ञासु पाठकों की विशेष जानकारी के लिए हम अग्रिम पृष्ठ पर भगवती सम्बन्धी दो लेख प्रस्तुत कर रहे हैं।

यह दोनों लेख हम ने ब्रह्म पुराण अंक कल्याण पत्रिका गीता प्रैस गोरखपुर (उ० प्र०) से साभार उध्दृत किए हैं। माघ सं० २००३ तद्नुसार ई० सन् जनवरी १९४७। प्रथम लेख श्री दुर्गा सप्तशती की उत्तमता और गम्भीरता पृ० सं० ६०३ लेखक डा० सम्पूर्णानन्द जी शिक्षा सचिव उत्तर प्रदेश (यू० पी०)। दूसरा लेख भौतिक विज्ञान और शक्ति वाद, पृ० सं० ६२९ लेखक पं० श्री रामनिवास जी शर्मा हैं।

सम्माननीय प्रधान सम्पादक महोदय कल्याण पत्रिका गीता प्रैस गोरखपुर का हम हृदय से आभार प्रकट करते हैं जिन्हों ने हमें लेख छापने की स्वीकृति प्रदान कर अनुगृहीत किया है।

विनीत

जगदीश चन्द्र शास्त्री

दुर्गासप्तशती की उत्तमता और गम्भीरता

(लेखक—श्री सम्पूर्णानन्द जी, शिक्षासचिव युक्तप्रांत)

श्री दुर्गासप्तशती हम हिन्दुओं की एक पूज्य पुस्तक है। दुर्भाग्यवश वह हम से बहुतों के लिये नित्य पाठ की पोथी है। जो लोग उसे स्वयं नित्य नहीं पढ़ते, उनके घर भी दोनों नवरात्रों में पुरोहित जी उस का पाठ कर जाया करते हैं। लोग उस के श्लोकों को मन्त्रकल्प मानते हैं और उन के हवनादि करते हैं।

मैं 'दुर्भाग्यवश' इस लिये कहता हूं कि मेरी ऐसी धारणा है कि आजकल जो पुस्तक हमारे नित्य पाठ की पोथी हो जाती है उस की हम प्रायः दुर्गति कर डालते हैं। उस के शब्दों को रट लेने में ही हमारी इतिकर्तव्यता रह जाती है। इस के अर्थ और भाव से हमें प्राय: कोई सरोकार नहीं रह जाता।

मेरी निज की धारणा है—और यह धारणा कई बार की आवृत्ति पर अवलम्बित है कि सप्तशती के श्लोक मन्त्रशक्ति रखते हों या न रखते हों पर उन में मनोविज्ञान का बड़ा अच्छा समावेश है और वह योग और वेदांत की सुन्दर शिक्षाओं से परिप्लुत हैं। मैं इस लेख में सब बातों के दिखलाने का दावा तो नहीं कर सकता, पर विद्वानों का ध्यान इस ग्रन्थ-रत्न की ओर अवश्य आकृष्ट करना चाहता हूँ। दु:ख की बात यह है कि इतने आदमी इस पुस्तक को पढ़ते और सुनते हैं पर जिन लोगों ने इस की व्याख्या करने का ठेका लिया है वे इस के तत्त्वों को या तो समझते नहीं या लोगों के सामने रखते नहीं !

'सङ्घे शक्तिः'— इस सिद्धान्त को सभी मानते हैं। प्रत्यक्ष देखा जाता है कि जो काम एक व्यक्ति नहीं कर सका उसे ही समुदाय कर डालता है। पर दुर्गासप्तशती में इस का जो सुन्दर उदाहरण और सुन्दर उपदेश दिया हुआ है उस की ओर लोगों का ध्यान नहीं आकर्षित किया जाता। द्वितीय अध्याय में लिखते हैं— देवासुर-युद्ध में देवसैन्य को पराजित करके महिषासुर इन्द्रपद पर प्रतिष्ठित हुआ।

देवगण में से किसी में यह सामर्थ्य नहीं थी कि उसका सामना कर सकता। उस समय आपत्ति से सताये हुए और निःशक्त क्रोध से जर्जभूत देवों की अन्तरात्मा हिल उठी। ब्रह्मा आदि सभी देवों के शरीर से तेज निकला। उसी तेज ने एकत्र हो कर महालक्ष्मी का स्वरूप धारण किया और महिष का मर्दन किया। जो काम पृथक्-पृथक देवगण नहीं कर सकते थे, जो काम सेना रूप से मिलने पर भी अपने - अपने व्यक्तित्व बने रहने के कारण वे लोग़ नहीं कर सके, वही काम विपत्ति की पराकाष्ठा की अवस्था में अपने व्यक्तित्व को एक मात्र दबा कर अपनी शक्तियों को एकीभूत करके वही लोग कर सके। विजयदायिनी शक्ति उन के भीतर थी, कहीं बाहर से नहीं आई। यह हम लोगों के लिये बड़ी ही शिक्षादायिनी कथा है।

संसार में देखा जाता है कि जो लोग व्यवहार-कुशल होते हैं उन में वाक्-पटुता कम होती है, वाणिज्य-व्यवसाय में लगे हुए लोग प्रायः मितभाषी होते हैं और विद्याव्यसनी लोग तो स्वभावतः प्रगल्भ होते हैं, सप्तशती ने इस मनोवैज्ञानिक अनुभव का सुन्दर चित्र खींचा है। प्रथम चित्र में ब्रह्मा जी के स्तोत्र के उत्तर में महाकाली ने एक शब्द भी न कहा। उनका काम करके अन्तर्धान हो गयीं।

मध्यम चरित्र में देवगण की स्तुति के उत्तर में महालक्ष्मी 'तथा' मात्र कह कर अन्तर्हित हो गयीं। परन्तु उत्तम चरित्र में देवगण के उत्तर में महासरस्वती प्रायः डेढ़ अध्याय का व्याख्यान दे

गयीं। संसार में प्रायः सदैव, और भारत में आजकल विशेष रूप से हिंसा और अहिंसा का प्रश्न समझदार मनुष्यों के हृदय को दोलायित करता रहा है। किसी के लिये हिंसा का अर्थ है शत्रु का मूलोच्छेद, किसी के लिये अहिंसा का अर्थ है शत्रु के हाथ से सब कुछ सह लेना। एक ओर स्मृतियों का उपदेश है 'हन्यादेव आततायिनः', दूसरी ओर महात्मा जी का अहिंसा का आदेश है। ऐसी अवस्था में साधारण मनुष्य क्या करे? व्यक्ति विशेष के लिये तो अहिंसा, योगदर्शन के शब्दों में 'देशकाल-समयाद्यनवच्छिन्नसार्वभौममहाव्रत' है। ऐसा विशेष व्यक्ति सर्वत्र हर दशा में, हर अवस्था में, हर समय, हर व्यक्ति के साथ पूर्ण अहिंसा का पालन करेगा। पर मध्यम मार्ग पर चलने वाले साधारण मनुष्य के लिये यह उपदेश नहीं है। उनको तो यही उपदेश श्रेयस्कर है—'Hate the sin, but love the sinner.' (पाप से घृणा, पर पापी से प्रेम करो।) सप्तशती ने इसका बड़ा सुन्दर उदाहरण दिया है। महिषासुर के वध के वाद चौथे अध्याय में देवगण कहते हैं—हे भगवती! आप तो इन शत्रुओं को यों ही भस्म कर सकती थीं, इनपर शस्त्र चलाने की क्या आवश्यकता थी?

दृष्ट्वै किं नु भवती प्रकरोति भस्म
सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम्।

इसका उत्तर वे स्वयं यों देते है—'यह दुष्ट, पापकर्मा यदि यों मरते तो नरक जाते, आप चाहती थीं कि इनके उठ जाने से संसार का कल्याण हो पर इनका भी कल्याण हो। इस लिये शस्त्र चलाया कि लड़कर वीर-गति प्राप्त करके ये सब स्वर्ग जायँ।'

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि।।

सप्तशती के शब्दों में जिसे 'चित्त कृपा समरनिष्ठुरता' कहा है, मुझे तो साधारण मनुष्य के लिये सबसे सुन्दर व्यावहारिक नीति प्रतीत होती है चाहे उसे हिंसा कहिये चाहे अहिंसा।

वेदान्त—अद्वैतवाद के इसमें अनेक निदर्शन हैं। दसवें अध्याय में शुम्भ कहता है कि तुम तो इन्द्राणी आदि के बल के सहारे लड़ रही हो। इस पर भगवती के शरीर में ये सब ब्रह्माणी इन्द्राणी, वैष्णवी आदि देवियां समा जाती हैं। अकेले एक महासरस्वती मूर्ति रह जाती है। उस अवसर पर देवी कहती हैं—

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा।

'इस जगत में मैं अकेली हूँ। मेरे सिवा दूसरा कौन है!' जिस देवी का इसमें वर्णन है वह शाङ्करवेदान्त की माया से भिन्न है, इस बात को प्रथम अध्याय में सुमेधा ने सपष्ट कर दिया है।

महामाया हरेश्चैषा तया सम्मोह्यते जगत्।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा॥
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति।

'भगवान् की यह माया जगत् को मोहित करती है, यह देवी ज्ञानियों के भी चित्त को बलपूर्वक खींच कर मोह में डाल देती है।' जिस बात को वेदान्तदर्शन के द्वितीय सूत्र 'जन्माद्यस्य यतः' के द्वारा प्रतिपादित किया गया है वही बात ब्रह्मा जी प्रथम अध्याय में कहते हैं—

.... त्वयैतत् सृज्यते जगत्।
त्वथैतत् पाल्यते देवी त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा॥

'हे देवी! तू ही इस जगत् की सृष्टि करती है, तू ही इसका पालन करती है और अन्त में तू ही इसको अपने में लीन कर लेती है।' ऋग्वेद का नासदीय सूक्त दर्शन की पराकाष्ठा और प्रथम विवेचन है। उसकी बहुत ही सुन्दर व्याख्या सप्तशती के प्रथम अध्याय के इन शब्दों से होती है—

यच्च किञ्चिद् क्वचिद् वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके
तस्थ सर्वस्य या शक्तिः सा त्वम् ....

जिन के द्वारा यह बतलाया गया है कि सत् और असत्, दोनों प्रकार की वस्तुओं के भीतर जो शक्ति अर्थात् सत्ता 'तत्तद्वस्तुता' है, वह भगवती ही है। व्यवहारिक वेदान्त का चौथे अध्याय में एक बहुत ही अपूर्व उपदेश है। संसार में प्राय: देख पड़ता है—*'Truth for ever on the scaffold, wrong for ever on the throne'*—अच्छे आदमी कष्ट पाते हैं और बुरे आदमी सब प्रकार का सुख भोगते हैं। इस बात को देख कर कितने ही मनुष्यों को धर्म की ओर से अश्रद्धा हो जाती है और कितने ही सम्प्रदायों ने अश्रद्धा से रक्षा करने के लिये, एक ईश्वर के साथ एक शैतान की कल्पना की है। वैदिक धर्म शैतान को नहीं मानता, पर उसे भी संसार के इस अन्धेर का उत्तर तो देना ही पड़ता है। वेदान्त के अनुसार सप्तशती कितना सुन्दर उत्तर देती है। चतुर्थ अध्याय में देवगण कहते हैं—

या श्री: स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मी:
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धि:।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तांत्वांनता:स्म परिपालय देवि विष्वम्॥

'जो श्री अर्थात् महालक्ष्मी (यह स्मरण रखना चाहिये कि यह स्तोत्र महालक्ष्मी का है) स्वयं पुण्यात्माओं के घर में अलक्ष्मी अर्थात् दारिद्रय बन कर निवास करती है, पापी राजसिक (कृतधिय: कर्मणि धीर्बुद्धिर्येषामिति राजसा:) लोंगों के हृदय में में बुद्धिरूप से निवास करती है, सत्पुरुषों के हृदय में श्रद्धा और कुलीनों के हृदय में लज्जा अर्थात् पुण्यापुण्य-विवेक, अंग्रेजी शब्द में *Concience* रूप से निवास करती है, उस तुझ को मैं प्रणाम करता हूं। हे देवि! विश्व का पालन कर।'

कितना सुन्दर भाव है? सत्पुरुष के घर की लक्ष्मी और पुण्यात्मा के मस्तिष्क की बुद्धि को भगवती का रूप मानना तो सरल है, पर सुकृति के घर का दारिद्रय और दुरात्मा के हृदय की बुद्धि को भी इस रूप में देखना वेदान्त का सच्चा आदर्श और उप-

देश है।* कई वर्ष हुए, इस श्लोक के अर्थ के सम्बन्ध में मुझ से कुछ सज्जनों से समाचार पत्रों में शास्त्रार्थ हो चुका है। प्राचीन टीकाकार ने भी अन्य प्रकार से अर्थ किया है, पर मुझे यही भाव रुचता है।

मैंने आरम्भ में कहा है कि इस ग्रन्थ में योग - सम्बन्धी बातें भी भरी पड़ी हैं। प्रथम अध्याय में इन की चर्चा अधिक है। यह स्वभाविक भी है। खण्डप्रलय के उपरान्त सन्धिकाल है। जलमयी सृष्टि है, अभी क्षिति.तत्त्व प्रकट नहीं हुआ है। जगतपाता विष्णु योगनिद्रा के वशीभूत हो कर निश्चेष्ट पड़े हुए हैं। ब्रह्मा अभी अभी समाधि से नीचे उतरे हैं। व्युत्थान अवश्य हुआ है, उन्हें सृष्टि करनी है, पर अभी क्या करना है, इस ओर ठीक - ठीक उन का ध्यान नहीं गया है। ऐसे ही अवसर रर मधु और कैटभ से सामना पड़ जाता है। अभी समाधि से उतरे ब्रह्मा में अहिंसा की प्रवृत्ति प्रबल है। अपनी रक्षा के लिये वे हाथ - पांव भी नहीं चलाते। उधर जगत् के हित के लिऐ यह आवश्यक है कि विष्णु योगनिद्रा के जाल से छूटें।

क्योंकि सृष्टि होते ही रक्षा की आवश्यकता पड़ जायगी। उस समय आद्यशक्ति अपने तामसी अर्थात् महाकाली रूप है। वह आवश्यकता देख कर और ब्रह्मा की चिन्ता का अनुभव करके विष्णु के शरीर को छोड़ देती है और फिर रजोगुण का प्राधान्य होता है। यह तो हुआ। उस समय ब्रह्मा जी ने भगवती की जो स्तुति की है, वह सप्तशती के सभी स्तोत्रों से सुन्दर, गम्भीर और अध्यात्म से परिपूर्ण है। ऐसा होना भी चाहिये था, क्योंकि ब्रह्मा जी अभी समाधि से उतरे थे। उदाहरण के लिये केवल तीन-चार शब्दों की

---

* इसी भाव को एक मुसलमान सूफी ने यों व्यक्त किया था—

तू अज़ सौबते दौरां मनाल शादां बाश।
के तीरे दोस्त बपहलुए दास्त मा आयद॥

तू संसार की विपत्तियों से रो मत, प्रसन्न रह, क्यों कि जो तीर तेरी छाती में लगता है वह मित्र का ही चलाया हूआ है।

श्रोर ध्यान श्राकर्षित करता हूँ।

त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ....
श्रर्धमात्रात्मिका नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ॥

मैं योगी होने का दावा नहीं करता, जो कुछ सद्गुरुश्रों के सत्सङ्ग में सुना है या सद्ग्रन्थों में पढ़ा है, उसी के श्राधार पर इन शब्दों की थोड़ी-सी व्याख्या करता हूं।

इस जगत् में पञ्चीकृत महाभूत काम कर रहे हैं। उन के एक - एक श्रणु में कम्पन है। उस कम्पन से यह जगत् शब्दायमान हो रहा है। यहां कम्पन है, वहां शब्द है पर उन के परमाणुश्रों में भी कम्पन है श्रौर उस कम्पन से एक सूक्ष्म शब्द - राशि उत्पन्न होती है। जैसा कि कबीर ने कहा है—'तत्त्व झंकार ब्रह्मांड माहीं। उस शब्द - राशि का नाम श्रनाहत नाद है, पीछे के महात्माश्रों के शब्दों में 'श्रनहद नाद' है। जिस समय तक श्रभ्यासी इस श्रनाहत नाद को नहीं सुन पाता, तब तक उसका श्रभ्यास कच्चा है।

पुनः कबीर के शब्दों में—'जोग जगा श्रनहद धुनि सुनिको।' जब श्रनाहत सुन पड़ने लगा तब इस का श्रर्थ यह है कि योगी का धीरे - धीरे श्रन्तर्जगत् में प्रवेश होने लगा। वह श्रपने भूले हुए स्वरूप को कुछ - कुछ पहचानने लगा। शक्ति, भैभव श्रौर ज्ञान के भण्डार की झलक पाने लगा श्रर्थात् महाकाली, महालक्ष्मी, महा-सरस्वती के दर्शन पाने लगा। जो श्रभ्यासी वहीं उलझ कर रह गया, वह तो वहीं रह गया—और दुःख का विषय है कि सचमुच बहुत - से श्रभ्यासी इस के श्रागे नहीं बढ़ते, पर जो तल्लीनता के साथ बढ़ता जाता है, वह क्रमशः ऊपर के लोकों में प्रवेश करता जाता है। श्रन्त में वह श्रवस्था श्राती है, जहां वह श्राकाश की सीमा का उल्लङ्घन करने का श्रधिकारो हो जाता है। वही 'शब्द' का श्रन्त है। पर श्रब लीन होते समय शब्द श्रनाहत के रूप में नहीं रहता। श्रब वह जिस रूप-में रहता है उस का सम्पुटिक प्रतीक—श्रर्थात् हमारी बोल-चालकी वैखरी वाणी में सब से अधिक -से-श्रधिक मिलता-जुलता रूप 'श्रो३म्' है। पहला रूप वह, जो

अकार से व्यक्त होता है, उस से भी सूक्ष्म उकार और उस से भी सूक्ष्म मकार है। इन्हीं तीनों को ब्रह्मा जी ने कहा है 'त्रिधा मात्रात्मिका नित्या।' इस के परे योगी को एक ऐसे सूक्ष्म ध्वन्याभासका अनुभव है, जो किसी प्रकार भी मनुष्यों की भाषा में व्यक्त नहीं हो सकता। इसी को ँ से कभी - कभी अङ्कित करते हैं और यही वह पदार्थ है, जिसे अर्धमात्रा कहते हैं। एतत्पश्चात् नाद अपने जनक आकाश में लीन हो जाता है। नाद के पीछे बिन्दु है, वही अशब्द, अनामि पद है।*

*यह गति योगी को षट्चक्र पार करके सहस्रदल कमलों में प्राप्त होती है। इसी को दूसरे शब्दों में तन्त्र और योगशास्त्र-ग्रन्थों में यों कहा गया है कि 'सार्द्धत्रयवलयाकृति' अर्थात् साढ़े तीन लपेटा मारे हुए कुण्डलिनी शक्ति सोयी रहती है। जब योगी उसे जगाता है तो वह चक्र - चक्र में चढ़ती हुई सहस्रार में जाकर पुरुष के साथ मिल कर उस में लीन हो जाती है। इसी का नाम शिव-शक्ति योग है। वहां तक पहुंचा योगी फिर नीचे नहीं गिर सकता। इसी लिए ब्रह्मा जी ने कहा है—'परापराणां परमा।' यही श्वेताश्वतर उपनिषद् का 'पतिं पतीनां मरमं परस्ताद्' है। यह केवल एक उदाहरण है। इस ग्रन्थ में, विशेषकर इस अध्याय में योगशास्त्र के रहस्य से पूर्ण अनेक स्थल हैं।

मैंने अभी तक केवल मूल ग्रन्थ के अंशों का उल्लेख किया है। यदि कोई मनुष्य वैदिक देवी सूक्त, रात्रिसूक्त और रहस्यत्रय विशेषतः प्राधानिक रहस्य की सूक्ष्मता की ओर ध्यान देगा तो उस को इस ग्रन्थरत्न की महत्ता का कुछ पता चलेगा। इनके निदर्शन के लिए कई पृथक् और बृहत् निबन्ध चाहिये। जैसा कि स्वयं देवीने कहा है—इन बातोंको 'चक्षुष्मन्तः पश्यन्ति नेतरे जनः।' मेरा उदेश्य केवल इतना ही रहा है कि इस पुस्तक की उत्तमता और इसके विषय की गम्भीरता की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट करूं। यह केवल अर्धशिक्षित पुरोहितों द्वारा पाठ करने-कराने की सामग्री न रह जाए। यदि इस उद्देश्य में मुझे किञ्चिन्मात्र सफलता हुई तो मैं अपने को धन्य समझूं गा। (शक्ति-अङ्क) ———

भौतिक विज्ञान और शक्तिवाद

(लेखक—पं० श्रीरामनिवास जी शर्मा)

आज से कुछ समय पहले भौतिक विज्ञान के पण्डितों का यह मत था कि सृष्टि की उत्पत्ति का कारण द्रव्य है और इसी का परिणाम यह विशाल सृष्टि है। द्रव्य को लाक्षणिकता के विषय में चिरकाल तक इन की यह विचार-परम्परा रही कि द्रव्य परिच्छिन्न, ससीम, अनेकजातिका, आणाविक, साकार, गुरुत्वाकर्षक बहुरूपी, रासायनिक निर्वाचित, पारस्पारिक सम्बन्धयुत शक्तिमय, शक्तिपरिवर्तनशील, स्थितिस्थापक गुणोपेत, घनत्वयुक्त, उष्णताग्राहक, अविनाशी, निष्क्रिय, चौम्बिक, दशा-परिवर्तनशील, (ठोस दशा में) घातक दबाव के अधीन, गौण गुण वाला और इन्द्रिय-ग्राह्य है। इस के बाद एक समय आया जब कि, ये परमाणु-वाद पर जोर देने लगे और सृष्टि का कारण कुछ परिमित पदार्थों के परमाणुओं के योगायोग को मानने लगे। परन्तु कालान्तर में परमाणुओं की भिन्नता का झगड़ा भी मिट गया और सब पदार्थ एक ही प्रोटाइल (*Protyle*) नामक पदार्थ के विकार माने जाने लगे। यही पदार्थ सृष्टि की उत्पत्ति का मूलतत्व भी समझा जाने लगा। इस के बाद वैज्ञानिकों का ध्यान शक्ति की ओर गया और चिरकालीन विचार से उन की समझ में यह आया कि असल में शक्ति ही सृष्टि का मूल कारण है और धीरे-धीरे यह लोग शक्ति के छः रूप मानने लगे—गति, ताप, प्रकाश, विद्युत्, चुम्बक और रसायन।

वैज्ञानिकों का बहुत सा समय इन्हीं छः प्रकार की शक्तियों

की छानबीन में बीता । अब भी मूल-शक्ति और उस के प्रकार-भेदों की छानबीन का विषय चल ही रहा है। परन्तु कुछ वर्ष हुए जब विलियम पोप ने अपनी विवेचना से यह भी सिद्ध कर दिया कि, यह पूर्वोक्त छः प्रकार की शक्तियां असल में विविन्न नहीं हैं, एक ही वस्तु हैं। यह आपस में रूपान्तरित भी हो सकती हैं। शक्तियों का यही आबिर्भाव और तिरोभाव है, अन्यथा इन की वास्तविक उत्पत्ति और नाश नहीं होता। किन्तु एक समय ऐसा भी आया जब कि, प्राण और जीव नाम की दो शक्तियां और भी मानी जाने लगीं। किसी - किसी के मत में शक्ति - समावर्तन का सिद्धान्त इन के लिये भी स्वीकार किया गया। अन्त में यह विचार उत्पन्न हुआ कि ये सब शक्तियां किसी एक नित्य, अज्ञेय, अपरिच्छिन्न भूल-शक्ति का परिणाम है । इस का श्रेय हर्बर्ट स्पेंसर और उस के अनुयायियों को मिला। हर्बर्ट स्पेंसर का इस विषय में सिद्धान्त है कि —

By presistence of force we really mean the persistence of some cause which transcends over knowledge and conception. In asserting it, we assert an unconditional reality without beginning or end.

सर विलियमक्रुक्स साहब ने भी एक बार ब्रिटिश एसोसिएशन में इसी अज्ञेय शक्ति पर अपना विश्वास प्रटक करते हुए कहा था कि, 'जड वस्तु और जड शक्ति के मूल में एक सूक्ष्मततम चेतन शक्ति विद्यमान है।'

यहां यह बता देना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि इस शक्ति-सिद्धान्त के वैज्ञानिक रहस्य को भारतवासी बहुत पहले से जानते हैं। स्वामी शङ्कराचार्य ने वेदान्त-भाष्य में शक्ति के विषय में लिखा है कि, 'शक्ति से ही जगत् उत्पन्न होता है और शक्ति में ही विलीन होता है। जगत् शक्ति की ही परिणति है।' गोग-वाशिष्ठ रामायण में आता है, परिच्छिन्न और अपरिच्छन्न सब प्रकार की सत्ता ही शक्ति है।' प्राचीन दार्शनिकों ने शक्ति को

आठ प्रकार के मूल पदार्थों में माना है, परन्तु शिवादित्य ने 'सप्त-पदार्थी-संहिता' में द्रव्य गुण कर्मादि के स्वरूप को ही शक्ति बतलाया है। न्याय, पातञ्जल और मींमांसा आदि दर्शनों में भी तरह-तरह से शक्ति की स्थापना की गयी है। वेदों के स्वाध्याय से भी हमें शक्ति के एकत्व का निश्चय होता है।

पाश्चात्त्य और पौरस्त्य विद्वानों के उपर्युक्त मतों से यही सिद्ध होता है कि यह विश्व-ब्रह्माण्ड शक्ति का कार्य है। परन्तु अब पाश्चात्त्य विद्वानों के विचार में यह बात भी आने लगी है कि प्रत्येक वस्तु में प्रकृति और वासना है। परमाणु तक में चेतना और इच्छा-शक्ति है। मि० टिंडेल का तो यह मत है कि परमाणु के समुदाय में *Desire of Life* (जीवन की इच्छा) है। अनेक विद्वान् मूल शक्ति को इच्छा शक्ति और प्राण-शक्ति भी मानते हैं। एक प्रमुख वैज्ञानिक ने स्पष्ट शब्दों में कहा है, अब तक की हमारी खोज का यह परिणाम है कि, इस द्रव्यात्मा जगत् को इस रूप में लाने वाली इस के अन्दर एक सञ्चालक प्राण-शक्ति है और इस के पीछे भी एक सर्वव्यापिनी इच्छा-शक्ति है।'

अनेक पाश्चात्त्य विद्वान् इस शक्ति को अब *Intelligence* (बुद्धि) भी कहने लगे हैं। उन का कहना है कि प्रत्येक वस्तु में हमें बुद्धि मालूम होती है। वृक्ष पर चढ़ने वाली बेल में भी हम बुद्धि का अनुभव करते हैं। एक वैज्ञानिक इस विषय में इस तरह कहते हैं—क्रिस्टल की उत्पत्ति, स्थिति, साधारण धर्म, संघठन और अन्यान्य घटनाओं की आलोचना से यह विश्वास होता है कि सम्पूर्ण जड़ जगत् पर एकमात्र शक्ति का आधिपत्य है। इस शक्ति को हम जीवन कह सकते हैं। ताप, प्रकाश, रसायन, विद्युत् योगाकर्षण आदि शक्तियां इस जीवनी-शक्ति का ही प्रकाश है।

इस तरह हम देखते हैं कि अनेक वैज्ञानिक और दार्शनिक लोग द्रव्य और शक्ति के स्थान में अब प्रकारान्तर से सच्चिदा-नन्दस्वरूपिणी शक्ति की कल्पना करने लगे हैं।

इधर आर्य महर्षियों का वहुत पहले से यह निश्चय है कि इस संसार का कारण चिन्मयी, प्राणस्वरूपिणी, संसार व्यापिनी एकमात्र शक्ति ही है। इसी को आर्य लोग आजतक इस तरह नमस्कार करते आये हैं —

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥

हमारे शास्त्रों में शक्ति के मुख्य तीन रूप माने गये हैं—एकपरा (विष्णु - शक्ति), दूसरी अपरा (क्षेत्रज्ञाख्या), तीसरी अविद्या कर्मसंज्ञाख्या)।

विष्णुशक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथाऽपरा।
अविद्या कर्मसंज्ञाख्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥
(विष्णुपुराण ६।७।६१)

पहली परा शक्ति (वैष्णवीशक्ति) ही महामाया है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु. आकाश, मन, बुद्धि और अहङ्कार इसी के रूप हैं—इसी की परिणति हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि समस्त संसार शक्तिमय है। और शक्ति के इन तीनों रूपों से आर्यसाहित्य भरा पड़ा है। मार्कण्डेय पुराण में शक्ति के विषय में लिखा है।

यच्च किञ्चद् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥

अर्थात् हे देवी! सर्वत्र जड़ - चेतन जगत् में जो कुछ आत्मस्थ शक्ति है, वह तू ही है।

तन्त्र - ग्रन्थों में भी इसी महाशक्ति का इस तरह गुणगान किया गया है —

त्वमाद्या परमा शक्तिः सर्वशक्तिस्वरूपिणी।
तव शक्त्या वयं शक्ताः सृष्टिस्थितिलयादिषु ॥

महर्षि वेदव्यास ने भी इसी महामाया शक्ति को परब्रह्म वतलाया है। देखिये महाभागवत् में लिखा है —

या मूलप्रकृतिः सूक्ष्मा जगदाद्या सनातनी।
सैव साक्षात् परं ब्रह्म सास्माकं देवतापि च ॥

अर्थात् जो सनातन, सूक्ष्म, मूल-शक्ति है वही परब्रह्म परमात्मा है। सृष्ठि-क्रमका वर्णन करते हुए महर्षि वेदव्यास आदि शक्ति का तात्त्विक और अलङ्कारिक वर्णन किया है। वर्ण का अभिप्राय यह है कि सृष्टि के आदिमें न सूर्य था न चन्द्र और न नक्षत्रादि। न दिन था, न रात, न अग्नि, न दिग्दिगन्त और इन का ज्ञाता। विश्व-ब्रह्माण्ड उस समय शब्द-स्पर्शादि गुण-रहित, तेजोर्वजित और अन्धकारमय था। श्री केवल एक मात्र ब्रह्मरूपिणी, सच्चिदानन्द-विग्रहा, महामाया, मूल-शक्ति। उसने अपनी इच्छा से सत्, रज और तम-गुणों द्वारा एक चेतनाहीन पुरुष को उत्पन्न किया और उस में अपनी सिसृक्षा (सृष्टी करने की इच्छा) शक्ति प्रविष्ट की। उस पुरुष से फिर गुणयत्रयके विभागाणुक्रम द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और महेश उत्पन्न हुए। इस के बाद भी सृष्टि-क्रम में गति न देख कर भगवती महामाया ने उस मूल पुरुष को 'जीव' और 'परम पुरुष' दो भागों में विभक्त किया और मूल-प्रकृति स्वयं 'माया', 'परमा' और 'विद्य'—इन तीन रूपों में विभक्त हुई। इन में जीवों को मोहित करने वाली और संसार में प्रवृत्त करने वाली माया, जीवों में परिस्पन्दनादि गुणों को उत्पन्न करने वाली चैतन्यमयी संजीवनी शक्ति परमा और तत्त्व-ज्ञानस्वरूपा जीवों को संसार से निवृत्त करने वाली शक्ति विद्या कहलायी।

व्यास के श्लोकों में मुख्यत: चेतन शक्ति-वाद के सृष्टि-क्रम का वर्णन है। इन में विज्ञानसम्मत चेतन मूल-शक्ति इच्छा का भी समावेश हो जाता है। शक्ति को संसार का मूल-तत्त्व मानने वाले अनेक वैज्ञानिक इसी चेतन इच्छा-शक्ति को ही संसार का मूल तत्त्व मानते हैं। डा० मार्टिन ने भी इसी बात को प्रकारान्तर से स्वीकार किया है कि 'प्रकृति में जो कुछ होता है, उसका आवश्य कुछ कारण है और वह कारण हमारी इच्छा-शक्ति के समान ही है। इस दृष्टि से यह सृष्टि किसी महान् पुरुष की इच्छा-शक्ति का कार्य है।'

लार्ड कालविन ने तो मुक्त-कण्ठ से इस बात को स्वीकार किया है कि 'सृष्टि की उत्पत्ति के मूल में अवश्य ही कोई सज्ञान

चेतन-शक्ति है। वे कहते हैं, 'विज्ञान इस बात को सिद्ध करता है कि विश्व का कोई कर्ता है। इस से विश्वास होता है कि ईश्वरीय रचना के मूल में कोई नियामक और सञ्चालल शक्ति है जो भौतिक विद्युच्छक्ति से सूक्ष्म है।'

इस उपर्युक्त तर्क-परम्परा के विषय में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि भौतिक विज्ञान और भारतीय शक्ति-बाद की दृष्टि से शक्ति ही सृष्टि का आदि-कारण है, परन्तु ब्रह्म-वाद और जगत् के अन्यान्य दार्शनिक सिद्धान्तों की दृष्टि से एक ईश्वर ही सृष्टि की उत्पत्ति का कारण माना जाता है ऐसी दशा में शक्ति-वाद सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र सिद्धान्त नहीं ठहरता। शक्ति.बाद की दृष्टि से इस का यही उत्तर है कि, शक्ति को ब्रह्ममयी और ब्रह्मको शक्तिमय मान लेने से वास्तविक सृष्टि के क्रिया-कलाप की विवेचना में कोई झगड़ा नहीं रहता। ऐसे ही जड प्रकृति ईश्वर के सहयोग से चेतना को प्राप्त होती है या देवी ने निर्जीव मूलपुरुष में चेतना उत्पन्न की, दोनों एक ही बात है। शक्ति भी तत्त्व है और परमात्मा भी तत्त्व। एक को गौण और दूसरे को प्रधान मान लेने से ब्रह्मवाद के प्रश्न का सहज में समाधान हो जाता है। ब्रह्मवाद में ब्रह्म की इच्छा प्रकृति है और शक्तिबाद में देवी की इच्छा प्रकृति है। ब्रह्मवाद में जैसे ब्रह्म और शक्ति का वर्णन है वैसे ही शक्तिवाद में दोनों के स्थान में मूलशक्ति के रूपान्तरों का वर्णन मिलता है। आधुनिक भौतिक-शास्त्रवादी तो ऐसा ही मानते भी हैं और देवी-सम्प्रदाय वालों की यही विचार-परम्परा है। शास्त्र भी हमें यही बतलाते हैं कि—

तत् सद् ब्रह्मेति यच्छ्रुत्वा सेदृकं प्रतिपाद्यते।
स्थिता प्रकृतिरेका सा सच्चिदानन्दविग्रहा॥

इसी दृष्टि से अनेक शक्तिवादी-सम्प्रदाय ब्रह्माण्ड का कारण माया, माया का कारण पुरुष और पुरुष का कारण शक्ति को मानते हैं। इस के बाद उन की दृष्टि में कोई मुख्यतम तत्त्व नहीं रहता। शक्तिवाद तो यह भी मानते हैं कि—

शक्तिर्ब्रह्मा शिवः शक्तिः शक्तिर्विष्णुश्च वासवः ।
अन्ये च बहवो देवाः शक्तिमूलाः प्रकीर्तिताः ।।

इसके सिवा गीतोक्त 'दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योग-मैश्वरम् ।' के स्थान में शक्तिवादी महाभागवतकार के शब्दों में कह सकते हैं—

ददामि चक्षुस्ते दिव्यं पश्य मे रूपमैश्वरम् ।
छिन्धि हृत्संशयं विद्धि सर्वदेवमयीं पितः ।।

शक्तिकागमसर्वस्व में तो महामहिम शक्ति के महात्म्य का वर्णन करते हुए स्वयं महादेव जी कहते हैं कि 'भगवती शक्ति के योग से ही मैं सर्वकाम-फलप्रद शिवत्व को प्राप्त हुआ हूं।' तन्त्र-ग्रन्थों में तो साफ लिखा हुआ है कि, 'सर्वशक्तिमयञ्जगत् । नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया व्याप्तमिदं जगत् ।।' ये शब्द शक्ति की विशेषता के ही द्योतक हैं। महामाया मूलशक्ति दुर्गा के विषय में शास्त्र हमें बतलाते हैं कि 'समस्त कारण का कारण माया का अधिष्ठान, सर्वसाक्षी निरामय ब्रह्मतत्त्व मेरा ही स्वरूप है। मेरा एक भाग सच्चिदादन्द-प्रकृति है और दूसरा माया-प्रकृति है। एन्ही से मैं संसार की सृष्टि करती हूं।' इन सब प्रमाणों का यही सार मालूम होता है कि शक्ति भगवती संसार का आदि-कारण है। फिर चाहे वह ब्रह्मा की शक्ति हो और चाहै ब्रह्म-स्वरूपिणी।

इस विषय में कुछ विचारशीलों की यह भी सम्मति है कि ब्रह्म और शक्ति असल में एक ही वस्तु है। इनकी भिन्नता वास्तविक नहीं। योगवशिष्ठ के भाष्य में लिखा है, 'विकल्प-नाद् भिन्ना न तु वस्तुतः।' साथ ही शक्ति और ब्रह्मवाद के सामञ्जस्य के प्रतिदादक शास्त्रों की तो यह सम्मति है कि—

शक्तिर्महेश्वरी ब्रह्म त्रयस्तुल्यर्थवाचकाः ।
स्त्रीपुंनपुंसको भेदः शब्दतो ना परार्थतः ।।

अर्थात् शक्ति महेश्वर और ब्रह्म एक ही अर्थ के वाचक हैं। इन में जो लिङ्ग-भेद है वह शब्दात्मक है। वैसे परमार्थतः इनमें कोई भेद नहीं है।

———

आरती

आरती जग जननी तेरी गाऊं।
तुम बिन कौन सुने वर दाती।
किसको जाकर विनय सुनाऊं । आरती

असुरों ने देवों को सताया, तुम ने रूप धरा महां माया।
उसी रूप के दर्शन चाहूँ ।। आरती .

रक्त बीज मधु कैटब मारे, अपने भक्तों के काज संवारे।
मैं भी तेरा दास कहाऊं ।। आरती

आरती तेरी करूं वरदाती, हृदय का दीपक नैनों की बाती।
निसदिन प्रेम की जोत जगाऊं ।। आरती ..

ध्यानू भक्त तुम्हारा यश गाया जिस ध्याया माता फल पाया।
मैं भी दर तेरे सीस झुकाऊं ।। आरती...

आरती तेरी जो कोई गावे, 'दास' सभी सुख सम्पति पावे।
मैय्या चरण कमल रज चाहूं ।। आरती ..

———

लेखक की साहि[illegible]
-यक कृतियां —

1) देवी माहात्म्य (पुनः मुद्रणस्थ)
2) ड़ेन मार्क ,, ,,
3) आर्यों का उद्गम स्थान
4) वैष्णवी सिध्दपीठ

आगामी प्रकाशन

1) देव भूमि काश्मीर
2) पुरमण्डल उतर वाहिनी के तीर्थ
3) जम्मू का ऐतिहासिक विवेचन,
4) देवायन (द्योन) महाराजा गुलाब सिंह जी का जन्म स्थान
5) आर्य सभ्यता

पता:—
शास्त्री प्रकाशन,
कूचा वजीर सोभा राम हौ. नं० 38 पंच तीर्थी, जम्मू तवी (कश्मीर स्टेट) भारत,

जगदीश चन्द्र शास्त्री
सुपुत्र पं० सीता राम जी

जन्म स्थान पुरमण्डल (साम्बा तहसील जि० जम्मू । जन्म 1926 ई० शिक्षा:— शास्त्री, प्रभाकर, कोविद, सं० सा० रत्न, शिक्षा प्राप्ति के स्थान पुरमण्डल, जम्मू, लाहौर । साहित्यिक तथा सामाजिक कार्य केन्द्र व्यवस्थापक हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग (उ० प०) हिन्दी साहित्य मण्डल उप प्रधान भारतीय साहित्य परिषद्, गौरक्षा समिति, श्री सनातन धर्म सभा डोगरा ब्राह्मण प्रतिनिधि सभा जम्मू के भू० पू० महामन्त्री धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों के सक्रियकार्य कर्त्ता वर्तमान में श्री सनातन धर्म कन्या विद्यालय में सं० विभाग के अध्यक्ष ।